

दलाई लामा-बोट-भारती-ग्रन्थमालायाश्चतुर्थं पुण्यम्

The Dalai Lama Tibeto-Indological Studies Vol. IV

ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं नमो भगवते वासुदेवाय ।

## धम्मपद

( मूल धम्मपद के पालि, संस्कृत, तिब्बती, हिन्दी एवं अंग्रेजी रूपांतर )

## DHAMMAPADA

सम्पादक

धर्मचन्द्र रिगजित सामा



भोटनिवा-संस्थानम्

केन्द्रीय उच्च तिब्बती-विज्ञान-संस्थान, सारनाथ

मुद्रांक २५२६

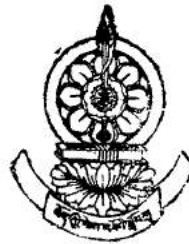
Central Institute of Higher Tibetan Studies  
Sarnath

1982

दलाई लामा मोट-भारती ग्रन्थमालायाश्चतुर्थं पुष्पम्  
The Dalai Lama Tibeto-Indological Studies Series Vol. IV

## धम्मपद

सम्पादक एवं भाषान्तरकार  
छिमेद रिगजिन लामा



मोटविद्या संस्थानम्

केन्द्रीय उच्च तिब्बती-शिक्षा-संस्थान. सारनाथ

बुद्धान्त २५२६

Central Institute of Higher Tibetan Studies  
Sarnath  
1982



दलाई लामा भोट-भारती ग्रन्थमालायाश्चतुर्थं पुष्पम्

The Dalai Lama Tibeto-Indological Studies Series Vol. iv

सामान्य सम्पादक : भिक्षु समदोङ् रिनपोछे

General Editor : Ven. Samdhong Rinpoche

First Edition ( 500 copies )

Price ( Rs. 75/- hard back,  
Rs. 55/- paper back )

Copy rights reserved 1982

Published by :

Central Institute of Higher Tibetan Studies  
Sarnath, Varanasi-221007 ( India )

Printers :

Bhojpuri Press

Jagatgunj, Varanasi-221002

## विषयानुक्रमणी

|             |   |     |
|-------------|---|-----|
| प्रकाशकीय   | भिक्षु समदोङ् रितपोछे   |     |
| भूमिका      | ( अंग्रेजी ) छिमेद रिगजिन लामा                                |     |
| मूलधम्मपद   | ( पालि, संस्कृत, तिब्बती, हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषान्तर सहित ) |     |
| १           | यमकवग्गो  | 1   |
| २           | अप्पमादवग्गो  | 21  |
| ३           | चित्तवग्गो  | 33  |
| ४           | पुप्फवग्गो  | 44  |
| ५           | बालवग्गो  | 60  |
| ६           | पण्डितवग्गो   | 76  |
| ७           | अरहन्तवग्गो   | 90  |
| ८           | सहस्सवग्गो  | 100 |
| ९           | पापवग्गो  | 116 |
| १०          | दण्डवग्गो   | 129 |
| ११          | जरावग्गो  | 146 |
| १२          | अत्तवग्गो   | 157 |
| १३          | लोकवग्गो  | 168 |
| १४          | बुद्धवग्गो  | 180 |
| १५          | सुखवग्गो  | 198 |
| १६          | पियवग्गो  | 210 |
| १७          | कोधवग्गो  | 222 |
| १८          | मलवग्गो   | 236 |
| १९          | धम्मट्ठवग्गो  | 256 |
| २०          | मग्गवग्गो   | 274 |
| २१          | पकिण्णकवग्गो  | 291 |
| २२          | निरयवग्गो   | 307 |
| २३          | नागवग्गो  | 321 |
| २४          | तण्हावग्गो  | 335 |
| २५          | भिक्षुवग्गो   | 361 |
| २६          | ब्राह्मणवग्गो   | 384 |
| शुद्धि-पत्र |   | 425 |
| गाथा-सूची   |   | 427 |

ཆེད་བརྗོད།

ཆོས་ཀྱི་ཚིགས་སུ་བཅད་པ་བཞིན་ནང་བའི་ཐོག་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱིས་མཐུན་  
མོང་དུ་ཆད་མར་བརྒྱང་བའི་གཞུང་ཞིག་ཡིན་པས་ཀྱན་གྱིས་ཐོས་བསམ་བྱ་  
ཡུལ་ཁྱད་འཕགས་ཤིག་ཡིན་པ་དང་། གཞུང་འདི་ཡིགས་སྤྱད་དང་། ཡུ་  
ཡིན་སྐད་དུ་བཞུགས་པ་མ་ཟད། བོད་དང་དབྱིན་ཅིན་སྐད་དུ་འདྲ་བ་  
རིགས་མི་འདྲ་བ་སྤྱོད་ཚིགས་ཤིག་གི་དབར་རྒྱན་མང་པོ་ཞིག་སྤྱད་།

བོད་སྐད་བསྐྱར་འགྱུར་དུ་བཞུགས་པའི་ཆེད་དུ་བརྗོད་པའི་ཚོམས་སུ་  
ཆོས་ཀྱི་ཚིགས་སུ་བཅད་པའི་ཤོ་ཡོག་པལ་ཆེར་ཆང་ཡང་གོ་རིམ་ཅུང་མི་འདྲ་  
བ་འདུག་ཅིང་། སྤྱད་ཡང་དུས་ཕྱིས་མཁས་དབང་དགེ་འདུན་ཆོས་འཕེལ་  
གྱིས་བ་ཡིན་ཆོས་ཀྱི་ཚིགས་སུ་བཅད་པ་ནས་ཐད་ཀར་བོད་སྐད་དུ་བསྐྱར་ཞིང་།  
ཐོན་འགྱུར་ཆོམས་ཀྱི་ཚིགས་བརྗོད་འགའ་ཤེས་སྐབས་བསྐྱར་འགྱུར་བཅོས་...  
མཛད་པ་འདྲ་ཅི་རིགས་ཤིག་འདུག

དེ་ལྟར་འགྲོ་དོན་དར་ཁྱབ་ཆེ་བའི་གཞུང་འདི་གོང་གསལ་སྐད་རིགས་  
ཆང་མར་སྡེབས་གཅིག་དུ་དོན་གཉིས་ཅན་ནམས་ལ་ཚིགས་མེད་ཐོབ་ཆེད་...  
མཁས་མཆོག་འཁོར་གདོང་གདོར་སྒྲུལ་འཆི་མེད་རིག་འཛིན་མཆོག་ནས་...  
ཕྱོགས་བསྒྲིགས་ཞུ་ཆེན་མཛད་དེ་ཁྱབས་ཆེན་བྱ་བ་ཞིག་གྲུབ་པར་མཛད་པ་...  
དེ་བཞིན། འདི་ག་སྒྲོབ་ཁང་ནས་དབར་བསྐྱར་ཞུ་རྒྱུ་ཁས་ལེན་ཡོང་བ་བྱུང་  
སྟེ་ག་སྒྲོན་ནས་ཞུས་ཅིང་། བར་སྐབས་བཞེགས་རྒྱུན་སྤྱོད་ཚིགས་ཀྱི་དབང་  
གིས་རིང་འགྲངས་མོང་བ་སྒྲོ་འཕམ་གྱི་གནས་སུ་གྱུར་མོད། ད་ཆ་དབར་  
འགྲོམས་ཐུབ་ཅམ་གྱིང་བ་བམོད་ནམས་ཀྱི་སྒྲུལ་བར་སྒྲོམས། དཔེ་དེབ་འདི་  
བཞིན་དོན་གཉིས་ཅན་གྱི་སྒྲོབ་གཉིས་པ་དང་ཉམས་ཞིབ་པ་ནམས་སུ་མ་ཟད།  
དད་འདུན་ཅན་ཡོངས་ལ་འདྲ་མཁོ་ཐོབ་ཆེན་པོ་ཡོང་བའི་དེ་འདུན་ཡོད།

ཐམ་གདོང་བ་དགེ་སྒྲོང་སྒྲོ་བཟང་བསྐྱར་འཛིན།



## प्रकाशकीय

धम्मपद सभी बौद्ध निकायों के लिए समान मान्यता प्राप्त एक मूलभूत एवं महत्वपूर्ण ग्रन्थ है जिसका निर्विवाद रूप से समस्त बौद्ध अनुयायी अध्ययन-अध्यापन करते हैं। यह ग्रन्थ पालि, संस्कृत मूल के अतिरिक्त भोट, हिन्दी एवं अंग्रेजी अनुवादों के अनेक संस्करणों में उपलब्ध है।

तिब्बती तङ्गुर में इसका प्राचीन अनुवाद 'उदान वर्ग' के नाम से मिलता है जिसमें धम्मपद की प्रायः सभी गाथायें संगृहीत हैं; यद्यपि उनके क्रम में किञ्चित् अन्तर अवश्य दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त महापण्डित श्री गेदुन छोफेज ने पालि मूल से इसका यथावत् भोट रूपान्तर भी कर दिया है, जिसमें उदान वर्ग के अन्तर्गत भाषान्तरित गाथाओं में आवश्यकतानुसार संशोधन हुआ है।

ऐसे महत्वपूर्ण एवं लोकप्रिय ग्रन्थ को इन सभी भाषाओं में सरलता से उपलब्ध कराने के उद्देश्य से प्रोफेसर छिमेद रिगजिन लामा जी ने इसे एकसाथ सम्पादित करके एक महत्वपूर्ण कार्य किया है। इसे संस्था के भोट-भारती ग्रन्थमाला के अन्तर्गत प्रकाशित करने का निर्णय लगभग दस वर्ष पूर्व हुआ था; परन्तु इस बीच अनेक तरह से व्यवधान पड़ता गया और इसके प्रकाशन में अत्यधिक विलम्ब हुआ जिसके लिए हमें हादिक कष्ट है।

श्री लामा जी के असाधारण श्रेय और उनके संयम की हम सराहना करते हैं, जो उन्होंने हमारी सीमाओं को सही ढंग से समझा और कुछ अन्यथा नहीं लिया।

मैं आशा करता हूँ कि वर्तमान रूप में इस ग्रन्थ के प्रकाशन से बौद्ध धर्म और दर्शन में आस्था रखने वाले अध्येताओं को इसके तुलनात्मक विवेचन में काफी सुगमता होगी। श्रद्धालुओं के लिए तो इसका प्रचार ही स्तुत्य है।

सारनाथ, वाराणसी

९ नवम्बर १९८२

भिक्षु समदोङ् रिन्पोछे

प्राचार्य

## प्रकाशकीय

धम्मपद सभी बौद्ध निकायों के लिए समान मान्यता प्राप्त एक मूलभूत एवं महत्वपूर्ण ग्रन्थ है जिसका निर्विवाद रूप से समस्त बौद्ध अनुयायी अध्ययन-अध्यापन करते हैं। यह ग्रन्थ पालि, संस्कृत मूल के अतिरिक्त भोट, हिन्दी एवं अंग्रेजी अनुवादों के अनेक संस्करणों में उपलब्ध है।

तिब्बती तड्युर में इसका प्राचीन अनुवाद 'उदान वर्ग' के नाम से मिलता है जिसमें धम्मपद की प्रायः सभी गाथायें संगृहीत हैं; यद्यपि उनके क्रम में किञ्चित् अन्तर अवश्य दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त महापण्डित श्री गेदुन छोफेज ने पालि मूल से इसका यथावत् भोट रूपान्तर भी कर दिया है, जिसमें उदान वर्ग के अन्तर्गत भाषान्तरित गाथाओं में आवश्यकतानुसार संशोधन हुआ है।

ऐसे महत्वपूर्ण एवं लोकप्रिय ग्रन्थ को इन सभी भाषाओं में सरलता से उपलब्ध कराने के उद्देश्य से प्रोफेसर छिमेद रिगजिन लामा जी ने इसे एकसाथ सम्पादित करके एक महत्वपूर्ण कार्य किया है। इसे संस्था के भोट-भारती ग्रन्थमाला के अन्तर्गत प्रकाशित करने का निर्णय लगभग दस वर्ष पूर्व हुआ था; परन्तु इस बीच अनेक तरह से व्यवधान पड़ता गया और इसके प्रकाशन में अत्यधिक विलम्ब हुआ जिसके लिए हमें हादिक कष्ट है।

श्री लामा जी के असाधारण धैर्य और उनके संयम की हम सराहना करते हैं, जो उन्होंने हमारी सीमाओं को सही ढंग से समझा और कुछ अन्यथा नहीं लिया।

मैं आशा करता हूँ कि वर्तमान रूप में इस ग्रन्थ के प्रकाशन से बौद्ध धर्म और दर्शन में आस्था रखने वाले अध्येताओं को इसके तुलनात्मक विवेचन में काफी सुगमता होगी। श्रद्धालुओं के लिए तो इसका प्रचार ही स्तुत्य है।

सारनाथ, वाराणसी

९ नवम्बर १९८२

भिक्षु समदोङ् रिनपोछे

प्राचार्य

## PREFACE

Today as throughout its long history, the Dhammapada is one of the most popular books of Buddhist moral teaching and example. There have been many translations of it into English and also several into modern Indian and European Languages. This new edition contains versions of the text in Pali, Sanskrit and Tibetan with Hindi and English translations. Where verses of the Sanskrit Udānavarga have been found to correspond with those of the Dhammapada, they have been printed alongside in Tibetan. By printing versions in several languages it is hoped that students of Pali, Sanskrit and Tibetan will be able to derive much benefit from the advantage of easy cross-references. The Dhammapada is not found in the Tibetan Canon ( bKa-gYur ), and apart from a few random verses it was unknown in Tibet until the recent translation by the Rev. dGe-dun Chos-'phel. Comments have been made on certain verses of his translation to make the meaning clearer.

The Pali Dhammapada containing 423 verses arranged in 26 chapters, is a part of the Khuddaka-nikāya of the Sutta-piṭaka of the Tripiṭaka of the Theravādin canon. There are 4 other works in the Dhammapada class of scriptures which have survived till the present day, the Gāndhārī Dharmapada, the Sarvāstivādin Udānavarga, the Mahāsāṅghika Dharmapada and the text ( perhaps texts ) which contributed to the unidentified chapters of the Chinese Fa-chu-ching.<sup>1</sup> According to Prof. J. Brough<sup>2</sup> who

---

1 The author would like to mention that in 1945 Rev. Gedun Chos 'phel stayed in his house at Tso Pema, H. P. for a week during which time they had many talks on the Dhammapada.

2 Much of the information of this paragraph is drawn from the Gāndhārī Dharmapada, Edited by Dr. John Brough, O. U. P. 1962. We gratefully acknowledge the assistance which his scholarly works provide for all those interested in the Dharmmapada.



has edited the Gāndhārī text from photographs of the birch bark manuscript in Kharosthī script—the Pali and Prakrit recensions and the Sanskrit Udānavarga probably have a *common nucleus* of about 330 to 340 verses”,<sup>3</sup> He goes on to say, ‘this is such a large fraction of the total Pali text that we may reasonably see in this common nucleus an indication that the three texts were built up in the separate schools by a process of rearranging and adding to a specific collection of verses inherited from an earlier period, and recognised as Dharmapadāni.’ These collections of verses certainly faithfully reflect the teaching of Śākyamuni Buddha and should be respected and studied by followers of all the different schools.

The English translation is a new one, though it incorporates many interpretations and insights from previous translations. Much use has been made of the very valuable guide to the Dharmapada in Hindi by Mahāpandit Rahul Sankrityayana. It is hoped that this new translation will help readers to penetrate into the deep significances of Bhagawan Buddha’s teachings and that the simple renderings given will encourage some real thinking on these important matters so vital to our future well-being.

The Dhammapada’s simplicity of expression and directness and force of meaning make clear many important points of Buddhist teaching. The inevitable consequential results of actions good or bad ( Karma ) are well illustrated, and the necessity of having a pure morality as a basis for wisdom is pointed out. Impermanence, death and the inescapable sorrows of worldly life are explained and the need for great diligence and vigilance are treated in many places. Due to the dualistic view resultant on engrasping an ego or self, all actions which are experienced as being performed by that self come to have karmic consequences. For an action to be fully karmically potent there must be four factors present, an intention, an object, an act, and a result

<sup>3</sup> Ibid, Intro. p. 24.

of the accomplishment of the intention, for example, desire to kill ( the intention ), a man ( the object ), the act of killing with a suitable instrument (the act), and the death of the man (result). Of these four, the intention, the orientation and decision, is the primary one in absence of which the other factors, though present, will have no karmic consequence.

The very first verse makes clear the position of paramount importance which is occupied by mind, but this is not readily understood by those who are fascinated by the wonders of material reality. Only by controlling the restless surface of the mind can its real nature be perceived, and only then is the actual nature of 'material reality' revealed. The Dhammapada is not a work of speculative thought but is the teaching of Buddha Śākyamuni who with his great wisdom penetrated into the ultimate truth of reality, and with great compassion taught the Dharma as a means to free all beings from the suffering consequent on ignorance of their own true natures. The Itivuttaka ( 40 ) says 'Whatever misfortunes there are here in this world or in the next, they all have their root in ignorance and are given rise to by craving and desire'. By cutting off ignorance and craving the mind is set free from all the objects, feelings, emotions and activities which formerly disturbed and deluded it, and then enjoys its natural state of perfect wisdom.

By developing faith in the teachings of Bhagawān Buddha as the true description of the nature of reality, confidence is gained permitting the familiar world of personal identity to be cast off, recognising clearly that it has its source in misunderstanding and sin. It is to be hoped that the false notion once prevalent in English speaking countries that nirvāṇa is an 'extinction' or 'blowing out' into a dead and empty nothingness has by now been cleared for good. Such a mistaken view rejects the Buddha's own teaching that his was the middle way free from the extremes of existence and non-existence, eternalism and nihilism. It also

makes impossible comprehension of and faith in the Buddha's great compassion and also severely limits the scope and quality of the individual's aspiration for perfection.

The Buddha is truly supreme with many great and wondrous qualities and his nature is not amenable to grading and classification by any system devised by those who are still bewildered in the darkness of ignorance. Buddha's wisdom penetrates the heart of reality and also clearly illuminates this world of ours so that he is never confused and always acts for the benefit of others. As the Dhammapada says in V. 180, 'In whom there is no entangling poisonous craving to lead to any involvement, that Buddha of limitless sphere of activity who is without fixed abode, by what path will you lead him astray?'

The Dharma does not belong to anyone. Whoever studies it, is diligent in its daily practice, will undoubtedly gain great benefit in this and future lives. The doctrine of Karma makes it clear that success or failure depends on one's own efforts. Each person has to decide for himself which way he wants his life to go and whether he is to be pure and happy or sinful and miserable. By understanding and wisdom one becomes freed from the constraints of Karma and then, like the Buddha, is able to work for the benefit of others without limitation.

The teaching contained in the Dhammapada is especially valuable in the present difficult times of the degenerate Kali yuga. Dealing directly with the great potential in all beings it (The Dhammapada) affirms the traditional moral values of honesty, purity, compassion, self-control and hard work. It clearly places inner qualities over mere outer shows, for only from purity can wholesome, beneficial activity arise. Dharma/Religion is not a thing of the past, for it leads us to the truth, . . . . but if it is not practiced, and if noble aspirations are sunk in a morass of self-indulgence, then all its teachings will be seen



as very far-fetched and impractical. Buddhism's approach is in fact very practical, asserting that if only there is the sincere attempt then great benefit will be attained for oneself and for others. By following the path of morality ( śīla ), mind control (samādhi) and wisdom ( prajñā ) all impurities and afflictions are abandoned and the great liberation from the endless suffering of saṃsāra is attained. This truth has been realised by countless saints in the past. May this edition of the Dhammapada inspire many to realise the same !

May all beings be happy !

Chhi Med Rig Dzin Lama

## ACKNOWLEDGEMENT

I would like to thank Prof. Dr. A. C. Bannerjee, Ex. Head of the Deptt. of Pali, Calcutta University, Prof. Dr. Biswanath Bannerjee, Head of the Deptt. of Sanskrit & Pali, Visva-Bharati, and Dr. S. N. Ghoshal, Reader in Sanskrit, Visva-Bharati for their help in Sanskrit and Pali, when the meaning was not clear to me. On occasions, when difficulties arose, I discussed the questions with them and gained much help and insight therefrom.

I would also acknowledge the help given by Mr. James Low in the correcting and writing out of the English translation.

Prof. S. Rinpoche, Principal, Central Institute of Higher Tibetan Studies, Sarnath, gave valuable advices and provided much information regarding the verses. He also gave much help of organisation and arranged for the publication of this book.

Thanks are also due to Tulku Thondup Rinpoche, Reader in Indo-Tibetan Studies, Visva-Bharati for his valuable help.

The author also wishes to acknowledget he help derived from the following books and thank their authors and publishers.

- 1 ) Dr. Sarvapalli Radhakrishnan : The Dhammapada Oxford, 1954.
- 2 ) Sri Narada Mahathera : The Dhammapada, Calcutta, 1970.
- 3 ) Mahapandit Rahul Sankrityayana : Dhammapada ( Hindi ), Lucknow, 1957.
- 4 ) Acharya Vinoba Bhave ( Editor ) and Srikrishna Dutta Bhatta (Translator) : The Dhammapada (Nava-Samhita), Varanasi, 1972.

## १—यमकवागो

मनोपुण्ड्रमा धम्मा, मनोसेट्ठा मनोमया ।

मनसा चे पटुट्ठेन, भासति वा करोति वा ।

ततो नं दुक्खमन्वेति, चक्कं व वहतो पदं ॥१॥

भावस्ती मनःपूर्वज्जमा धर्मा मनःश्रेष्ठा मनोमयाः । चक्रुपाल ( थेर )

मनसा चेत्प्रदुष्टेन भाषते वा करोति वा ।

तत एनं दुःखमन्वेति चक्रमिव वहतःपदम् ॥

མཉན་ཡོད་དུ་མིག་སྒྲིང་ལ།

ཆོས་རྣམས་ཡོད་ཀྱི་རང་བཞིན་དེ། ।

ཡོད་ནི་གཙོ་ཞིང་སྒྲོན་ལ་འགྲོ། ।

གལ་དེ་གདུག་པའི་ཡོད་ཀྱིས་ནི། ।

སྒྲུས་སམ་ཡང་ན་བྱས་ཀྱང་རུང་། ।

དེ་ལ་དེ་ཡིས་སྒྲུག་བསྐྱེད་འབྱོབ། ।

ཤིང་དྲ་ཇིས་སྒྲུ་འབྲང་བ་བཞིན། ।

सभी धर्मों (=कायिक, वाचिक, मानसिक कर्मों, या सुख-दुःख आदि अनुभवों) का मन अग्रगामी है, मन (उनका) प्रधान है, (कर्म) मनोमय हैं । जब (कोई) सदोष मन से (बात) बोलता है, या (काम) करता है, तो वाहन ( बैल, घोड़े ) के पैर का जैसे ( रथ का ) पहिया अनुगमन करता है ( वैसे ही ) उसका दुःख अनुगमन करता है ।

Mind is the forerunner of all things. Mind is chief and they are mind made. If with an impure mind, one speaks or acts, then misery follows just as the cart wheel, follows the ox-hoof.

ཆོས་ས། P 124 (XXXI, 24) ཆོས་ཀྱི་སྒྲོན་དུ་ཡོད་འགྲོ་ཞེ། । P1 VI

ཡོད་མགྲོགས་ཡོད་ནི་གཙོ་བོ་ཡིན། ।

གལ་དེ་ཡོད་རབ་གདུག་པ་ཡིས། ।

སྒྲུས་སམ་ཡང་ན་བྱས་ཀྱང་རུང་། ।

དེ་ཡིས་དེ་ནི་སྒྲུག་བསྐྱེད་འབྱོབ། ।

འཁོར་ཡོས་མགོ་བོ་བཅད་བ་བཞིན། ।

1 མཉན་ཡོད་ནི་ (ཤུ་བཞི) ཞེ་སྒྲོན་པས་ཆོ་འབྲུལ་བཟུན་ས་དང་ལོ་  
ནི་ཤུར་དབྱར་གནས་མཛད་པའི་གནས་སོ།



मनोपुब्बङ्गमा धम्मा, मनोसेट्ठा मनोमया ।  
मनसा चे पसन्नेन, भासति वा करोति वा ।  
ततो नं सुखमन्वेति, छाया व अनपायिनी ॥२॥

श्रावस्तीमनः पूर्वङ्गमा धर्मा मनःश्रेष्ठा मयोमयाः ।

मट्टकुण्डली

मनसा चेत् प्रसन्नेन भाषते वा करोति वा ।

तत एनं सुखमन्वेति छायेवानपायिनी ॥

ཆོས་ཀྱིས་ཡིད་ཀྱི་རང་བཞིན་དེ། ।

ཡིད་ནི་གཙོ་ཞིང་སློན་ལ་འགྲོ། ।

གཡ་དེ་ཡིད་ནི་རབ་དྲངས་བས། ।

སྐྱེས་སམ་ཡང་ན་བྱས་ཀྱང་རྒྱང་། ।

དེ་ལ་དེ་ཡིས་བདེ་བ་འབྱོབ། ।

གྲིབ་མ་ཡོལ་བར་སེའགྱུར་བཞིན། ।

सभी धर्मों का मन अग्रगामी है, मन प्रधान है; ( कर्म ) मनोमय है । यदि ( कोई ) स्वच्छ मन से बोलता या करता है, तो ( कभी ) न ( साथ ) छोड़नेवाली छाया की तरह सुख उसका अनुगमन करता है ।

Mind is the forerunner of all things ( "things" here has many significances. Here it means, thing, condition, state ). Mind is chief and they are mind made. If with a pure mind, one speaks or acts, then happiness follows, even as the shadow that never leaves.

1. thing,

sense of

( ॐ ) P 124 (XXXI, 25) ཆོས་ཀྱི་སློན་དུ་ཡིད་འགྲོ་སྟེ། । P2 V2

ཡིད་མགྲོགས་ཡིད་ནི་གཙོ་བོ་ཡིན། ।

གཡ་དེ་ཡིད་རབ་དྲངས་བ་ཡིས། ।

སྐྱེས་སམ་ཡང་ན་བྱས་ཀྱང་རྒྱང་། ।

དེ་ཡིས་དེ་ནི་བདེ་བ་ཐོབ། ।

གྲིབ་མ་རྗེས་སུ་འབྲང་བ་བཞིན། ।

གོང་གསལ་གྱི་ཆོགས་བཅད་གསུངས་སའི་གནས་གང་དུ་གསུངས་  
བ་དང་གང་ཟག་སུའི་དོན་དུ་གསུངས་བ་བཅས་དངོས་པོ་གཉིས་སུ་གསལ་  
བར། འདི་མན་འདི་གཉིས་འབྲེལ་སྐབས་ཙང་དང་གཉིས་ཀྱི་མཚན་ནས་  
ཤེས་བར་བྱའོ།

अवकोच्छि मं अवधि मं, अजिनि मं अहासि मे ।

ये च तं उपनहन्ति, वेरं तेषां न सम्मति ॥३॥

आवस्ती ( जेतवन )

थुल्लतिस्स ( थेर )

अक्रोशीत् मां अवधोत् मां अजैषीत् मां अहार्षीत् मे ।

ये च तत् उपनहन्ति वैरं तेषां न शाम्यति ॥

ཀུལ་བྱེད་ཚལ་དུ་སྒྲར་ཀུལ་ལའོ།

ང་ལ་སྒྲད་ཅིང་ང་ལ་གནོད། ।

ང་ལས་འཕྲོག་ཅིང་ང་ལས་ཞེས། ।

གང་གིས་དེ་དག་སེམས་བྱེད་པ། ।

དེ་ནས་ས་ཁོ་བ་ཞི་མི་འགྱུར། ।

‘मुझे गाली दिया’, ‘मुझे मारा’, ‘मुझे हरा दिया’, मुझे लूट लिया’ ( ऐसा )  
जो ( मन में ) बाँधते हैं, उनका वैर कभी शान्त नहीं होता ।

“He abused me”, “He beat me.”, “He defeated me.”, “He robbed me.”,—the hatred of those who cherish such thoughts is not appeased.

( ॐ ) P47 ( XIV, 9 ) བདག་ལ་ཁ་ཟེར་བདག་ལ་གཤེ། । P2 V3

བདག་སམ་བདག་སམ་བྱེད་བའོ་ཞེས། ।

འདྲི་གང་སེམས་ལ་འཕྲོག་བྱེད་པ། ।

དེ་ཡི་ཁོན་ནི་ཞི་མི་འགྱུར། ।

ཀུལ་བྱེད་ཚལ་མེ་ ( རྟོག་བཞུག ) མི་ཁྱིམ་བདག་མགོན་མེད་ཟས་སྒྲིན་  
གྱིས་ཀུལ་བྱ་གཞིན་ཏུ་ཀུལ་བྱེད་ལས་ས་ཁྱེད་ས་བའི་གསེར་གྱི་རིན་འབྲུལ་...  
དེ་སངས་ཀུས་ལ་སྤུལ་བའི་ཀུལ་བྱེད་ཚལ་མགོན་མེད་ཟས་སྒྲིན་གྱི་ཀུན་...  
དགའ་རྩ་བ་ཞེས་བྱ་བ་དང་། མྱོན་པས་ལོ་ནི་ཤར་དབྱར་མཛོད་བའི་གནས་  
ཀྱང་འདྲེའོ།

अवकोच्छि मं अवधि मं, अजिनि मं अहासि मे ।

ये च तं नुपनहन्ति, वैरं तेषूपसम्मति ॥४॥

अक्रोशीत् मां अवधीत् मां अजैषीत् अहर्षीत् मे ।

ये तत् नोपनहन्ति वैरं तेषूपशाम्यति ॥

ང་ལ་སྒྲུང་ཅིང་ང་ལ་གནོད། ।

ང་ལས་འཕྲོག་ཅིང་ང་ལས་ཞེས། ।

གང་གིས་དེ་དག་མི་སེམས་བ། ।

དེ་ཕྱིས་ཁོ་བ་ཞི་བར་འགྱུར། ।

‘मुझे गाली दिया’, ‘मुझे मारा’, ‘मुझे हरा दिया’, ‘मुझे लूट लिया (ऐसा )  
जो ( मन में ) नहीं रखते उनका वैर शान्त हो जाता है ।

“He abused me.”, “He beat me.”, “He defeated me.” “He  
robbed me.”,—the hatred of those who do not cherish such  
thoughts is appeased.

(ॐ) P 47 (XIV, 10) བདག་ལ་ཁ་ཐེར་བདག་ལ་གཤེ། । P3 V4

བདག་ལས་བདག་ལས་ཕྱེད་བའོ་ཞེས། ।

འདི་གང་སེམས་ལ་མི་འཛིན་བ། ।

དེ་ཡི་ཁོན་ནི་ཞི་བར་འགྱུར། ।

न हि वेरेण वेरानि, सम्मन्तीघ कुदाचनं ।  
अवेरेण च सम्मन्ति, एस धम्मो सनन्ततो ॥५॥

आवस्ती ( जेतवन )

काली ( यम्बिनी )

न हि वैरेण वैराणि शाम्यन्तीह कदाचन ।  
अवैरेण च शाम्यन्ति एष धर्मः सनातनः ॥

मुसुं देवः कसं दुःखं भवति ।

अदिं कः कसं अदं विवः अदिना ।

दुसुं कसं विवः अदिना ।

विवः अदिना विवः अदिना ।

अदिं कः कसं अदं विवः अदिना ।

यहाँ ( संसार में ) वैर से वैर कभी शान्त नहीं होता, अवैर से ही शान्त होता है, यही सनातन धर्म (=नियम) है ।

Hatreds never cease by hatred in this world. By love alone do they cease ( i. e. they are pacified by the absence of a hateful response ). This is an ancient law [ an ancient principle ( puranako Dhammo ), followed by the Buddhas and disciples ].

(क) P 47 (XIV, 11) अदिं कः कसं अदं विवः अदिना । P3 V5

कसं अदं विवः अदिना ।

अदिना विवः अदिना ।

अदिं कः कसं अदं विवः अदिना ।

परं च न विजानन्ति, मयमेतत् यमामसे ।

ये च तत्तत् विजानन्ति, ततो सम्मन्ति मेधगा ॥६॥

जैतवन

कोसम्बक मिश्र

परं च न विजानन्ति वयमत्र यस्यामः ।

ये च तत्र विजानन्ति ततः शाम्यन्ति मेधगाः ॥

एतन्मया न विज्ञेयं न विज्ञेयं ।

एतन्मया न विज्ञेयं न विज्ञेयं ।

एतन्मया न विज्ञेयं न विज्ञेयं ।

एतन्मया न विज्ञेयं न विज्ञेयं ।

अन्य (अज्ञ लोग) नहीं जानते कि हम इस (संसार) से जानेवाले हैं ।  
जो लोग इसे जानते हैं, फिर (उनके) मन के (सभी विकार) शान्त हो जाते हैं ॥

Some people do not know that we are all guests in this world ( i. e. there is nothing that is really 'ours' to get angry about ). Those who realise this have their quarrels calmed thereby.

सुभानुपस्सि विहरन्तं, इन्द्रियेषु असंवृतं ।  
 भोजनमिह चामत्तञ्जं, कुसीतं हीनवीरियं ।  
 तं वे पसहति मारो, वातो रुक्खं व दुब्बलं ॥७॥

आवस्ती

चुल्लकाल, महाकाल

शुभमनुपश्यन्तं विहरन्तं इन्द्रियेषु असंवृतम् ।  
 भोजने चामात्राज्जं कुसीदं हीनवीर्यम् ।  
 तं वै प्रसहते मारो वातो वृक्षमिव दुर्बलम् ॥

མཉམ་པོར་དུ་མག་པོ་ཆེ་མུང་གཉིས་ལོ།

ཐུག་པ་རྗེས་སུ་བཟུ་བ་ལ་གནས་ཤིང་། ।

དབང་པོ་མ་བསྐྱམས་ཟས་ཀྱི་ཆོད་མི་རིག།

ལེ་ལོ་ལྷན་ཅིང་བཅོན་འགྲུས་དམན་པ་དེ། ।

སྟོབས་མེད་ཤིང་ལ་མུང་བཞིན་བདུད་ཀྱིས་བཟླ། ।

( जो ) शुभ ही शुभ देखते विहरता है, इन्द्रियों में संयम न करनेवाला होता है, भोजन में मात्रा को नहीं जानता, आलसी और उद्योगहीन होता है; उसे मार (= मन की दुष्प्रवृत्तियाँ) (वैसे ही) पीड़ित करता है, जैसे दुर्बल वृक्ष को हवा ।

The man who lives contemplating pleasure with senses unrestrained, immoderate in eating, lazy and inert, is overpowered by Mara like a weak tree in the wind.

P10(XXIX, 15) གང་ཞིག་དབང་པོ་མ་བསྐྱམས་ཤིང་། । P4

ཟས་ཀྱི་ཆོད་མི་སྟོས་ལ། ।

དན་པ་ཉམས་དང་ལེ་ལོ་ཅན། ।

གཅིང་མ་ཟུ་ཞིང་གནས་བྱེད་པ། ।

དེ་ནི་འདྲོད་ཆགས་ཉམས་ཀྱིས་བཅོམ། ।

མུང་གིས་མི་བདུན་སྟོན་ཤིང་བཞིན། ।



असुमानुपस्सिं विहरन्तं, इन्द्रियेषु सुसंवृतं ।  
 भोजनमिह च मत्तञ्जुं, सद्धं आरब्धवीरियं ।  
 तं वे नप्पसहति मारो, वातो सेलं व पब्बतं ॥८॥

अशुभमनुपश्यन्तं विहरन्तं इन्द्रियेषु सुसंवृतम् ।  
 भोजने च मात्राज्ञं श्रद्धं आरब्धवीर्यम् ।  
 तं वै न प्रसहते मारो वातः शैलमिव पर्वतम् ॥

མི་སྤྱལ་འཇིག་སྤྱོད་ལྟོ་བ་ལ་གནས་ཤིང་། །  
 དབང་པོ་ལེགས་བསྐྱེད་ཟུག་གི་ཚད་རིག་པ། །  
 དད་པ་ལྷན་ཞིང་བཅོམ་འགྲུས་ཚུལ་བ་དེ། །  
 བདུད་གྱིས་མི་ཚུགས་རྒྱུང་གིས་བྱལ་རི་བཞིན། །

जो अशुभ देखते विहरता है, इन्द्रियों का संयम करता है, भोजन में मात्रा को जानता है, श्रद्धावान् तथा उद्योगी है, उसे शिलामय पर्वत को जैसे वायु नहीं हिला सकता, ( वैसे ही ) मार नहीं ( हिला सकता ) ।

The man who lives meditating on the "impurities" ( such as the "Thirty-two Parts of the Body" ) with senses restrained, moderate in his food, confident and energetic, cannot be overthrown by Mara, like a rocky mountain in the wind.

( ३ ) P106 (XXIX, 16) གང་ཞིག་དབང་པོ་ལེགས་བསྐྱེད་ཟུག་གི་ཚད་རིག་པ། ། P5 V8

ཟུག་གི་ཚད་རི་ཤེས་པ་དང་། །  
 མོ་མོར་བྲན་ཞིང་བཅོམ་འགྲུས་ལྷན། །  
 མི་གཙང་ལྟོ་བས་གནས་བྱེད་པ། །  
 དེ་ནི་འདོད་ཆགས་གྱིས་མི་བཅོམ། །  
 རྒྱུང་གིས་རི་བོ་མིག་ཡོ་བཞིན། །

अनिक्कसावो कासावं, यो वत्थं परिदहिस्सति ।  
अपेतो दमसच्चेन, न सो कासावमरहति ॥६॥

आवस्ती ( जेतवन )

देवदत्त

अनिक्कषायः काषायं यो वस्त्रं परिधास्यति ।  
अपेतो दमसत्याभ्यां न स काषायमर्हति ॥

अङ्क'अङ्क'दु'ङ्क'सु'अङ्क'।

गद'लैग'दवग'व'स'वस'व'व'। ।

गो'स'गु'स'अ'स'सु'द'गु'स'गु'र'गु'र'। ।

व'दे'द'द'दु'व'व'स'स'व'। ।

दे'व'दु'र'सु'ग'द'स'स'अ'। ।

जो ( पुरुष ) ( राग, द्वेष आदि ) कषायों (=मलों) को बिना छोड़े  
काषाय वस्त्रों को धारण करेगा, वह संयम एवं सत्य से परे हटा हुआ ( है ) और  
( वह ) काषाय ( वस्त्र ) का अधिकारी नहीं है ।

He who dons the yellow robe (of a Buddhist monk) without  
being cleansed of impurities and lacking self-control and truth  
is not worthy of it.

(क) P105 (XXIX, 7) गद'लैग'सु'ग'स'अ'द'व'दे'द'। P5 V9

दु'र'सु'ग'गो'स'स'अ'गु'र'गु'र'। ।

दु'व'द'द'दे'स'व'स'व'द'। ।

दु'र'सु'ग'गु'र'व'दे'द'स'स'अ'। ।

यो च वन्तकसावस्स, सीलेसु सुसमाहितो ।  
उपेतो दमसच्चेन, स वे कासावमरहति ॥१०॥

यश्च वान्तकषायः स्यात् शीलेषु सुसमाहितः ।  
उपेतो दम-सत्याभ्यां स वै काषायमहति ॥

གང་ཞིག་འབག་པ་བསལ་གྱུར་ཅིང་།                    ।  
ཚལ་ཁྲིམས་དག་ལ་གཅེས་བར་འཛོལ།                    ।  
བདེན་དང་དུལ་བ་ལྷན་གྱུར་པ།                         ।  
དེ་ཉིད་ལ་ནི་རུར་སྒྲིག་འོས།                         ।

जिसने काषायों का वमन कर दिया है, जो आचार (=शील) से सुसम्पन्न  
तथा संयम-सत्य से संयुक्त है, वही काषाय ( वस्त्र ) का अधिकारी है ।

He indeed is worthy of the yellow robe who has cleansed  
out all impurities, and who is well established in morality and  
endowed with self-control and truth.

(ऊ) P105 (XXIX. 8) གང་ཞིག་སྒྲིགས་མ་ཉམས་སྤངས་ནས།                    । P6 V10

ཚལ་ཁྲིམས་ལེགས་བར་མཉམ་བཞག་པ།                    ।

དུལ་དང་དེས་བ་ལྷན་བ་དེ།                                 ।

རུར་སྒྲིག་ལྟོན་བའི་འོས་ཡིན་ནོ།                         ।



सारं च सारतो ज्ञत्वा, असारं च असारतो ।  
ते सारं अधिगच्छन्ति, सम्भासङ्कल्पगोचरा ॥१२॥

सारं च सारतो ज्ञात्वा, असारं च असारतः ।  
ते सारं अधिगच्छन्ति सम्यक्-सङ्कल्प-गोचराः ॥

श्रीरं.पे.ठ.प.श्रीरं.पे.द. ।  
श्रीरं.पे.श्रीरं.पे.पे.प.प.प.प.प. ।  
प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प. ।  
प.प.प.प.श्रीरं.पे.प.प.प.प.प.प.प.प. ।

जो सार को सार जानते हैं, असार को असार, वह सच्चे सङ्कल्प में संलग्न  
( पुरुष ) सार को प्राप्त करते हैं ।

By seeing the real as real and the unreal as unreal, those  
who abide in the realm of true thoughts arrive at the real.

( ॐ ) P104 (XXIX, 4) शरीरं.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प. । P8 V12

शरीरं.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प. ।

प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प. ।

प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प.प. ।

यथा अगारं दुच्छन्नं, वृष्टी समतिविज्झति ।

एवं अभावितं चित्तं, रागो समतिविज्झति ॥१३॥

आवस्ती ( जेतवन )

नन्द ( धेर )

यथागारं दुच्छन्नं वृष्टिः समतिविध्यति ।

एवं अभावितं चित्तं रागः समतिविध्यति ॥

དཔེར་ན་ཉེས་པར་གཤོགས་པའི་ཁྱིམ། ।

ཆར་བས་ཀུན་དུ་བརྐྱང་བར་བྱེད། ।

ད་བཞིན་བསྐྱེས་པ་མེད་པའི་སེམས། ।

འདྲོད་ཆགས་ཀྱིས་ནི་འབེགས་པར་བྱེད། ।

जैसे ठीक से न छाये घर में वृष्टि घुस जाती है । वैसे ही अभावित (= न संयम किये ) चित्त में राग घुस जाता है ।

Just as rain penetrates a badly thatched house, so desire penetrates a mind which does not meditate.

(क) P122 (XXXI, 12) ཇི་ལྟར་ཁང་མེད་གཤོག་ཉེས་ན། । P8 V13

ཆར་བ་ཡོངས་སུ་འཛིན་པ་ལྟར། ।

དེ་བཞིན་སེམས་ནི་མ་བསྐྱེས་པ། ।

འདྲོད་ཆགས་ཀྱིས་ཡོངས་སུ་བཅོམ། ।



यथा अगारं सुच्छन्नं, वुट्ठी न समतिविज्जति ।  
 एवं सुभावितं चित्तं, रागो न समतिविज्जति ॥१४॥

प्रथागारं सुच्छन्नं वृष्टिर्न समतिविध्यति ।  
 एवं सुभावितं चित्तं रागो न समतिविध्यति ॥

इति० क० अगारं सुच्छन्नं वृष्टिर्न समतिविध्यति ।  
 इति० वस० गुणं नु वृष्टिर्न समतिविध्यति ।  
 इति० वृष्टिर्न अगारं सुच्छन्नं वृष्टिर्न समतिविध्यति ।  
 इति० वृष्टिर्न अगारं सुच्छन्नं वृष्टिर्न समतिविध्यति ।

जैसे ठीक से छाये घर में वृष्टि नहीं घुसती, वैसे ही सुभावित चित्त में राग  
 नहीं घुसता ।

Just as rain does not penetrate a well-thatched house, so  
 desire does not penetrate a mind which meditates well.

(क) P123 (XXXI) इति० क० अगारं सुच्छन्नं वृष्टिर्न समतिविध्यति । P9 V14  
 इति० वस० गुणं नु वृष्टिर्न समतिविध्यति ।  
 इति० वृष्टिर्न अगारं सुच्छन्नं वृष्टिर्न समतिविध्यति ।  
 इति० वृष्टिर्न अगारं सुच्छन्नं वृष्टिर्न समतिविध्यति ।

इध सोचति पेच्च सोचति, पापकारी उभयत्य सोचति ।

सो सोचति सो विहञ्जति, दिस्वा कम्मकिलिट्ठमत्तनो ॥१५॥

राजगृह ( वेणुवन )

चुन्द ( सूकारिक )

इह शोचति प्रेत्य शोचति पापकारी उभयत्र शोचति ।

स शोचति स विहन्यते दृष्ट्वा कर्म क्लिष्टमात्मनः ॥

देवः सः कः नु वसुधः पुनः सः

कः देवः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः ।

सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः ।

सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः ।

देवः सुन्दरः देवः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः ।

यहाँ ( इस लोक में ) शोक करता है, मरने के बाद शोक करता है, पाप करने वाला दोनों ( लोकों ) में शोक करता है । वह अपने मलिन कर्मों को देखकर शोक पीड़ित होता है ।

The evil-doer grieves here in this world and he grieves after death. He grieves in both realms. He grieves and suffers on seeing the acts which arise from his own troublesome passions ( desire, hatred and stupidity ).

P102 (XXVIII, 30)

P9 V15

( ३ ) सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः ।

सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः ।

सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः ।

देवः सुन्दरः देवः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः ।

1 सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः ( सुन्दरः सुन्दरः ) सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः ।  
सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः सुन्दरः ।

इध मोदति पेञ्च मोदति, कतपुञ्जो उभयत्थ मोदति ।  
सो मोदति सो पमोदति, दिस्वा कम्मविसुद्धिमत्तनो ॥१६॥

आवस्ती ( जेतवन )

घासिक ( उपासक )

इह मोदते प्रेत्य मोदते कृतपुण्य उभयत्र मोदते ।  
स मोदते स प्रमोदते दृष्ट्वा कर्मविशुद्धिमात्मनः ॥

མེ་འཁོར་ལྷོ་ཞིང་ལྷོ་མར་ལྷོ་པར་འབྱུང་།  
 རལེ་བ་བྱེད་བ་གཉིས་ཀར་ལྷོ་པར་འབྱུང་།  
 རང་ཉིད་ཉམ་པར་དག་པའི་པས་མཐོང་ནས།  
 དེ་ནི་དགའ་ཞིང་དེ་ནི་ལྷོ་པར་འབྱུང་།

यहाँ प्रमुदित होता है, मरने के बाद प्रमुदित होता है, जिसने पुण्य किया है, वह दोनों ही जगह प्रमुदित होता है। वह अपने कर्मों की शुद्धता को देखकर प्रमुदित होता है, प्रमुदित होता है।

The righteous man rejoices in this world and he rejoices after death. He rejoices in both realms. He is happy and joyful on seeing the acts which arise from his own purity.

P102, XXVIII, 31 )

P10 V16

(5) བདག་ཅིང་ཉམས་དག་ལས་དང་ཐོན་པ་ཤོད་ཅིང་།  
འདིར་ནི་དགའ་འགྱུར་གཞན་དུ་འདྲ་དགའ་བར་འགྱུར།  
བསོད་ཉམས་ལུས་ལས་གཉི་ལར་དགའ་འགྱུར་གྱིང་།  
དེ་ནི་དགའ་འགྱུར་གེ་རམ་དགའ་བར་འགྱུར།

इध तप्पति पेच्च तप्पति, पापकारी उभयत्थ तप्पति ।

पापं मे कतं ति तप्पति, भिद्यो तप्पति दुग्गतिं गतो ॥१७॥

आवस्ती ( जेतवन )

देवदत्त

इह तप्पते प्रेत्य तप्पते पापकारी उभयत्र तप्पते ।

पापं मे कृतमिति तप्पते, भूयस्तप्पते दुर्गतिं गतः ॥

झुसं घुक्कं अरं ।

कं अरं सन्नामं भूयं सन्नामं वरं अरं । ।

झुयं सन्नामं सन्नामं सन्नामं वरं अरं । ।

वरं सन्नामं सन्नामं सन्नामं वरं अरं । ।

वरं सन्नामं सन्नामं सन्नामं वरं अरं । ।

यहाँ संतप्त होता है, मरकर सन्तप्त होता है, पापकारी दोनों जगह सन्तप्त होता है । “मैंने पाप किया है” — यह ( सोच ) सन्तप्त होता है । दुर्गति को प्राप्त हो और भी सन्तप्त होता है ।

The evil-doer laments in this world and he laments after death. He laments in both worlds. Crying, “Evil have I done !”, he laments. He laments still more on having gone to the states of woe.

P 102 ( XXVIII, 35 )

P 10 V 17

(क) वरं सन्नामं सन्नामं सन्नामं वरं अरं । ।

वरं सन्नामं सन्नामं सन्नामं वरं अरं । ।

वरं सन्नामं सन्नामं सन्नामं वरं अरं । ।

वरं सन्नामं सन्नामं सन्नामं वरं अरं । ।

इध नन्दति पेच्च नन्दति, कतपुञ्जो उभयत्थ नन्दति ।

पुञ्जं मे कतं ति नन्दति, भिण्यो नन्दति सुगतिं गतो ॥१८॥

इह नन्दति प्रेत्य नन्दति कृतपुण्य उभयत्र नन्दति ।

पुण्य मे कृतमिति नन्दति, भूयो नन्दति सुगतिं गतः ॥

ཆོ་རྟེན་དགའ་ཞིང་ཕྱི་མར་དགའ་བར་འགྱུར། ।

དགེ་བ་བྱེད་པ་གཉིས་ཀར་དགའ་བར་འགྱུར། ।

བདག་གིས་དགེ་བ་བྱས་ཞིས་དགའ་བར་འགྱུར། ।

བདེ་འགྲོར་སྤང་ནས་ལྷག་པར་དགའ་བར་འགྱུར། ।

यहाँ आनन्दित होता है, मर कर आनन्दित होता है । जिसने पुण्य किया है, वह दोनों जगह आनन्दित होता है । “मैंने पुण्य किया है”—यह ( सोच ) आनन्दित होता है, सुगति को प्राप्त हो और भी आनन्दित होता है ।

The righteous man is happy in this world and he is happy after death. He is happy in both worlds. He is happy thinking. “I have practiced virtue.” He is happier still on having gone to the states of bliss.

P 103 ( XXVIII, 35 )

P 11 V 18

(क) བདག་གིས་བསྟོན་ནས་སྤྱས་པས་དགའ་འགྱུར་ཞིང་། ।

རིང་བྱས་སྐྱུང་རིང་བྱས་པས་དགའ་བར་འགྱུར། ।

བདག་གིས་དཔེན་པར་བྱས་པས་དགའ་བར་འགྱུར། ।

དེ་ཡི་ནས་སྤྲོད་ཡོད་པས་དགའ་བར་འགྱུར། ।

बहुं पि चे संहितं भासमानो, न तत्करो होति नरो प्रमत्तो ।

गोपो व गावो गणयं परेषां, न भागवा सामञ्जस्य होति ॥१६॥

श्रावस्ती ( जेतवन )

दो मित्र मिथु

बह्वीमपि संहितां भाषमाणः, न तत्करो भवति नरः प्रमत्तः ।

गोप इव गा गणयन् परेषां, न भागवान् श्रामण्यस्य भवति ॥

ཡང་དག་བསྐྱེས་པ་མང་པོ་འདོན་ཅེས་ཀྱང་། །

དེ་དག་ལས་སྤྱི་མི་ཅེས་བག་མེད་མི། །

གཞན་གྱི་བ་ཡང་ཕྱགས་རྩིས་བསྐྱེས་པ་བཞིན། །

དག་སྤང་དག་གི་གྲངས་སྤྱི་མི་འགྱུར་རོ། །

चाहे कितनी ही संहिताओं (=वेदों) का उच्चारण करे, किन्तु प्रमादी  
ब्रन ( जो ) नर उसके ( अनुसार ) ( आचरण ) करने वाला नहीं होता; ( वह )  
दूसरे की गायों को गिनने वाले बाले की भाँति श्रामण्य (=संन्यासीपन) का  
भागी नहीं होता ।

Although a man recites many Sacred Texts, if carelessly  
he does not apply them, then he will get no share in the life of  
the righteous ones, like a cowherd counting the cows of others.

P 18 ( IV, 20 )

P 11 V 19

(क) གཡ་དེ་རིགས་བཅས་མང་དུ་སྐྱེས་ཀྱང་ནི། །

བག་མེད་མི་དག་དེ་ལྟར་ཅེས་མི་འགྱུར། །

དཔེར་ན་ཕྱགས་རྩིས་གཞན་གྱི་ཕྱགས་བསྐྱེས་ལྟར། །

དེ་དག་དག་སྤང་སྐྱེས་པ་ཐོབ་པ་ཡིན། །



अप्यं पि चे संहितं भासमानो, धम्मस्स होति अनुधम्मचारी ।

रागं च दोसं च पहाय मोहं, सम्मप्यजानो सुविमुत्तचित्तो ।

अनुपादियानो इध वा हुरं वा, स भागवा सामञ्जस्स होति ॥२०॥

अल्पमपि संहितां भाषमाणो, धर्मस्य भवत्यनुधर्मचारी ।

रागं च द्वेषं च प्रहाय मोहं, सम्यक् प्रजानन् सुविमुक्तचित्तः ।

अनुपादान इह वाऽमुत्र वा, स भागवान् श्रामण्यस्य भवति ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

चाहे अल्पमात्र ही संहिता का भाषण करे, किन्तु यदि वह धर्म के अनुसार आचरण करने वाला हो, राग, द्वेष और मोह को त्याग कर, अच्छी प्रकार सचेत और अच्छी प्रकार मुक्तचित्त हो, यहाँ और वहाँ ( दोनों जगह ) बटोरने वाला न हो, ( तो ) वह श्रामण्य का भागी होता है ।

Though little a man recites the Sacred Texts, if he acts in accordance with the Teaching, and forsaking lust, hatred, and ignorance, is truly knowing, with mind totally freed and clinging to nought either here or hereafter, then he gets the share of the practicers of virtue.

P 18 ( IV 21 )

P 12 V 20

( ॐ ) नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

२-अष्टमाद्वगो

अप्पमादो अमतपदं, पमादो मच्चुनो पदं ।

अपमत्ता न मीयन्ति, ये पमत्ता यथा मता ॥१॥

कौशाम्बी ( घोषिताराम )<sup>१</sup>

सामावती ( रानी )

अप्रमादोऽमृतपदं प्रमादो मृतयोः पदम् ।

अप्रमत्ता न म्रियन्ते ये प्रमत्ता यथा मृताः ॥

ཐག་ཡོད་པུར་ཅི་ཡི་གོ་ལས་ཏེ།

ཐག་མེད་པ་ནི་འཆི་བའི་གནས།

ཐག་ཡོད་འཆི་བར་མི་འགྱུར་དེ།

ཐག་མེད་པ་ནི་འཆི་དང་འདྲ།

प्रमाद ( आलस्य ) न करना अमृतपद है और प्रमाद ( करना ) मृत्युपद ।  
अप्रमादी ( कभी ) नहीं मरते, प्रमादी तो मरे हुए की तरह ही हैं ।

Heedfulness is the Undying Stage, (the end of all the troubles that entice one into samsara.) while heedlessness is the domain of death. Heedfulness does not die while heedlessness is like death itself.

P 14 ( IV, 1 )

P 13 V 21 No 1

(ཅ) བག་ཡོད་འཆི་མེད་གནས་ཡིན་དེ།

བག་མེད་པ་ནི་འཆི་བའི་གནས།

བཀ་ཡོད་འཆི་བར་མི་ཞུས་དེ།

ཐག་མེད་པ་ནི་རྟག་ཏུ་འཛི།

[illegible]

एवं विसेसतो अत्वा, अप्पमादम्हि पण्डिता ।  
अप्पमादे प्रमोदन्ति, अरियानं गोचरे रता ॥२॥

एवं विशेषतो ज्ञात्वाऽप्रमादे पण्डिताः ।  
अप्रमादे प्रमोदन्ते आर्याणां गोचरे रताः ॥

दे० ह० स० स० व० व० य० ३१ ।  
३२ ० ३३ ० ३४ ० ३५ ० ३६ ० ३७ ० ३८ ० ।  
३९ ० ४० ० ४१ ० ४२ ० ४३ ० ४४ ० ४५ ० ।  
४६ ० ४७ ० ४८ ० ४९ ० ५० ० ५१ ० ५२ ० ।

पण्डित लोग अप्रमाद के विषय में इस प्रकार विशेषतः जान, आर्यों के  
आचरण में रत हो, अप्रमाद में प्रमुदित होते हैं ।

The wise and heedful who have clearly understood this,  
rejoice in heedfulness, and take delight in the practice of the  
Noble ( Aryas ).

P 13 ( IV, 2 )

P 13 V 27 N0 2

( ३ ) दे० य० ३२ ० ३३ ० ३४ ० ३५ ० ।  
३६ ० ३७ ० ३८ ० ३९ ० ४० ० ४१ ० ४२ ० ।  
४३ ० ४४ ० ४५ ० ४६ ० ४७ ० ४८ ० ४९ ० ।  
५० ० ५१ ० ५२ ० ५३ ० ५४ ० ५५ ० ५६ ० ।

ते ज्ञायिनो साततिका, निच्चं दहपरक्कमा ।

कुसन्ति धीरा निब्बानं, योगक्खेमं अनुत्तरं ॥३॥

ते ध्यायिनः साततिका नित्यं दहपराक्रमाः ।

स्पृशन्ति धीरा निर्वणिं योगक्षेमं अनुत्तरम् ॥

आमसं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं ।

द्वं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं ।

द्वं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं ।

द्वं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं ।

( जो ) वह निरन्तर ध्यानरत नित्य दृढ़ पराक्रमी हैं, वह धीर अनुपम योग-क्षेम ( आनन्द मंगल ) वाले निर्वणि को प्राप्त करते हैं ।

The wise ones who are ever meditative and always steadfastly persevering, realise Nirvana, free of bonds, the highest.

P 15 ( IV, 3 )

P 14 V 23 No 8

( ३ )

द्वं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं ।

द्वं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं ।

द्वं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं ।

द्वं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं वंत्तुं ।

उत्थानवतो सतीमती, शुचिकम्मस्स निसम्मकारिनो ।  
संयतस्स धम्मजीविनो, अप्पमत्तस्स यशोऽभिवद्भुति ॥४॥

राजगृह ( वेणुवन )

कुम्भघोसक

उत्थानवतः स्मृतिमतः शुचिकर्मणो निशम्य-कारिणः ।  
संयतस्य च धर्मजीविनोऽप्रमत्तस्य यशोऽभिवद्भुते ॥

འོན་མཁའ་ཚལ་དུ་བུམ་སྒྲ་ཅན་ལའོ།

ཡང་བ་ཡང་ཞིང་རྒྱ་བ་ལྷན།

དག་སྟོན་ངེས་བར་ཞི་བྱེད་པ།

སྟོམ་ལྷན་ཆོས་ཀྱི་འཚོ་བ་ཅན།

བག་ཡོད་རྣམས་ཀྱིས་གྲགས་བ་འཕེལ།

( जो ) उद्योगी, सचेत, शुचि कर्मवाला तथा सौचकर काम करने वाला होता है, और संयत धर्मानुसार जीविका वाला एवं अप्रमादी है ( उसका ) यश बढ़ता है ।

Continually increasing is the glory of he who is energetic, mindful, pure in deed, discriminating, self-controlled, right-living and heedful.

P 15 ( VI. 6 )

P 14 V 24 No 6

( ३ ) བཙུན་འགྲུལ་ལྷན་ཞིང་རྒྱ་དང་ལྷན་བ་དང།

སྟོན་བ་གཙང་ཞིང་བདགས་ནས་བྱེད་པ་དང།

ཡང་དག་སྟོམ་དང་ཆོས་ཀྱི་འཚོ་བ་དང།

བག་ཡོད་རྣམས་ཀྱིས་གྲགས་བ་མངོན་རར་འཕེལ།

उट्ठानेनप्पमादेन, संयमेन दमेन च ।

दीपं कयिराथ मेधावी, यं ओघो नाभिकीरति ॥५॥

राजगृह ( वेणुवन )

चुल्लपन्थक ( थेर )

उत्थानेनाऽप्रमादेन संयमेन दमेन च ।

दीपं कुर्वीत मेधावी यमोघो नाभिकिरति ॥

ཨོད་མའི་ཚལ་དུ་ལས་རྒྱུ་བ་ལ་འོ།

ཡང་བ་ཡང་དང་བག་ཡོད་ཀྱིས། ।

ཡང་དག་མྱོས་དང་དུལ་བ་ཡིས། ।

མཁས་པས་སྒྲིང་དུ་བྱས་གྱུར་བ། ।

གང་ལ་རྒྱབས་ཀྱིས་ཚྭགས་བ་མེད། ।

मेधावी (पुरुष) उद्योग, अप्रमाद, संयम और दम द्वारा (अपने लिए ऐसा)  
दीप बनावें, जिसे बाढ़ नहीं डुबा सके ।

By effort, earnestness, discipline, and self-control let the  
wise man make for himself an island which no flood can over-  
whelm.

P 15 ( VI, 5 )

P 15 V 25 No 5

( 5 )

བཙོན་འགྱུས་དང་ནི་བག་ཡོད་དང་། ।

ཡང་དག་མྱོས་དང་དུལ་བ་ཡིས། ।

མཁས་པས་སྒྲིང་དུ་བྱས་ནས་ནི། ।

རྒྱ་བོ་ཆེན་པོ་མངོན་དུ་སྒྲིག། ।



प्रमादमनुयुञ्जन्ति, बाला दुर्मेधिनो जनाः ।  
अप्रमादं च मेधावी, धनं श्रेष्ठं व रक्षति ॥६॥

प्रमादमनुयुञ्जन्ति बाला दुर्मेधसो जनाः ।  
अप्रमादं च मेधावी धनं श्रेष्ठमिव रक्षति ॥

दुर्मेधः प्रमादं यः कुरुते ।  
मेधावी धनं श्रेष्ठं रक्षति ।  
अप्रमादं च मेधावी धनं श्रेष्ठं रक्षति ।  
दुर्मेधः प्रमादं यः कुरुते ।

मूर्ख दुर्मेध जन प्रमाद में लगते हैं; मेधावी श्रेष्ठ धन की भाँति अप्रमाद की रक्षा करता है ।

The ignorant, foolish folk indulge in heedlessness, but the wise man guards heedfulness as the greatest treasure.

मा प्रमादमनुयुञ्जेथ, मा कामरतिसन्धवं ।  
अप्पमत्तो हि ज्ञायन्तो, पप्पोति विपुलं सुखं ॥७॥

मा प्रमादमनुयुञ्जीत मा कामरतिसन्धवम् ।  
अप्रमत्तो हि ध्यायन् प्राप्नोति विपुलं सुखम् ॥

सग'खेत्'स'अ'खि'सु'खि'त्ता ।  
अत्ते'स'द'स'अ'खि'सु'खि'त्ता ।  
सग'खेत्'स'अ'खि'सु'खि'त्ता ।  
सु'खे'स'अ'खि'सु'खि'त्ता ।

मत प्रमाद में फँसो, मत कामों में रत होओ, मत कामरति में लिप्त हो ।  
अमादरहित ( पुरुष ) ध्यान करते महान् सुख को प्राप्त होता है ।

Indulge not in heedlessness. Do not depend on sensual pleasures. By heedful practice of meditation an abundance of bliss will be obtained.

P. 16 ( VI. 11 )

P 16 U 27

(क) सग'खेत्'स'अ'खि'सु'खि'त्ता ।  
अत्ते'स'द'स'अ'खि'सु'खि'त्ता ।  
सग'खेत्'स'अ'खि'सु'खि'त्ता ।  
सु'खे'स'अ'खि'सु'खि'त्ता ।

प्रमादं अप्रमादेन, यदा नुदति पण्डितो ।  
 प्रजाप्रासादमारुह्य, असोको सोकिनि प्रजं ।  
 पर्वतट्ठो व भूमट्ठे, धीरो बाले अवेक्षति ॥८॥

जैतवन

महाकस्सप ( थेरः )

प्रमादमप्रमोदन यदा नुदति पण्डितः ।  
 प्रजाप्रासादमारुह्य अशोकः शोकिनीं प्रजाम् ।  
 पर्वतस्थ इव भूमिस्थान् धीरो बालान् अवेक्षते ॥

འདྲ་སྤྱད་ཆེན་པོ་ལ་འོ།

མཁས་པ་གང་ཆོ་བ་མེད་པ་ཡོད་ཀྱིས། །

བསྐྱད་ནས་ཤེས་རབ་རབ་དངས་ལ་ཞོན་པ། །

སྐྱོ་མེད་རི་བོ་རི་ཙེ་ནས་ཐང་བཞིན་དུ། །

བྱིས་བའི་སྐྱེ་གྲུ་སྤྱད་ཅན་ལ་གཟིགས། །

पण्डित जब अप्रमाद से प्रमाद को हटाता है, तब निःशोक हो शोकाकुल प्रजा को, प्रजारूपी प्रासाद पर चढ़कर—जैसे पर्वत पर खड़ा ( पुरुष ) भूमि पर अवस्थितों को देखता है ( वैसे ही ) धीर ( पुरुष ) अज्ञानियों को ( देखता है ) ।

When the sagacious one casts away heedlessness by heedfulness, then free of sorrows, he rides into the palace of wisdom and clarity and looks down on the ignorant sorrowing beings as one regarding the plains from a mountain peak.

अप्पमतो पमत्तेसु, सुत्तेसु बहुजागरो ।  
अबलस्सं व सीवस्सो, हित्वा याति सुमेधसो ॥६॥

अप्रमत्तः प्रमत्तेषु सुप्तेषु बहुजागरः ।  
अबलाश्वमिव शीघ्राश्वो हित्वा याति सुमेधाः ॥

मम षेनं भ्रूयं कं मम अंते उदं । ।  
उदं मदे भ्रूयं कं मम गुदं म । ।  
दं महेमं मं मदे मम मं मम । ।  
मम मदे दं मम मं मम मं मम । ।

प्रमादियों के बीच में अप्रमादी, सोतों के बीच में बहुत जागनेवाला,  
अच्छी बुद्धिवाला ( पुरुष )—जैसे निर्बल घोड़े को ( पीछे ) छोड़ शीघ्रगामी घोड़ा  
( आगे ) चला जाता है—( वैसे ही जाता है ) ।

Heedful amongst the heedless, wide awake amongst the  
sleepy, the wise man advances like a swift steed, leaving the  
enfeebled horses behind.

अप्यसादेन सवसा, देवानं सेट्ठवं गतो ।

अप्पमादं पसंसन्ति, पमादो गरहितो सदा ॥१०॥

वैशाली (कूटागार)<sup>1</sup>

महाली

अप्रसादेन मघत्रा देवानां श्रेष्ठतां गतः ।

अप्रमादं प्रशंसन्ति प्रमादो गहितः सदा ॥

བཀ་ཡོད་ཅིང་གིས་བསྐྱེད་ནི། །

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ཐག་ཡོད་པ་ནི་རབ་རྒྱ་བཞུགས།

मम. ५६२ म. ५६३ म. ५६४ म. ५६५ म.

अप्रमाद (= आलस्य रहित होने ) के कारण इन्द्र देवताओं में श्रेष्ठ बना ।  
अप्रमाद की प्रशंसा करते हैं, और प्रमाद की सदा निन्दा होती है ।

By heedfulness Sakka became the chief of the gods. Heedfulness is ever praised while heedlessness is ever despised.

P 18 ( VI, 22 )

[illegible]

۱۲۳۴۵۶۷۸۹۱۰۱۱۲۱۳۱۴۱۵

21. 22. 23. 24. 25. 26. 27. 28. 29. 30.

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

$\frac{1}{2} \cdot \frac{1}{2} = \frac{1}{4}$



अप्रमादरतो भिक्खु, प्रमादे भयदर्शि वा ।

अभव्वो परिहाणाय, निब्बानस्सेव सन्तिके ॥१२॥

जैतवन

( निगम-वासी ) तिलस ( थेर )

अप्रमादरतो भिक्षुः प्रमादे भयदर्शी वा ।

अभव्यः परिहाणाय निर्वाणस्यैव अंतिके ॥

दग्गेऽस्सोऽवगंअदंअदग्गंअदं । ।

अवगंअदंअदग्गंअदंअदग्गंअदं । ।

अदंअदग्गंअदग्गंअदंअदग्गंअदं । ।

अदंअदग्गंअदग्गंअदंअदग्गंअदं । ।

अवगंअदंअदग्गंअदंअदग्गंअदं । ।

( जो ) भिक्षु अप्रमाद में रत या प्रमाद से भय खानेवाला है, उसका पतन होना सम्भव नहीं, ( वह ) निर्वाण के समीप है ।

The Bhikshu who delights in heedfulness, and looks with fear on heedlessness, is not liable to fall. He is close to Nirvana.

P 19 ( VI, 30 )

P 18 V 32

(क) दग्गेऽस्सोऽवगंअदंअदग्गंअदं । ।

अवगंअदंअदग्गंअदंअदग्गंअदं । ।

अदंअदग्गंअदग्गंअदंअदग्गंअदं । ।

अदंअदग्गंअदग्गंअदंअदग्गंअदं । ।

### ३-चित्तवग्गो

फन्दनं चपलं चित्तं, दूरस्थं दुर्निवारयं ।

उजुं करोति मेधावी, उसुकारो व तेजसं ॥१॥

## खालिय पर्वत

मेघिय ( थेर )

स्पंदनं चपलं चित्तं दूरक्ष्यं दुर्निवार्यम् ।

ऋजुं करोति मेधावी इषुकार इव लेजतस् ॥

ཙ་མི་ཡེ་ཤི་རི་བོར་གསུངས་པ།

སེམས་ཆེ་གཡོ་ཞིང་འཇུག་པ་དང་།

ཡུལ་པ་པར་དཀར་ཞིང་ཞི་དཀར་ཏེ།

མདའ་མཁན་མདའ་མོ་བྱེད་པ་བཞིན།

ཐུ་རང་ལྷན་པས་པུའུ་བར་ཅ།

( इस ) चंचल, चपल, दुर्-रक्ष्य, दुर्-निवार्य चित्त को मेधावी ( धुरंधर, उसी प्रकार ) सीधा करता है, जैसे वाण बनाने वाला वाण को ।

As a fletcher straightens his arrow, so a wise man straightens his flickering, unsteady mind which is difficult to guard and difficult to restrain.

P 122 (XXXI, 8)

P 19 V 33

མེས་པ་རྣམས་ཀྱི་གཡེ་ཞིང་བཟུངས་པ་ལྟེ།

ཨིང་ཏེ་ཐུག་ཅིང་ཐུག་ཅིང་པ།

མཐའ་མཁན་མེ་ཡིས་སྤོང་བ་ལྟར།

ཡིན་གཞུང་ལ་ཡིན་པ་མཁས་པ་ལྟུང་།





दुन्निगहस्स लघुनो, यत्थकामनिपातिनो ।

चित्तस्स दमथो साधु, चित्तं दन्तं सुखावहं ॥३॥

श्रावस्ती

कोई

दुनिग्रहस्य लघुनो यत्र-काम-निपातिनः ।

चित्तस्य दमनं साधु, चित्तं दान्तं सुखावहम् ॥

अ३४ अ५५५

मत्तुं वरं दगारं विदं अदं व ददं ।

मदं दु दगारं वरं अदं व अ ।

सोमसं दुदं व अं अमसं व अ ।

सोमसं दुदं व अं अमसं व अ ।

( जो ) कठिनाई से निग्रह योग्य; शीघ्रगामी; जहाँ चाहता है वहाँ चला जानेवाला है; ( ऐसे ) चित्त का दमन करना उत्तम है; दमन किया गया चित्त सुखप्रद होता है ।

The mind is hard to check, swiftly it flits wherever it wishes, To control the mind is good, for a controlled mind is conducive to happiness.

P 121 (XXXI, 1)

P 19 V 34

मत्तुं वरं दगारं विदं अदं व ददं ।

मदं दु दगारं वरं अदं व अ ।

सोमसं दुदं व अं अमसं व अ ।

सोमसं दुदं व अं अमसं व अ ।

सुदुद्दसं सुनिपुणं, यत्थकामनिपातिनं ।  
चित्तं रक्खेथ मेधावी, चित्तं गुत्तं सुखावहं ॥४१॥

आवस्ती

कोई उत्कण्ठित मित्र

सुदुर्दशं सुनिपुणं यत्र कामनिपाति ।  
चित्तं रक्खेत् मेधावी, चित्तं गुप्तं सुखावहम् ॥

सुदुद्दसं सुनिपुणं यत्थकामनिपातिनं ।  
चित्तं रक्खेथ मेधावी, चित्तं गुत्तं सुखावहं ॥४१॥  
सुदुद्दसं सुनिपुणं यत्थकामनिपातिनं ।  
चित्तं रक्खेथ मेधावी, चित्तं गुत्तं सुखावहं ॥४१॥  
सुदुद्दसं सुनिपुणं यत्थकामनिपातिनं ।  
चित्तं रक्खेथ मेधावी, चित्तं गुत्तं सुखावहं ॥४१॥

कठिनाई से जानने योग्य; अत्यन्त चालाक, जहाँ चाहे वहाँ ले जानेवाले  
चित्त की; बुद्धिमान् रक्षा करे; सुरक्षित चित्त सुखप्रद होता है ।

The mind is very hard to perceive, extremely subtle, flitting  
wherever it wishes. Let the wise man guard it, for a guarded  
mind is conducive to happiness.

दूरङ्गमं एकचरं, असरीरं गुहाशयं ।  
ये चित्तं संयमिस्सन्ति, मोक्खन्ति मारबन्धना ॥५॥

आवस्तो

संघरक्षित (थेर)

दूरगमं एकचरं अशरीरं गुहाशयम् ।  
ये चित्तं संयस्यन्ति मुच्यन्ते मारबन्धनात् ॥

सुदूरं गच्छन्ति विचरन्ति सुदूरं ।  
सुदूरं गच्छन्ति विचरन्ति सुदूरं ।  
सुदूरं गच्छन्ति विचरन्ति सुदूरं ।  
सुदूरं गच्छन्ति विचरन्ति सुदूरं ।

दूरगामी, अकेला विचरनेवाला, निराकार, गुहाशायी ( इस ) चित्त का;  
जो संयम करेंगे; वह मार के बन्धन से मुक्त होंगे ।

Faring far, wandering alone, formless and staying in hidden places is the mind. Those who restrain it are freed from the fetters of Mara.

अनवद्विषितचित्तस्स, सद्धम्मं अविजानतो ।  
परिप्लवपसादस्स, पञ्चा न परिपूरति ॥६॥

आवस्ती

चित्तहृत्थ ( थेर )

अनवस्थित-चित्तस्य सद्धम्मं अविजानतः ।  
परिप्लवप्रसादस्य प्रज्ञा न परिपूर्यते ॥

सैमस'के'अदस'सु'सै'गवस'द' ।

दस'अदि'केस'के'सै'मेस'द' ।

स'दु'दुदस'स'व'गुणस'व' ।

मेस'स'अदस'सु'द्वेस'सै'द'गु' ।

जिसको चित्त अवस्थित नहीं, जो सच्चे धर्म को नहीं जानता, जिसका  
( चित्त ) प्रसन्नताहीन है, उसे प्रज्ञा ( परम ज्ञान ) नहीं मिल सकता ।

He whose mind is not steadfast, who knows not the Noble Doctrine, and whose faith wavers, will never develop perfect wisdom.

अनवस्सुतचित्तस्स, अनन्वाहतचेतसो ।

पुञ्जपापपहीनसंस, नत्थि जागरतो भयं ॥७॥

अनवस्यूतचित्तस्य      अनन्वाहतचेतसः ।

पुण्यपापप्रहीणस्य नास्ति जाग्रतो भयम् ॥

མཉན་ཡོད་དེ།

216

ཟག་པ་མེད་པའི་སེམས་ལྡན་ཞིང་།

ཕ་པ་མེད་བའི་སེམས་ལྟོན་པ།

བཅོད་ཉམས་སྒྲིག་པ་རབ་ཕྱུངས་པའི། །

སད་པ་རྣམས་ལ་འཛིགས་པ་མེད། །

जिसका चित्त मलरहित है; जिसका मन अकम्प्य है; जो पाप-पुण्य विहीन है; उस सजग रहनेवाले (पुरुष) के लिए भय नहीं।

There is no fear for the vigilant one, whose mind is without taint, whose mind is unwavering, and who has discarded both good and evil.

कुम्भूपमं कायमिमं विदित्वा, नगरूपमं चित्तमिदं ठपेत्वा ।  
योधेय मारं पञ्चायुधेन, जितं च रक्खे अनिवेसनी सिया ॥८॥

श्रावस्तो

पाँच सौ विषयक भिक्षु

कुम्भोपमं कायमिमं विदित्वा नगरोपमं चित्तमिदं स्थापयित्वा ।  
युद्धेत् मारं प्रज्ञायुधेन जितं च रक्षेत् अनिवेशनः स्यात् ॥

सुखं भवति सुखं वा भवति वरं देवा सुखं भवति ।  
सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति ।  
सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति ।  
सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति ।

इस शरीर को घड़े के समान ( भंगुर ) जान, इस चित्त को गढ़ (=नगर)  
के समान कायम कर, प्रज्ञारूपी हथियार से मार से युद्ध करे। जीतने के बाद  
( अपनी ) रक्षा करें, ( तथा ) आसक्ति रहित होवे।

Realising that this body is ( as fragile ) as a jar and establi-  
shing this mind ( as firm ) as a ( fortified ) city, he should attack  
Mara with the weapon of wisdom. He should guard his conquest,  
and be without attachment.

P 126 (XXXI, 36)

P 22 V 40

सुखं भवति सुखं वा भवति वरं देवा सुखं भवति ।  
सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति ।  
सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति ।  
सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति ।

अचिरं वतयं कायो, पठवि अधिसेस्सति ।  
छुद्धो अपेतविज्जाणो, निरर्थं व कलिङ्गरं ॥६॥

आवस्ती

पूतिगत तिस्र ( थेर )

अचिरं वतायं कायः पृथिवीं अधिशेष्यते ।  
क्षद्रोऽपेतविज्ञानो निरर्थं इव कलिङ्गरम् ॥

མཉམ་ཡོད་དུ་སྒྲུབ་པ་ལོ།

ཀུ་མ་རིང་པོ་མི་བློགས་པར། །

ལུས་འདི་ནམ་ཤེས་བྲམ་གུར་དེ། །

ཡན་ལག་ཕྱེས་ནས་བོང་བ་བཞིན། །

ས་ཡི་མྱེང་དུ་འཇོག་པར་འགྱུར། །

अहो ! यह तुच्छ शरीर शीघ्र ही चेतनारहित हो निरर्थक काठ की भाँति  
पृथिवी पर पड़ रहेगा ।

Alas ! before long this body will lie upon the earth, cast  
aside, devoid of consciousness, like a useless log.

P 6 ( I, 34 )

P 23 V 41

ཀུ་མ་ལུས་འདི་མི་བློགས་པར། །

གཏོང་ཞིང་ནམ་ཤེས་དང་བྲམ་ནས། །

དུར་ཁྱོད་བོང་བའི་མགལ་དུས་ལྟར། །

ས་ཡི་མྱེང་དུ་འགྱུར་པར་འགྱུར། །



दिसो दिसं यं तं कयिरा, वेरी वा पुन वेरिनं ।  
मिच्छापणिहितं चित्तं, पापियो नं ततो करे ॥१॥

कोसलं देश

नन्द ( गोप )

द्वद् द्विषं कुर्यात् वैरी वा पुनः वैरिणम् ।  
मिथ्याप्रणिहितं चित्तं पापीयांसं एनं ततः कुर्यात् ॥

गो.स.अ.स.पु.ग.स.इ.द.ग.अ.वो.अ.अ.।

अ.ग.स.व.स.अ.ग.स.स.स.अ.अ.व.अ.अ.। ।

द.ग.अ.स.द.ग.अ.अ.अ.अ.अ.अ.। ।

द.अ.स.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.। ।

अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.। ।

जितनी (हानि) शत्रु शत्रु की और वैरी वैरी की करता है, झूठे (मार्ग पर) लगा चित्त उससे अधिक बुराई करता है ।

Whatever ( harm ) a foe may do a foe, or a hater to a hater, an ill-directed mind can do us still greater harm.

P 122 ( XXXI, 10 )

P 23 V 42

अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.। ।

अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.। ।

द.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.। ।

अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.। ।

न तं माता पिता कयिरा, अञ्जे वा पि च जातका ।  
सम्मापणिहितं चित्तं, सेय्यसो नं ततो करे ॥११॥

कोसल देश

सौरय्य ( थेर )

न तत् मातापितरौ कुर्यातां अन्ये चापि च ज्ञातिकाः ।  
सम्यक् प्रणिहितं चित्तं श्रेयांसं एवं ततः कुर्यात् ॥

सं० द० ब० अ० स० ब० सु० स० ॥ १ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

सोमसं० ग्री० श्लो० क० ॥

वेदु० ग० सु० स० ॥ १ ॥

जितनी ( भलाई ) न माता-पिता कर सकते हैं, न दूसरे भाई-बन्धु, उससे  
( अधिक ) भलाई ठीक ( मार्ग पर ) लगा चित्त करता है :

A well-directed mind will do us far greater service than  
mother, father or any relative could do.

४—पुष्पवर्गो

को इमं पठान्विजेस्सति,  
यमलोकं च इमं सदेवकं ।  
को धम्मपदं सुदेसितं,  
कुसलो पुष्पमिव पचेस्सति ॥१॥

पाँच सौ भिक्षु

क इमां पृथिवीं विजेष्यते यमलोकं च इदं सदेवकम् ।  
को धर्मपदं सुदेशितं कुशलः पुष्पमिव प्रचेष्यति ॥

མཉམ་པོ་དང་།

ས་འདི་གཤིན་རྗེའི་འཇིག་རྟེན་དང་།  
 ལྷ་དང་བཅས་འདི་རྒྱལ་འདོད་སྟེ།  
 རེགས་བཤད་དག་བའི་ཆོས་ཀྱི་ཆོག་  
 མེད་ཀྱི་བཞིན་དུ་འཆོལ་བ་སྟེ།

देवताओं सहित उस यमलोक और इस पृथिवी को कौन विजय करेगा; अच्छी तरह से उपदिष्ट धर्म के पदों को कौन चतुर (पुरुष) पुष्प की भाँति चयन करेगा ।

Who will conquer this earth, and the realm of yama (Lord of Death), and the gods ? Who will investigate the well-taught path of virtue even as an expert ( garland-maker ) would pluck flowers ?

P 25 V 44

ལྷ་ར་བཅས་གཤིན་རྗེས་འཇིག་རྟེན་འདི་།  
ས་ཕྱོང་ལས་རྒྱལ་གང་ཞིག་ལགས།  
མེ་རྟོག་ལྷ་ཡུར་རབ་འདོད་པའི།  
ཆོས་བཞིན་ལེགས་པར་སྟོན་མཁས་གང་།

सेखो पठवि विजेस्सति,  
 यमलोकं च इमं सदेवकं ।  
 सेखो धम्मपदं सुदेसितं,  
 कुसलो पुष्पमिव पचेस्सति ॥ २ ॥

शैक्षः पृथिवीं विजेष्यते यमलोकं च इमं सदेवकम् ।  
 शैक्षो धर्मपदं सुदेशितं कुशलः पुष्पमिव प्रचेष्यति ॥

सं० २१० ग० १०० ॥ २१० ॥ १०० ॥ १०० ॥  
 १०० ॥ १०० ॥ १०० ॥ १०० ॥  
 १०० ॥ १०० ॥ १०० ॥ १०० ॥  
 १०० ॥ १०० ॥ १०० ॥ १०० ॥

शैक्ष देवताओं सहित इस यमलोक और पृथिवी को विजय करेगा । चतुर  
 शैक्ष सुन्दर प्रकार से उपदिष्ट धर्म के पदों को पुष्प की भाँति चयन करेगा ।

A disciple will conquer this earth, and the realm of yama,  
 and the gods. A disciple will investigate the well-taught path of  
 virtue even as an expert ( garland-maker ) would pluck flowers.

2 ( 45 )

P 25 V 45

१०० ॥ १०० ॥ १०० ॥ १०० ॥  
 १०० ॥ १०० ॥ १०० ॥ १०० ॥  
 १०० ॥ १०० ॥ १०० ॥ १०० ॥  
 १०० ॥ १०० ॥ १०० ॥ १०० ॥

फेणूपमं कायमिमं विदित्वा,  
 मरीचिधम्मं अभिसम्बुधानो ।  
 छेत्त्वान मारस्स पपुप्फकानि,  
 अदस्सनं मच्चुराजस्स गच्छे ॥३॥

श्रावस्ती

मरीचि ( कम्मट्ठानिक थेर )

फेणोपमं कायमिमं विदित्वा  
 मरीचिधम्मं अभिसम्बुधानः ।  
 छित्त्वा मारस्य प्रपुष्पकाणि  
 अदर्शनं मृत्युराजस्य गच्छेत् ॥

ལུས་འདི་ན་སྤྱན་ལ་སྤྱར་རྟེན་ལྷན་གྱིང་། །  
 ཚེས་ནམས་སྒྲིག་སྒྱུ་ལ་སྤྱར་མངོན་ཤེས་པ། །  
 བདུང་གྱི་མེ་དྲིག་མདའ་མོ་བཅག་ནས་ཀྱང་། །  
 འཆི་བདག་སྐུ་ལ་བོས་མཐོང་བ་མེད་པར་འགྲོ། །

इस काया को फेन के समान जान, या ( मर- ) मरीचिका के समान  
 मान; फन्दे को तोड़कर यमराज को फिर न देखने वाले बनो ।

Knowing that this body is like foam, and comprehending  
 its miragelike nature, one should destroy the flower-shafts of  
 sensual passion ( Mara ) and pass beyond the sight of the king of  
 death.

1

P 26 V 46

ལུས་འདི་དབྱ་བ་འདྲ་བར་དྲིགས་ལྷན་གྱིང་། །  
 དེ་བཞིན་ཚེས་ནམས་སྒྲིག་སྒྱུ་འདྲར་ཤེས་ནས། །  
 བདུང་གྱི་མེ་དྲིག་མཚན་ནི་འདྲར་གཅོད་པ། །  
 འཆི་བདག་སྐུ་ལ་བོས་བརྟར་ཡང་མེད་པར་འགྲོ། །

पुष्पानि हेव पचिनन्तं, व्यासक्तमनसं नरं ।  
सुप्तं ग्रामं महोषो व, मच्चु आदाय गच्छति ॥४॥

श्रावस्ती

विद्वड्म

पुष्पाणि ह्येव प्रचिन्वन्तं व्यासक्तमनसं नरम् ।  
सुप्तं ग्रामं महोष इव मृत्पुरादाय गच्छति ॥

འཕགས་སྤྱེས་པོ་ལོ།

མེ་རྟོག་ཙམ་ཞིག་བདུ་བ་ལ། །

རྣམ་པར་ཆགས་པའི་ཡིད་ལྷན་སྒྲི། །

ཤུ་འདྲ་ཆེན་པོས་གཉིད་ལོག་པའི། །

གྲོང་བཞིན་འཆི་བས་འཁྱེར་དེ་འགྲོ། ॥

( राग आदि के ) फूलों के चुननेवाले आसक्तियुक्त मनुष्य को मृत्यु  
( वैसे ही ) पकड़ ले जाती है, जैसे सोये गाँव को बड़ी बाढ़ ।

As a flood carries off a sleeping village, so death carries off a man who gathers flowers ( of sensual pleasures ) and whose mind is distracted.

13

1 26 V 47

མི་ཡི་ཡིད་ལ་རྣམ་ཆགས་དང་། །

མེ་རྟོག་བཞིན་དུ་རབ་བསགས་པ། །

འཆི་བདག་གིས་ནི་གྲོང་ས་ནས་འགྲོ། །

ཉལ་གྲོང་ཆུ་བོས་བདས་པ་བཞིན། །

पुष्पानि हेव पचिनन्तं, व्यासत्तमनसं नरं ।  
अतित्तञ्जेव कामेषु, अन्तको कुरुते वसं ॥५॥

श्रावस्ती

पतिपूजिका

पुष्पाणि ह्येव पचिन्वन्तं व्यासत्तमनसं नरम् ।  
अतृप्तं एव कामेषु अन्तकः कुरुते वशम् ॥

མེ་དོག་ཙམ་ཞིག་བདུ་བ་ལ།            ।  
རྣམ་པར་ཆགས་པའི་ཡིད་ལྷན་མི།    ।  
འདོད་པ་མ་རྒྱུ་ཉིད་དུ་ནི།            ।  
འཆི་བས་དབང་དུ་བྱེད་པར་འགྱུར།    ।

(राग आदि) फूलों को चुनते आसक्तियुक्त पुरुष को, (जब कि अभी उसने)  
कामों में तृप्ति नहीं प्राप्त की, ( तभी ) यम ( अपने ) वश में कर लेता है ।

Yama ( the Lord of Death ) brings under his sway those  
who gather flowers ( of sensual pleasures ) with minds distract-  
ed, and who are insatiate in desires.

14 ( 48 )

P 27 V 48

མི་ཡི་ཡིད་ལ་རྣམ་ཆགས་དང་།            ।  
མེ་དོག་བཞིན་དུ་རབ་བསགས་པ།        ।  
འདོད་པ་རྣམས་ཀྱིས་མི་ངོས་སུ་ཤིང་།    ॥  
འཆི་བས་གཉིས་ནི་དབང་དུ་བྱེད།        ।

यथा पि भमरो पुष्पं, वर्णगन्धस्य हेतुयं ।  
पलेति रसमादाय, एवं ग्रामे मुनी चरे ॥६॥

आवस्ती

( कंजूस ) कोसिय सेठ

यथापि भ्रमरः पुष्पं वर्णगन्धं अधनन् ।  
पलायते रसमादाय एवं ग्रामे मुनिश्चरेत् ॥

མཉམ་ཡོད་དུ་འོ།

རི་ལྗང་བྱང་བ་མེ་དོག་གི། ॥ १

ཁ་དོག་རྩི་ལ་མི་གཞོད་བར། ॥ १

སྤང་ཅི་སྤང་ས་དེ་འབྲེས་བྱེད་པ། ॥ १

དེ་བཞིན་བྱུང་བ་གྲོང་དུ་སྤྱོ། ॥ १

जिस प्रकार भ्रमर फूल के वर्ण और गन्ध को बिना हानि पहुँचाए, रस को लेकर चल देता है, वैसे ही गाँव में मुनि विचरण करे ।

Just as a bee collects honey and departs without injuring the scent or colour of the flower, so should the sage wander in the village.

P 59 ( XVIII. 8 )

P 27 V 49

རི་ལྗང་བྱང་བ་མེ་དོག་གི། ॥ १

ཁ་དོག་རྩི་ལ་མི་གཞོད་བར། ॥ १

སྤང་བ་གཞིབས་ནས་འབྲེས་བ་ལྗང་། ॥ १

དེ་བཞིན་བྱུང་བ་གྲོང་དུ་སྤྱོ། ॥ १



न परेसं विलोमानि, न परेसं कताकृतं ।  
अत्तनो व अवेक्खेय्य, कतानि अकतानि च ॥७॥

आवस्ती

पाठिक ( आजीवक साधु )

न परेषां विलोमानि न परेषां कृताकृतम् ।  
आत्मन् एव अवेक्षेत कृतानि अकृतानि च ॥

२८३९॥ १०३॥ १०३॥ १०३॥ ।  
१०३॥ १०३॥ १०३॥ १०३॥ ।  
१०३॥ १०३॥ १०३॥ १०३॥ ।  
१०३॥ १०३॥ १०३॥ १०३॥ ।

न दूसरों के विरोधी ( काम ) करें, न दूसरों के कृत अकृत के खोज में रहे, ( आदमी को चाहिए कि वह ) अपने ही कृत ( = किये ) और अकृत ( = न किये ) की ( खोज करे ) ।

He should not look to the faults of others, the things done or left undone by them, but only to his own misdeeds and negligences.

P 59 ( XVIII, 9 )

P 28 V 50

१०३॥ १०३॥ १०३॥ १०३॥ ।  
१०३॥ १०३॥ १०३॥ १०३॥ ।  
१०३॥ १०३॥ १०३॥ १०३॥ ।  
१०३॥ १०३॥ १०३॥ १०३॥ ।

यथा पि रुचिरं पुष्पं, वर्णवन्तं अगन्धकं ।  
एवं सुभासिता वाचा, अफला होति अकुब्बतो ॥८॥

आवस्ती

( छत्रपाणि ) उपासक

यथापि रुचिरं पुष्पं वर्णवद् अगन्धकम् ।  
एवं सुभाषिता वाग् अफला भवति अकुर्वतः ॥

མཉན་ཡིད་དུ་དག་བསྟེན་པ་ལོ།

རྩི་ལྷར་རྩི་ཞིམ་མེད་པ་ཡི། ।

མེ་དྲག་མདངས་ལྷན་མཛེས་པ་བཞིན། ।

རང་ཉིད་དེ་ལྷར་མེ་བྱེད་པ་ལོ། ।

ལགས་པར་སྒྲུས་པ་འབྲས་བྱ་མེད། ।

जैसे रुचिर और वर्णयुक्त (किन्तु) गन्धरहित फूल है, वैसे ही (कथानुसार)  
आचरण न करनेवाले की सुभाषित वाणी भी निष्फल है ।

As a beautiful and lovely flower which lacks scent is  
fruitless, so are well-spoken words that are not acted upon.

P 59 ( XVIII, 6 )

P 28 V 51

རྩི་ལྷར་མེ་དྲག་ཡིད་འོང་བ། ।

ཁ་དྲག་བཟང་ཡང་རྩི་མེད་ལྷར། ।

དེ་བཞིན་ལགས་པར་གསུངས་པའི་ཆོག། ।

འབྲས་བྱ་མེད་པར་མ་བྱེད་ཆོག། ।

यथा पि रुचिरं पुष्पं, वर्णवन्तं सगन्धकं ।  
एवं सुभाषिता वाचा, सफला होति कुर्वतो ॥६॥

यथापि रुचिरं पुष्पं वर्णवत् सगन्धकम् ।  
एवं सुभाषितां वाक् सफला भवति कुर्वतः ॥

རི་ལྷ་རྩི་ཞིམ་ལྷན་པ་ཡི། །  
མེ་དོག་མདངས་ལྷན་མཛེས་པ་བཞིན། །  
རང་ཉིད་དེ་ལྷ་རྩི་བྱེད་པ་ཡི། །  
ལེགས་པར་སྒྲུས་པ་འབྲས་ཡོད་འགྱུར། །

जैसे रुचिर वर्णयुक्त और गन्धसहित फूल होता है वैसे ही ( वचन के अनुसार काम ) करनेवाले की सुभाषित वाणी सफल होती है ।

As a beautiful and lovely flower full of scent is fruitful,  
so are well-spoken words that are acted upon.

P 59 ( XVIII, 7 )

P 29 V 52

རི་ལྷ་རྩི་མེ་དོག་ཡོད་འོང་བ། །  
ཁ་དོག་བཟང་ཞིང་རྩི་ཞིམ་ལྷན། །  
དེ་བཞིན་ལེགས་པར་གསུངས་པའི་ཚིག། །  
འབྲས་བྱ་ཡོད་པ་ཉིད་དུ་བྱིས། །

यथा पि पुष्करासिम्हा, कयिरा मालागुणे बहू ।

एवं जातेन मच्चेन, कत्तब्बं कुसलं बहु ॥१०॥

आवस्ती ( पूर्विराम )\*

विशाखा ( उपासिका )

यथापि पुष्पराशेः कुर्यात् मालागुणान् बहून् ।

एवं जातेन मर्त्येन कर्तव्यं कुशलं बहु ॥

མཉམ་ཡོད་དུ་ས་ག་ས་ལའོ།

རི་ལྗང་མེ་དོག་དུ་ས་ལས། ।

མེ་དོག་སྒང་བ་མང་བྱེད་ལྗང་། ।

སྒྲེས་ནས་འཆི་བར་ངེས་བ་ནམས། ।

དག་བ་མང་དུ་བྱེད་དགོས་སོ། ।

जित प्रकार पुष्पराशि से बहुत सी मालायें बनाये; उसी प्रकार उत्पन्न हुए प्राणी को चाहिए कि वह बहुत से भले ( कर्मों को ) करे ।

As many kinds of garlands can be made from a heap of flowers, so many good deeds should be performed by one born a mortal.

P 59 ( XVIII, 11 )

P 29 V 53

རི་ལྗང་མེ་དོག་སྒང་བ་ལས། ।

མེ་དོག་སྒང་བརྒྱད་མང་བྱེད་ལྗང་། ।

དེ་བཞིན་མིར་ནི་སྒྲེས་བ་ཡིས། ।

དག་བ་མང་ཆེན་ནམས་ཀྱང་བྱ། ।

\* སུ་ལྗང་སྒྲེས་ ( ཤར་བྱོགས་ཀྱི་ཀུན་དགར་རྩ་བ་ ) ནི་ རྒྱལ་པོ་གསལ་  
རྒྱལ་གྱི་ནང་སྒྲོན་རི་དྲགས་འཛིན་གྱི་བྱ་ཆུང་ཤོས་ཀྱི་ཆུང་མའི་བསྟེན་  
བཀྱར་ལ་མཉེས་དེ་ རི་དྲགས་འཛིན་གྱིས་མའི་བྲན་གསོ་འི་བྱེད་.....  
བཅུགས་ཤིང་ འདིར་སྟོན་བས་ལོ་ལྔར་དབྱར་གནས་མཛད་དོ།

न पुष्पगन्धो पटिवातमेति,  
न चन्दनं तगरमल्लिका वा ।

सतं च गन्धो पटिवातमेति,  
सब्बा दिसा सप्पुरिसो पवायति ॥११॥

श्रावस्ती

आनन्द ( थेर )

न पुष्पगन्ध प्रतिवातमेति  
न चन्दनं तगर-मल्लिके वा ।  
सतां च गन्धः प्रतिवातमेति  
सर्वा दिशः सत्पुरुषः प्रवाति ॥

མཉམ་ཡོད་དུ་ཀུན་དགའ་བོ་ཡོད།

མེ་དྲོག་ཅན་དན་རྒྱ་སྒྲོམ་མཁའ་ཀའི། ।

དྲི་ཞིམ་རྩི་ཕྱོགས་ལྷོག་སྡེ་འགྲོ་མ་ཡིན། ।

དམ་བའི་དྲི་ནི་རྩི་ཕྱོགས་ལྷོག་སྡེ་འགྲོ། ।

སྒྲོམ་བྱ་དམ་བ་ཡུལ་ཀུན་ཁྱབ་བ་འདྲ། ।

फूल की सुगन्ध हवा से उलटी ओर नहीं जाती, न चन्दन तगर या चमेली ( की गन्ध ही वैसा करती है ); किन्तु सज्जनों की सुगन्ध हवा से उलटी ओर बह जाती है, सत्पुरुष सभी दिशाओं में ( सुगन्ध ) बहाते हैं ।

The perfume of flowers blows not against the wind, nor does the fragrance of sandalwood, tagara, and jasmine. But the fragrance of the virtuous, travels even against the wind. The virtuous man pervades every direction.

P 26 ( VI 14 )

P 30 V 54

མེ་དྲོག་དྲི་ནི་རྩི་ཕྱོགས་མིན་མི་འགྲོ། ।

ཅན་བ་རྒྱ་སྒྲོམ་ཅན་དན་རྒྱས་ཀྱང་མིན། ।

དམ་བའི་དྲི་ནི་རྩི་ཕྱོགས་མིན་འགྲོ་སྡེ། ।

སྒྲོམ་རྒྱས་ཀུན་དུ་མི་མཆོག་དྲི་ཡིས་ཁྱབ། ।

चन्दनं तगरं वा पि, उत्पलं अथ वस्त्रिकी ।

एतेषां गन्धजातानां, शीलगन्धो अनुत्तरो ॥१२॥

चन्दनं तगरं वापि उत्पलं अथ वार्षिकी ।

एतेषां गन्धजातानां शीलगन्धोऽनुत्तरः ॥

འདྲ་མཐོང་ལ་དུ་འདྲ་སྤང་ལའོ།

ཅན་དན་དང་ནི་རྒྱ་སྤུང་སམ། ।

ལྷན་པ་ལ་དབྱར་གྱི་མེ་དྲག་སྟེ། ।

དྲི་ཞིས་འབྱུང་བ་དེ་ནམས་ལས། ।

ཅུང་ཁྲིམས་དྲི་ནི་ཁྲ་ན་མེད། ।

चन्दन या तगर, कमल या जुही, इन सभी ( की ) सुगन्धों से सदाचार की सुगन्ध उत्तम है ।

The fragrance of virtue is unsurpassed, even among the perfumes of sandalwood, tagara, lotus or jasmine.

P 26 ( VI 15 )

P 30 V 55

རྒྱ་སྤུང་དང་ནི་ཅན་དན་དང་། ।

ལྷན་པ་ལ་དང་མ་ལི་ཀ། ।

སྤུང་གྱི་དྲི་མས་ནི་འདྲི་དག་པས། ।

ཅུང་ཁྲིམས་དྲི་བསྤང་སྤུང་དུ་ཕྱིན། ।

अल्पमत्तो अयं गन्धो, द्वायं तगरचन्दनं ।  
यो च शीलवतं गन्धो, वाति देवेषु उत्तमो ॥१३॥

राजगृह ( वेणुवन )

महाकस्सप

अल्पमात्रोऽयं गन्धो योऽयं तगरचन्दनी ।  
य शीलवतां गन्धो वाति देवेषु उत्तमः ॥

सुं श्लेसं रत्तं किं उत्तमं सुं ।  
है किं स मां यिं कुं चत्तं ।  
है स श्लेसं सुं स मां है स मां ।  
सर्वे स मां सुं सुं स मां सुं ।

तगर और चन्दन की जो यह गन्ध फैलती है, वह अल्प मात्र है, और जो यह सदाचारियों की गन्ध है, ( वह ) उत्तम ( गन्ध ) देवताओं में फैलती है ।

Of little account is the fragrance of tagara or sandal.  
Excellent is the fragrance of the virtuous which blows even  
amongst the gods.

P 26 ( VI 16 )

P 31 V 56

सुं श्लेसं उत्तमं सुं स मां यिं स मां ।  
है स मां सुं सुं सुं सुं सुं ।  
है स श्लेसं सुं स मां है स मां ।  
है स सुं सुं सुं सुं सुं सुं ।

तेसं सम्पन्नसीलानं, अप्रमादविहारिनं ।

सम्मदञ्चा विमुत्तानं, मारो मगं न विन्दति ॥१४॥

तेषां सम्पन्नशीलानां अप्रमाद-विहारिणाम् ।

सम्यक्-ज्ञा-विमुक्तानां मारो मार्गं न विदन्ति ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

कुलं विमलं सुखं सुखं कलशं च दत्तं ।

वर्णं यद्वत्तं च कलशं यद्वत्तं च यद्वत्तं ।

कलशं च यद्वत्तं च यद्वत्तं कलशं च ।

यद्वत्तं च यद्वत्तं कलशं च यद्वत्तं च ।

( जो ) वे सदाचारी निरालस हो बिरहतेवाले; यथार्थ ज्ञान द्वारा मुक्त ( हो गये हैं ); ( उनके ) मार्ग को मार नहीं पकड़ सकता ।

Mara finds not the path of those who are full of virtue, heedful in living and freed by true knowledge.

P 26 ( VI, 16 )

P 31 V 57

देवदत्तं च यद्वत्तं च कलशं च दत्तं ।

कुलं विमलं कलशं च यद्वत्तं च दत्तं ।

यद्वत्तं च यद्वत्तं च कलशं च यद्वत्तं च ।

यद्वत्तं च यद्वत्तं कलशं च यद्वत्तं च ।



यथा सङ्कारधानास्मि, उज्जितस्मि महापथे ।  
पदुमं तत्थ जायेथ सुचिगन्धं मनोरमं ॥१५॥

जैतवन

गरुहादिन्त

यथा संकारधान उज्जिते महापथे ।  
पद्म तत्र जायेत सुचिगन्धं मनोरमम् ॥

गुलाबेन कथं नुते ।

है. वृ. सु. व. सु. व. व. व. ॥ १

व. व. व. व. व. व. व. ॥ १

व. व. व. व. व. व. व. ॥ १

व. व. व. व. व. व. व. ॥ १

जैसे महापथ पर फेंके कूड़े के ढेर पर मनोरम; सुचिगन्ध; गुलाब (=पद्म)  
( उत्पन्न) होवे ।

As upon a heap of rubbish thrown on the highway a  
sweet-smelling and charming lotus may grow.

P 59 ( XVIII, 10 )

P 32 V 59

है. वृ. सु. व. सु. व. व. व. ॥ १

व. व. व. व. व. व. व. ॥ १

व. व. व. व. व. व. व. ॥ १

व. व. व. व. व. व. व. ॥ १



## ५—बालवगो

दीघा जाग्रतो रत्ति, दीघं सन्तस्स योजनं ।

दीघो बालानां संसारो, सद्धम्मं अबिजानतं ॥१॥

श्रावस्ती ( जेतवन )

दरिद्र सेवक

दीर्घा जाग्रतो रात्रिः दीर्घं श्रान्तस्य योजनम् ।

दीर्घो बालानां संसारः सद्धर्मं अबिजानताम् ॥

शुभं भूयः कथं नु ननु यं पालयन्ति नृणां ।

मार्गं न भूयः पालयन्ति नृणां । ।

नृणां पालयन्ति नृणां पालयन्ति नृणां । ।

नृणां पालयन्ति नृणां पालयन्ति नृणां । ।

नृणां पालयन्ति नृणां पालयन्ति नृणां । ।

जागते को रात लम्बी होती है; थके के लिए योजन लम्बा होता है;  
सच्चे धर्म को न जानने वाले मूर्खों के लिए संसार (= भावागमन) लम्बा  
होता है ।

Long is the night for the wakeful, long is the way for him  
who is weary, long is Samsara ( the cycle of sorrowful rebirths )  
to the foolish who know not the Holy Dharma.

P 3 ( I, 17 )

P 33 V 60

मार्गं न भूयः पालयन्ति नृणां । ।

नृणां पालयन्ति नृणां पालयन्ति नृणां । ।

नृणां पालयन्ति नृणां पालयन्ति नृणां । ।

नृणां पालयन्ति नृणां पालयन्ति नृणां । ।

चरञ्चे नाधिगच्छेय्य, सेय्यं सदिसमत्तनो ।  
एकचरियं दढ्हं कयिरा, नत्थि बाले सहायता ॥२॥

राजगृह

सार्द्धविहारी ( = शिष्य )

चरन् चेत् नाधिगच्छेत् श्रेयांसं सदृश आत्मनः ।  
एकचर्या दृढं कुर्यात् नास्ति बाले सहायता ॥

ཀུམ་བོའི་ཁབ་དུའོ།

འགྲོ་བ་རང་ལས་ལྷག་པ་དང་། །

རང་དང་མཉམ་པ་མ་རྟེན་ན། །

ཅིས་ཀྱང་གཅིག་ཕྱར་འགྲོ་བར་བྱ། །

བྱིས་པ་ནམས་དང་ལྷན་དུ་མེན། །

यदि विचरण करते अपने अनुरूप भलेमानुस को न पाये, तो दृढ़ता के साथ अकेला ही विचरे, मूढ़ से मित्रता नहीं निभ सकती ।

If a seeker should not find a companion who is his better or equal, he should resolutely pursue a solitary course. There is no fellowship with the foolish.

P 48 ( XIV, 15 )

P 33 V 61

བདག་དང་མཐུན་པར་སྟོན་པ་ཡི། །

གྲོགས་བཟང་རྟེན་པར་མ་གྱུར་ན། །

བྱིས་པ་གྲོགས་སྐྱེ་མི་འགྱུར་བས། །

གཅིག་ཕྱས་སྟོན་པ་བདན་པར་བྱ། །

पुत्ता मत्थि धनमत्थि, इति बालो विहञ्जति ।  
अत्ता हि अत्तनो नत्थि, कुतो पुत्ता कुतो धनं ॥३॥

श्रावस्ती

आनन्द ( सेठ )

पुत्रा मे सन्ति धनं मे ऽस्ति इति बालो विहग्यते ।  
आत्मा हि आत्मनो नास्ति कुतः पुत्रः कुतो धनम् ॥

མཉམ་ཡོད་དུ་དགའ་བོ་ལའོ།

བདག་ལ་བྱ་ཡོད་ནང་ཡོད་ཅེས། །

བྱིས་པ་རྒྱལ་ཞེ་སེམས་པར་བྱེད། །

བདག་ཀྱང་བདག་ལ་ཡོད་མེད་ན། །

བྱ་དང་ནང་ནི་ག་ལ་ཞིག ། །

“मेरा पुत्र है”, “धन मेरा है” ऐसा ( करके ) अज्ञ ( नर ) उत्पीड़ित होता है, जब आत्मा ( = शरीर ) ही अपना नहीं, तब कहाँ से पुत्र और धन ( अपना होगा ) ।

The fool is tormented thinking, “These sons belong to me.” “his wealth belongs to me.” He himself does not belong to himself. How then can sons be his ? How can wealth be his ?

P 4 ( I, 18 )

P 34 V 62

བདག་ལ་བྱ་ཡོད་དེ་བཞིན་དུ། །

ནང་ཡོད་ཅེས་བས་བྱིས་པ་བརྒྱལ། །

ཕྱི་རོལ་ནང་ན་བདག་མེད་ན། །

སྐྱུ་ཡིས་བྱ་ཡོད་ཅི་ཞིག་ནོར། །

यो बालो मञ्जति बाल्यं, पण्डितो वा पि तेन सो ।  
बालो च पण्डितमानी, स वे बालो ति वुच्चति ॥४॥

जितवन

गिरहकट ( चोर )

यो बालो मन्यते बाल्यं पण्डितश्चापि तेन स ।  
बालश्च पण्डितमानी स, वै बाल इत्युच्यते ॥

सुखं पोरं सोमसं पदि सुखं पोरं । ।  
देदि सुखं सोमसं पदि सुखं पोरं । ।  
सुखं पोरं सोमसं पदि सुखं पोरं । ।  
देसं पदि सुखं पोरं सुखं पदि सुखं पोरं । ।

जो ( कि वह ) अज्ञ होकर ( अपनी ) अज्ञता को जानता है, इस ( अंश ) से वह पण्डित ( = ज्ञातकर ) है । वस्तुतः अज्ञ होकर भी जो पण्डित होने का दम भरता है, वही अज्ञ ( = बल ) कहा जाता है ।

A fool who thinks that he is a fool, is, for that very reason, a wise man. But the fool who thinks himself wise, is called a fool indeed.

P 85 ( XXX, 22 )

34 V 63

सुखं पोरं सोमसं पदि सुखं पोरं । ।  
देसं पदि सुखं पोरं सोमसं पदि सुखं पोरं । ।  
सुखं पोरं सोमसं पदि सुखं पोरं । ।  
देसं पदि सुखं पोरं सुखं पदि सुखं पोरं । ।

यावज्जीवं पि चे बालो, पण्डितं पर्युपासति ।  
न सो धम्मं विजानाति, दब्बो सूपरसं यथा ॥५॥

थावस्ती ( जेतवन )

उदायी ( शेर )

यावज्जीवमपि चेद बालः पंडितं पर्युपास्ते ।

न स धर्मं विजानाति दर्वी सूपरस यथा ॥

ལྷན་བྱེད་ཚལ་དུ་འཆར་ལ་ཡེ།

ཇི་སྤྱིར་འཆོ་བའི་བར་དག་དུ། ।

རྒྱན་པོས་མཁས་པ་བསྟེན་བྱས་ཀྱང་།

བྱལ་བའི་བྱོ་བ་གཟར་བྱས་བཞིན། ।

ཆོས་ནི་དེ་ཡིས་ཤེས་མེ་འགྱུར། ।

चाहे बाल ( =जड़, अज्ञ ) जीवन भर पंडित की सेवा में रहे, ( तो भी ) वह धर्म को ( वैसे ही ) नहीं जान सकता, जैसे कि कलछी ( दबली ) सूप ( दाल आदि ) के रस को ।

Though all his life a fool associates with a wise man, he will have no more understanding of the Dharma than a Ladle has of the flavour of soup.

P 84 ( XXX, 13 )

P 35 V 64

བྱིས་པས་ཇི་སྤྱིར་གསོན་བར་དུ། ।

གལ་དེ་མཁས་པ་བསྟེན་བྱས་ཀྱང་། ।

དེ་ཡིས་ཆོས་ཤེས་མེ་འགྱུར་དེ། ।

གཟར་བྱས་ཆོད་མའི་རོ་བཞིན་ནོ། ।

རྒྱན་པོས་ལྷན་བྱེད་ཚལ་དུ་འཆར་ལ་ཡེ།

मुहुत्तमपि चे विज्झू, पण्डितं पर्युपासति ।  
स्वप्पं धम्मं विजानाति, जिह्वा सूपरसं यथा ॥६॥

आवस्ती ( जेतवन )

मद्रवर्गीय ( भिक्षुलोम )

मुहुत्तमपि चेद्विज्ञः पण्डितं पर्युपास्ते ।  
क्षिप्रं धर्मं विजानाति जिह्वा सूपरसं यथा ॥

सो दं वृत्तं वसं पुरं ठं वृत्तिं ।  
अपसं वं दं वं वं वं वं वं वं ।  
सुवं वं वं वं वं वं वं वं ।  
वृत्तं वं वं वं वं वं वं वं ।

चाहे विज्ञ ( पुरुष ) एक मुहुत्त ही पण्डित की सेवा में रहे, ( तो भी वह )  
शीघ्र ही धर्म को जान सकता है, जैसे कि जिह्वा सूप के रस को ।

Though for a moment only an intelligent person associates  
with the wise, he quickly understands the Dharma as does the  
tongue, the flavour of soup.

P 84 ( XXV, 14 )

P 35 V 65

सो दं वृत्तं वसं पुरं ठं वृत्तिं ।  
अपसं वं दं वं वं वं वं वं वं ।  
सुवं वं वं वं वं वं वं वं ।  
वृत्तं वं वं वं वं वं वं वं ।



चरन्ति बाला दुग्धेधा, अमित्तेनेव अत्तना ।  
करोन्ता पापकं कम्मं, यं होति कटुकफलं ॥७॥

राजगृह ( वेणुवन )

सुप्पबुद्ध ( कोही )

चरन्ति बाला दुग्धसोऽमित्तेणैवात्मना ।

कुर्वन्तः पापकं कर्म यद् भवति कटुकफलम् ॥

कुप्यं पदं पवन्तु ।

पापं पौषं दुग्धं सौख्यं अन्नं सुखं ।

अन्नं सुखं सुखं पदं पवन्तु ।

सुखं पदं सुखं पदं पवन्तु ।

पदं सुखं पदं पदं पवन्तु ।

पाप कर्म को—जो कि कटु फल देनेवाला होता है—करते दुष्ट बुद्धि अज्ञ  
( जन ) अपने ही अपने शत्रु बनते हैं ।

The fools of poor intellect act as enemies to themselves,  
doing evil deeds whose fruits are bitter.

P 33 ( IX, 12 )

P 36 V 66

सुखं पदं सुखं पदं पवन्तु ।

पदं सुखं पदं पदं पवन्तु ।

पापं पौषं दुग्धं सौख्यं अन्नं सुखं ।

अन्नं सुखं सुखं पदं पवन्तु ।

न तं कर्म कृतं साधु, यं कृत्वा अनुतप्पति ।  
यस्स अस्सुमुखो रोदं, विपराकं पटिसेवति ॥८॥

जितवन

कोई कस्सप

न तत् कर्म कृतं साधु यत् कृत्वाऽनुतप्यते ।  
यस्याश्रुमुखो रुदन् विपराकं प्रतिसेवते ॥

सुखं पुनरुत्तमं नुत्तमं सुखं नुत्तमं ।

ननु विना सुखं नुत्तमं नुत्तमं नुत्तमं । ।

ननु विना सुखं नुत्तमं नुत्तमं नुत्तमं । ।

ननु विना सुखं नुत्तमं नुत्तमं नुत्तमं । ।

ननु विना सुखं नुत्तमं नुत्तमं नुत्तमं । ।

उस काम का करना ठीक नहीं, जिसे करके ( पीछे ) अनुताप करना पड़े,  
और जिसके फल को अश्रुमुख रोते भोगना पड़े ।

That deed is not well done, which, having been done, one  
after-wards repents, and the fruit of which one reaps weeping,  
with tearful face.

P 33 ( IX, 13 )

P 36 V 67

ननु विना सुखं नुत्तमं नुत्तमं नुत्तमं । ।

ननु विना सुखं नुत्तमं नुत्तमं नुत्तमं । ।

ननु विना सुखं नुत्तमं नुत्तमं नुत्तमं । ।

ननु विना सुखं नुत्तमं नुत्तमं नुत्तमं । ।

तं च कम्मं कृतं साधु, यं कत्वा नानुत्पपति ।  
यस्स पतीतो सुमनो, विपाकं पटिसेवति ॥६॥

राजगृह ( वेणुवन )

सुमन ( माली )

तच्च कर्म कृतं साधु यत् कृतवानानुत्पपते ।  
यस्य प्रतीतः सुमनो विपाकं प्रतिसेवते ॥

भाद. विभा. सुस. व. स. म. सु. व. वि. । ।  
वस. दे. वे. व. स. सु. व. वि. । ।  
सु. वि. व. वि. व. व. व. व. । ।  
दे. व. व. व. व. व. व. व. । ।

उसी काम का करना ठीक है, जिसे करके अनुपात करना (= पछताना) न पड़े, और जिसके फल को प्रसन्न मन से भोग करे ।

That deed is well done, which, having been done, one does not later repent, and the fruit of which one reaps with joy and pleasure.

P 33 ( IX, 14 )

P 37 V 68

भाद. विभा. सुस. व. स. म. सु. व. वि. । ।  
वस. दे. वे. व. स. सु. व. वि. । ।  
सु. वि. व. वि. व. व. व. व. । ।  
दे. व. व. व. व. व. व. व. । ।

मधुवा मञ्जति बालो, याव पापं न पचति ।  
यदा च पचति पापं, बालो दुःखं निगच्छति ॥१०॥

जैतवन

उपलवणा ( थेरी )

मध्वव मन्यते बालो यावात् पापं न पच्यते ।  
यदा च पच्यते पापं अथ दुःखं निगच्छति ॥

शुभं भवेत्तु भवत्तु भवत्तु भवत्तु ।  
इति श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा ।  
श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा ।  
श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा ।  
श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा ।

अज्ञ ( जन ) जब तक पाप का परिपाक नहीं होता, तब तक उसे मधु के समान जानता है । जब पाप का परिपाक होता है, तो दुखी होता है ।

A fool thinks an evil deed to be as sweet as honey for as long as it does not ripen. But when it does, then comes real sorrow.

P 100 ( XXVIII, 18 )

P 37 V 69

इति श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा ।  
श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा ।  
श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा ।  
श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा ।

मासे मासे कुसग्गेन, बालो भुञ्जेय्य भोजनं ।

न सो सङ्खतधम्मानं, कलं अगघति सोळ्ळिसि ॥११॥

राजगृह ( वेणुवन )

जम्बुक ( आजीवक साधु )

मासे मासे कुशाग्रेण बालो भुंजीत भोजनम् ।

न स संख्यातधर्माणां कलामर्हति शोडशीम् ॥

देव.सदे.क.य.दु.गु.र.दु.कु.स.य.दे ।

सु.र.पे.स.व.स.व.य । ।

गु.अ.दे.के.से.स.स.स.स.य.द । ।

के.स.के.व.स.द.व.स.दे.र.कु.स.स.गु । ।

व.स.दु.ग.क.य.द.दे.स.य.दे । ।

यदि अज्ञ ( पुरुष ) कुश की नौक से महीने महीने पर खाना खाये, तो भी धर्म के जानकारों के सोलहवें भाग के भी बराबर ( वह तृप्त ) नहीं हो सकता ।

For months on end a fool may eat his food with a blade of kusa-grass (an ascetic practice), but he is not worth one sixteenth of those who have comprehended the truth.

P 80 ( XXIV, 19 )

P 38 V 70

सु.र.पे.से.दे.गु.अ.दे.के.स । ।

स.स.स.स.व.स.द.य.दे.स । ।

के.स.के.व.स.द.व.स.दे.र.कु.स.स.गु । ।

व.स.दु.ग.क.य.द.दे.स.य.दे । ।

न हि पापं कृतं कर्म, सज्जु खीरं व मुच्यति ।  
 दहन्तं बालमन्वेति, भस्मच्छन्नो व पावको ॥१२॥

राजगृह ( वेणुवन )

अहिपेत

नहि पापं कृतं कर्म सद्यः क्षीरमिव मुच्यति ।  
 दहन् बालमन्वेति भस्माच्छन्न इव पावकः ॥

स्त्रीणाम्पदं लसन्ति नो मन्वेति ।  
 नो मन्वेति नो मन्वेति ।  
 मन्वेति नो मन्वेति नो मन्वेति ।  
 मन्वेति नो मन्वेति नो मन्वेति ।

ताजे दूध की भाँति किया पाप कर्म, तुरन्त विकार नहीं लाता, वह भस्म से ढँकी आग की भाँति दग्ध करता अज्ञान का पीछा करता है ।

An evil deed does not immediately bear fruit, just as fresh milk does not curdle at once. Smouldering, like fire covered with ashes, it follows the fool.

P 34 ( IX, 16 )

P 38 V 71

देसाम्पदं लसन्ति नो मन्वेति ।  
 नो मन्वेति नो मन्वेति ।  
 मन्वेति नो मन्वेति नो मन्वेति ।  
 मन्वेति नो मन्वेति नो मन्वेति ।

यावदेव अनत्थाय, जप्तं बालस्स जायति ।  
हन्ति बालस्स सुक्कंसं, मुद्धमस्स विपातयं ॥१३॥

राजगृह ( वेणुवन )

सट्टिकूठ ( प्रेत )

यावदेव अनर्थाय जप्तं बालस्य जायते ।  
हन्ति बालस्य शुक्लांशं मूर्धानमस्य विपातयन् ॥

འོད་མའི་ཚལ་དུའོ ।

ཇི་སྒྲིད་དོན་མིན་ཤེས་པ་ནི། ।

བྱིས་པ་དག་ལ་སྐྱེས་ཀྱི་བར། ।

བྱིས་པའི་དཀར་པོའི་ཆ་འཛོམས་ཞིང་། ।

དེ་ཡི་སྐྱོ་བོར་ནས་པར་སྐྱང་། ।

मूढ़ (=बाल) का जितना भी ज्ञान है, (वह उसके) अनर्थ के लिए होता है ।  
वह उसकी मूर्धा (=शिर= प्रजा) को गिराकर उसके शुक्ल (धवल=शुद्ध)  
अंश का विनाश करता है ।

The knowledge gained by the fool becomes the cause of  
his ruin. It destroys his bright lot and cleaves his head.

P 43 ( XIII 2 )

P 39 V 72

ཇི་སྒྲིད་སྐྱོན་པོ་མཚོད་བྱས་པ། ।

དེ་སྒྲིད་རབ་དྲ་བསྐྱེད་པར་འགྱུར། ।

བྱིས་པ་དཀར་པོའི་ཆ་འཛོམས་ཅིང་། ।

དེ་ཡི་སྐྱོ་བོར་ངེས་པར་ཉམས། ।

असन्तं भावनमिच्छेय्य, पुरेक्खारं च भिक्खुसु ।

आवासेसु च इस्सरियं, पूजं परकुलेसु च ॥१४॥

चेतवन

सुधर्म ( थेर )

असद्भावनमिच्छेत पुरस्कारं च भिक्षुषु ।

आवासेसु चैश्वर्यं पूजा परकुलेषु च ॥

कुलं पुनः कथं नु कसं वदं यत् ।

नमो स्तोत्रं ननु ग्राह्यं ननु । ।

वक्ष्ये नमः कसं नु नमो ननु । ।

विश्वं नमः ननु नमो ननु । ।

विश्वं नमः ननु नमो ननु । ।

अप्रस्तुत वस्तु की चाह करता है, भिक्षुओं में बड़ा बनना ( चाहता है ),  
मठों में स्वामीपन ( = ऐश्वर्य ) और दूसरे कुलों में पूजा ( चाहता है ) ।

The fool will desire undue reputation, precedence  
amongst monks, authority in the monasteries and honour  
among other families.

P 43 ( XIII, 3 )

P 39 V 73

नमः ननु नमो ननु ननु । ।

नमो स्तोत्रं ननु नमो ननु ननु । ।

नमः ननु नमो ननु ननु । ।

विश्वं नमः ननु नमो ननु ननु । ।



समैव कतमञ्जन्तु, गिहीपव्वजिता उभो ।

ममेवातिवसा अस्सु, किच्चाकिच्चेसु किस्मिच्च ।

इति बालस्स सङ्कप्पो, इच्छा मानो च वड्ढति ॥१५॥

समैव कृतं मन्येतां गृहि-प्रव्रजितावुभौ ।

ममैवातिवक्षाः स्यातां कृत्याकृत्येषु केषु चित् ।

इति बालस्य संकल्प इच्छा मानश्च वर्द्धते ॥

॥ श्री गुरुभ्यो नमः ॥

གཞིས་ཀ་དག་ནི་ཁོ་བོས་བྱས།

བྱ་དང་བྱ་མིན་ཅི་ལ་ཡང་།

ང་ཉིད་རབ་དྲ་དབང་པོ་ཞེས།

ལྷན་པོ་ཀྱན་དུ་རྟོག་པ་དང་།

འདོད་དང་ང་གྱལ་འཕེལ་བར་བྱེད། །

गृहस्थ और संन्यासी दोनों मेरे ही किए को मानें, किसी भी कृत्य अकृत्य में मेरे ही वशवर्ति हों—ऐसा मूढ़ का संकल्प होता है, ( जिससे ) इच्छा और अभिमान बढ़ते हैं ।

“Let the laymen and the monks both think that this was done by me. In every work, great or small, let them defer to me.” Such is the aspiration of the fool, and thus his desires and pride increase.

P 43 ( XIII, 1 )

P 40 V 74

རུ་ཏུ་ཡོད་པའི་ཕྱི་མེ་ལ་རེ།

གང་ཡང་རུང་བ་བཤག་འཕྲིགས་དེ།

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

བདག་དབང་གུར་ན་རེ་ཕྱེ་ཞེས།

རི་ལྷོ་ཕྱི་ལ་བ་ཀྱན་རྟེན་མ།

སེམས་ལ་འདོད་ཆེན་འཕེལ་བར་འགྱུར། །

अञ्जा हि लाभोपनिषा, अञ्जा निब्बानगामिनी ।

एवमेतं अभिञ्जाय, भिक्षु बुद्धस्स सावको ।

सत्कारं नाभिनन्देय, विवेकमनुब्रूह्ये ॥ १६ ॥

आवस्ती ( जेतवन )

( वनवासी ) तस्स ( थेर )

अन्या हि जामोनिषद् अन्या निवाणगामिनी ।

एवमेतद् अभिजाय भिक्षुबुद्धस्य आवकः ।

सत्कारं नाभिनन्देत् विवेकमनुब्रूह्येत् ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

लाभ का रास्ता दूसरा है, और निर्वाण को ले जाने वाला दूसरा— इस प्रकार इसे जानकर बुद्ध का अनुगामी भिक्षु सत्कार का अभिनन्दन न करे, और विवेक ( = एकान्तचर्या ) को बढ़ावे ।

Verily, the path that leads to worldly gain is one, and the path that leads to Nirvana is quite another. Understanding this, the Bhikhu, the disciple of the Buddha, should not delight in worldly honours but should praise the qualities of solitude and wisdom.

P 43 ( XIII, 5 )

P 40 V 75

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

## ६—पण्डितवग्गो

निधीनं व पवत्तारं, यं पस्से वज्जदस्सिनं ।  
निग्गय्हवादि मेधावि, तादिसं पण्डितं भजे ।  
तादिसं भजमानस्स, सेय्यो होति न पापियो ॥१॥

जैतवन

राघ ( थेर )

निधीनामिव प्रवत्तारं यं पश्येत् वज्जदक्षिणम् ।  
निगृह्यवादिनं, मेधाविनं तादृशं पण्डितं भजेत् ।  
तादृशं भजमानस्य श्रेयो भवति न पापीयः ॥

शुभं भवेत्तु ॥

एतन्निधीनं पवत्तारं पश्येत् वज्जदस्सिनम् ।  
निगृह्यवादिनं, मेधाविनं तादृशं पण्डितं भजेत् ।  
तादृशं भजमानस्य श्रेयो भवति न पापीयः ॥

(भूमि में गुप्त) निधियों के बतलानेवाले की तरह, बुराई को दिखानेवाले  
ऐसे संयमवादी, मेधावी पण्डित की सेवा करे। ऐसे के सेवन करने वाले का  
कल्याण होता है, अमंगल नहीं ( होता ) ।

If a person sees a wise man who points out faults and reprovcs and who teaches what is the pure morality, he should serve him as he would a revealer of hidden treasures. By doing such service good and not evil will arise.

ओवदेयानुसासेय, असम्भा च निवारये ।  
सतं हि सो प्रियो होति, असतं होति अप्रियो ॥२॥

जैतवन

अस्सजी, पुनव्वस्

अववदेदनुशिष्याद् असम्भाच्च निवारयेत् ।  
सतां हि स प्रियो भवति असतां भवत्यप्रियः ॥

एवमसं वरं तु वैदंस्त्वसं वरं तु ।  
मे ममसुखं वरं क्वमसं वल्लेखं वरं तु ।  
दमं वरं देवं दमोसं वरं तु ।  
दमं वरं मे क्वमसं दमं मे दमं तु ।

( जो ) सदुपदेश देता है, अनुशासन करता है, नीच कर्म से निवारण करता है, वह सत्पुरुषों को प्रिय होता है, और असत्पुरुषों को अप्रिय ।

Let him advise, instruct, and shield one from evil. A delight is he to the good, a vexation to the wicked.

न भजे पापके मित्ते, न भजे पुरिसाधमे ।  
भजेथ मित्ते कल्याणे, भजेथ पुरिसुत्तम ॥३॥

जैतवन

छन्द ( धेर )

न भजेत् पापानि मित्राणि न भजेत् पुरुषाधमान् ।  
भजेत् मित्राणि कल्याणानि भजेत् पुरुषानुत्तमान् ॥

झैणं पदं पुण्यं पदं पदं पदं ।

पदं पदं पदं पदं पदं पदं ।

पदं पदं पदं पदं पदं पदं ।

पदं पदं पदं पदं पदं पदं ।

दुष्ट मित्रों का सेवन न करें, न अधम पुरुषों का सेवन करें । अच्छे मित्रों का सेवन करे, उत्तम पुरुषों का सेवन करे ।

Do not associate with evil friends, nor with common people. But associate with virtuous friends and noble men.

P 82 ( XXV, 3 )

P 42 V 73

झैणं पदं पुण्यं पदं पदं पदं ।

पदं पदं पदं पदं पदं पदं ।

पदं पदं पदं पदं पदं पदं ।

पदं पदं पदं पदं पदं पदं ।

( पदं पदं पदं पदं पदं पदं ।

झैणं पदं पदं पदं पदं पदं पदं । )

धम्मपीति सुखं सेति, विप्पसन्नेन चेतसा ।  
अरियप्पवेदिते धम्मे, सदा रमति पण्डितो ॥४॥

जेतवन

महाकप्पिन ( थेर )

धर्मपीतीः सुखं शेते विप्रसन्नेन चेतसा ।  
आर्यप्रवेदिते धर्मे सदा रमति पण्डितः ॥

शुभं भुङ्क्ते धर्मं पश्यन्ते केन चोत्तरे ।

सर्वं दुःखं सन्निवृत्तिं विनाशं पश्यन्ति ।

केशं केवलं दुःखं सन्निवृत्तिं विनाशं पश्यन्ति ।

दुःखं दुःखं सन्निवृत्तिं विनाशं पश्यन्ति ।

केशं विनाशं सन्निवृत्तिं विनाशं पश्यन्ति ।

धर्म ( -रस ) का पान करनेवाला प्रसन्न-चित्त हो सुखपूर्वक सोता है;  
पण्डित ( जन ) आर्यों के जतलाये धर्म में सदा रमण करते हैं ।

He who imbibes the Dharma lives happily. With a tranquil mind the wise man ever delights in the Dharma revealed by the Aryas ( Buddhas. )

उदकं हि नयन्ति नेत्तिका,  
 उसुकारा नमयन्ति तेजनं ।  
 दारुं नमयन्ति तच्छका,  
 अत्तानं दमयन्ति पण्डिता ॥५॥

जेतवन

पण्डित सामणेर

उदकं हि नयन्ति नेतृका इषुकारा नमयन्ति तेजनम् ।  
 दारु नमयन्ति तक्षका आत्मानं दमयन्ति पण्डिताः ॥

शुभं भवेत्तस्य नृपस्य कृपां नमस्य च ।

पुनः च भवेत्तस्य कृपां नमस्य कृपां नमस्य च ।

मदन्तं नमस्य कृपां नमस्य कृपां नमस्य च ।

मदन्तं नमस्य कृपां नमस्य कृपां नमस्य च ।

मदन्तं नमस्य कृपां नमस्य कृपां नमस्य च ।

नहरवाले पानी को ले जाते हैं, वाण बनानेवाले वाण को ठीक करते हैं,  
 बड़ई लकड़ी को ठीक करते हैं, और पण्डित ( जन ) अपना दमन करते हैं ।

Irrigators lead the water, fletchers fashion the arrow  
 shafts, carpenters bend the wood, and the wise control them-  
 selves.

P 58 ( XXII, 11 )

P 43 V 80

मदन्तं नमस्य कृपां नमस्य कृपां नमस्य च ।

मदन्तं नमस्य कृपां नमस्य कृपां नमस्य च ।

मदन्तं नमस्य कृपां नमस्य कृपां नमस्य च ।

मदन्तं नमस्य कृपां नमस्य कृपां नमस्य च ।

सेलो यथा एकघनो, वातेन न समीरति ।  
एवं निन्दाप्रशंसासु, न समिञ्जन्ति पण्डिता ॥६॥

जितवन

महिय ( थेर )

शैलो यथैकघनो वातेन न समीर्यते ।  
एवं निन्दाप्रशंसासु न समीर्यन्ते पण्डिताः ॥

ལྷུ་ཡ་ཤེད་ཚལ་དུ་འོ།

རི་ལྷུང་དུས་བྱ་གཅིག་པའི་བྲག་ ।

རྒྱང་གིས་གཡོ་བར་མི་ཤེད་པ། ।

དེ་བཞིན་བཟོད་དང་སྐྱད་པ་ལ། ।

སྐྱམས་པ་ནམས་ནི་གཡོ་བ་མེད། ।

जैसे ठोस पहाड़ हवा से कम्पायमान नहीं होता, ऐसे ही पण्डित निन्दा  
और प्रशंसा से विचलित नहीं होते ।

As a solid rock is not shaken by wind, even so, the wise  
are not ruffled by praise or blame.

P III ( XXIX. 53 )

P 43 V 81

རི་ལྷུང་རི་དང་བྲག་དག་ནི། ।

རྒྱང་གིས་གཡོས་པས་མི་འགྱུར་ལྷུང་། ।

དེ་བཞིན་བཟོད་དང་སྐྱད་པ་ཡིས། ।

སྐྱམས་པ་རབ་དུ་གཡོ་བ་མེད། ।



यथा पि रहदो गम्भीरौ, विष्पसन्नो अनाविलो ।  
एवं धर्मानि सुत्वान, विष्पसीदन्ति पण्डिता ॥७॥

जैतवन

काण-माता

यथापि हदो गम्भीरो विप्रसन्नोऽनाविलः ।  
एवं धर्मान् श्रुत्वा विप्रसीदन्ति पण्डिताः ॥

རི་ལྷ་མཚོ་ཆེན་མོ་ལྟ་བུ་ལྟ་བུ་  
རྒྱ་མཚོ་ཆེན་མོ་ལྟ་བུ་ལྟ་བུ་  
རི་ལྷ་མཚོ་ཆེན་མོ་ལྟ་བུ་ལྟ་བུ་  
མཚོ་ཆེན་མོ་ལྟ་བུ་ལྟ་བུ་ལྟ་བུ་

धर्मों को सुनकर पण्डित (जन) अथाह, स्वच्छ, निर्मल सरोवर की भाँति  
स्वच्छ ( सन्तुष्ट ) होते हैं ।

As a deep lake is extremely clear and unperturbed, so are  
the wise ones perfectly satisfied after hearing the Teachings.

P 57 ( XV1I, 9 )

P 44 V 82

རི་ལྷ་མཚོ་ཆེན་མོ་ལྟ་བུ་  
རྒྱ་མཚོ་ཆེན་མོ་ལྟ་བུ་  
རི་ལྷ་མཚོ་ཆེན་མོ་ལྟ་བུ་  
མཚོ་ཆེན་མོ་ལྟ་བུ་

सब्वत्थ वे सप्पुरिसा चजन्ति,

न कामकामा लपयन्ति सन्तो ।

सुखेन फुट्ठा अथ वा दुखेन,

न उच्चावचं पण्डिता दस्सयन्ति ॥८॥

जितकम

पाँच सौ भिक्षु

सर्वत्र वै सत्पुरुषा ब्रजन्ति न कामकामा लपन्ति सन्त ।

सुखेन स्पृष्टा अथवा दुःखेन नोच्चावचं पण्डिता दर्शयन्ति ॥

सुखेन फुट्ठा अथ वा दुःखेन नोच्चावचं पण्डिता दर्शयन्ति ॥

सुखेन फुट्ठा अथ वा दुःखेन नोच्चावचं पण्डिता दर्शयन्ति ॥

सुखेन फुट्ठा अथ वा दुःखेन नोच्चावचं पण्डिता दर्शयन्ति ॥

सुखेन फुट्ठा अथ वा दुःखेन नोच्चावचं पण्डिता दर्शयन्ति ॥

सत्पुरुष सभी जगह जाते हैं, ( वह ) भोगों के लिए धात नहीं चलाते;  
सुख मिले या दुःख, पण्डित ( जन ) विकार नहीं प्रदर्शित करते ।

Pure people walk on, whatever happens to them. The saints are free from desireful talk. Whether touched by happiness or by pain, the wise exhibit neither elation nor depression.

न अत्तहेतु न परस्स हेतु,

न पुत्तमिच्छे न धनं न रट्टं ।

न इच्छेय्य अधम्मेन समिद्धिमत्तनो,

न सीलवा पञ्चवा धम्मिको सिया ॥६॥

## जेतवन

धम्मिक ( थेर )

नात्महेतोः न परस्य हेतोः

न पुत्रमिच्छेत् न धनं न राष्ट्रम् ।

नेच्छेद् अधर्मेण समृद्धिमात्मनः

स शीलवान् प्रज्ञावान् धार्मिकः स्यात् ॥

བདག་སྒྲུང་མ་ཡིན་གཞན་གྱི་སྒྲུང་དུ་མིན།

ཐུ་ནི་མི་འདོད་ནེར་མིན་ཡུལ་འཁོར་མིན།

ཆོས་མ་ཡིན་པས་རང་འབྱུང་གི་འདོད་པ།

དེ་ནི་ཚུལ་ལྡན་གཤམ་ལྡན་ཆོས་ལྡན་འགྲུང་། །

जो अपने लिए या दूसरे के लिए, पुत्र, धन, और राज्य नहीं चाहते, न अधर्म से अपनी उन्नति चाहते हैं; वही सदाचारी ( = शीलवान ) प्रज्ञावान् और धार्मिक हैं ।

One who is virtuous, wise and righteous is without desires for himself or for others. He desires neither sons nor wealth nor kingdom, and does not wish for his own success by unfair means.

अल्पका ते मनुस्सेसु. ये जना पारगामिनो ।

अथायं इतरा पजा, तीरमेवानुधावति ॥१०॥

जेटवन

धर्मश्रमण

अल्पकास्ते मनुष्येषु ये जनाः पारगामिनः ।

अथेमा इतराः प्रजा तीरमेवानु धावति ॥

ཀྱུ་པ་བྱེད་ཚུ་རྩ་ཆོས་ལ་འོ།

པ་ལོ་ལ་སོན་པ་དེ་སྦྱེས་བྱ་ནི། ।

མི་ཡི་ནང་ན་རྩ་རྩ་ཅས། ।

འོན་ཀྱང་སྦྱེ་བྱ་གཞན་པ་ནམས། ।

ཆུ་ལོ་ཁོ་ནང་རྩེས་སུ་རྒྱུ། ।

मनुष्यों में गार जाने वाले जन बिरले ही हैं, यह दूसरे लोग तो तीर पर ही दौड़नेवाले हैं ।

Few amongst men are those who reach the further shore ( of Nirvana ). The rest of mankind only run about on the hither bank ( of Samsara ).

P 109 ( XXIX, 37 )

P 45 V 85

སྦྱེ་རྒྱ་པ་པ་པ་འདི་དག་ནི། ।

པ་མཐའ་ཉིད་རྩ་རྩ་བྱེད་པ། ।

གང་དག་པ་ལོ་ལ་འགྲོ་བྱེད་པ་དེ། ।

མི་ཡི་སྦྱེ་བོ་དེ་དག་རྩ་རྩ། ।

ये च खो सम्मदक्खाते, धम्मे धम्मानुवत्तिनो ।  
ते जना पारमेस्सन्ति, मच्चुधेयं सुदुत्तरं ॥११॥

ये च खलु सम्यगाख्याते धर्मो धर्मानुवत्तिनः ।  
ते जनाः पारमेष्ठ्यन्ति मृत्युधेयं सुदुस्तरम् ॥

གང་ཞིག་ཡང་དག་གསུངས་པ་ཡི། །  
ཆོས་ལ་ཆོས་ཀྱི་རྗེས་སུ་འཇུག་ །  
འཆི་བའི་ཡུལ་ས་བསྟོན་དཀར་བའི། །  
པ་རྩལ་སྤྱོད་པོ་དེ་ལྟས་བསྟོན། །

जो सुव्याख्यात धर्म का अनुगमन करते हैं, वह मृत्युगृहीत अतिदुस्तर  
( संसार-सागर ) को पार करेंगे ।

But those who truly act according to the teaching, when  
it has been well expounded to them, will cross to the other shore  
beyond the dominion of death, so difficult to traverse.

P 109 ( XYIX 38 )

P 46 V 86

གང་དག་ལེགས་བར་གསུངས་པ་ཡི། །  
ཆོས་ལ་ཆོས་ཀྱི་རྗེས་ན་བས། །  
སྤྱོད་པོ་དེ་དག་སྤྱོད་པོ་ཡི། །  
མཆོ་ཆེན་གྱི་དཀར་པ་རྩལ་འགྲོ། །

कण्हं धम्मं विप्रहाय, सुक्कं भावेथ पण्डितो ।  
ओका अनोकमागम्म, विवेके यत्थ दूरमं ॥१२॥

जेतवन

पाँच सौ नवागत भिक्षु

कृष्णं धर्मं विप्रहाय शुक्लं भावयेत् पण्डितः ।  
ओकात् अनोकं आगम्य विवेके यत्र दूरमम् ॥

शुभं भवेत्तु ।

कण्हं धम्मं विप्रहाय सुक्कं भावेथ पण्डितो ।

ओका अनोकमागम्म विवेके यत्थ दूरमं ॥

कृष्णं धर्मं विप्रहाय शुक्लं भावयेत् पण्डितः ।

ओकात् अनोकं आगम्य विवेके यत्र दूरमम् ॥

काले धर्म ( पाप ) को छाड़कर, पण्डित ( जन ) शुक्ल ( धर्म ) धर्म का  
आचरण करें । घर से बेघर हो दूर जा विवेक ( एकान्त ) का सेवन करे ।

The wise man abandons dark states and cultivates the  
bright. Without going from house to house, he seeks great  
delight in solitude, so hard to enjoy.

तत्राभिरतिमिच्छेय्य, हित्वा कामे अकिञ्चनो ।

परियोदपेथ्य अत्तानं. चित्तक्लेसेहि पण्डितो ॥१३॥

तत्राभिरतिमिच्छेत् हित्वा कामान् अकिञ्चनः ।

पर्यवदापयेत् आत्मानं चित्तवलेषैः पण्डितः ॥

ཅི་ཡང་མེད་པར་འདོད་ཀྱང་མ་དེ།

དེར་ནི་མངོན་དགའ་འདོད་པར་བྱ།

མང་གི་སེམས་ཀྱི་ཉན་མེད་ས་རྣམས།

མཁས་པས་ཡོངས་སྤྱིར་བར་བ། །

भोगों को छोड़, सर्वस्वत्यागी हो बही रत रहने की इच्छा करे। धण्डत (जन) चित्त के मलों से अपने को परिशुद्ध करे।

Giving up all desires whatsoever, and desiring ( only ) that real happiness ( or being without desire ), the wise man completely removes the troublesome passions ( desire, anger, ignorance and their kindred ) from his mind.

येसं सम्बोधियङ्गेषु, सम्मा चित्तं सुभावितं ।

आदानपटिनिस्सग्गे, अनुपादाय ये रता ।

स्वीणासवा जुतिमन्तो, ते लोके परिनिब्बुता ॥१४॥

येषां सम्बोध्यंगेषु सम्यक् चित्तं सुभावितम् ।

आदानप्रतिनिःसर्गे अनुपादाय ये रताः ।

क्षोणास्रवा ज्योतिष्मन्तस्ते लोके परिनिर्वृताः ॥

གང་གིས་བྱང་རྒྱལ་ཡན་ལག་ནམས།

ཡང་དག་སེམས་ཀྱིས་ལེགས་པར་བརྒྱུ་། །

ཡེན་པ་ནམས་པས་ཕྱེར་ཕྱེར་གྱིང་།

ཉེ་བར་ལེན་ལ་མི་དགའ་བ།

ཐག་ཐད་ལ་བ་ལྟ་བུ་རེ།

འཛིན་རྟེན་ཡོངས་སུ་སྤྲོད་པ་ཡིན།

ཡུལ་པའི་སྡེ་ཚོན་དེ།

ཐེན་ཀྱན་པའོ། །

संबोधि ( परम ज्ञान ) के अंगों ( = संबोध्यगों ) में जिनका चित्त भली प्रकार परिभावत ( अभ्यस्त ) हो गया है; जो परिग्रह के परित्याग पूर्वक अपरिग्रह में रत हैं। ऐसे चित्त के मलों से निर्मुक्त ( = क्षीणालव ), द्युतिमान ( पुरुष ) लोक में निर्वान को प्राप्त हैं।

Those who with a pure mind properly meditate on all the seven branches of enlightenment ( mindfulness, wisdom, energy, joyousness, serenity, concentrated meditation, and equanimity ), and abandoning all attachment take no pleasure in grasping, such ones possessed of radiant clarity attain the passing from sorrow ( Nirvana ) in this world.

P 27 ( XXXI, 40 )

P 47 V 89

གང་གིས་བྱང་ཆུབ་པ་ལ་མ་ལག་བརྒྱུ་།

མེས་ས་ཀྱིས་ལེགས་པར་བསྐྱོམས་པ་དང་།

གང་ཞིག་ལེན་ལ་མི་དགའ་ཞིང་།

ལེན་པ་རབ་ཏུ་སྒྲུབ་པ་དང་།

ཐག་ཐད་ཕྱོད་རྒྱུ་ལ་བསམ་བཤམ་བ་དེ།

ཉམས་ཅིན་དག་ཅ་ཅུ་པན་ལྟེན།



## ७—अरहन्तवर्गो

गतद्विनो विसोकस्स, विप्पमुत्तस्स सब्बधि ।  
सब्बगन्थप्पहीनस्स, परिब्बाहो न विज्जति ॥१॥

राजगृह ( जीवक का आश्रम )

जीवक

गताध्वनो विशोकस्य विप्रमुक्तस्य सर्वथा ।  
सर्वग्रन्थप्रहीणस्य परिदाहो न विद्यते ॥

असूदं कंठं दुग्धं सुदं वं वसुदं वं

सूदं वं सुदं सुदं सुदं सुदं ॥

सूदं वं सुदं सुदं सुदं सुदं ॥

सूदं वं सुदं सुदं सुदं सुदं ॥

सूदं वं सुदं सुदं सुदं सुदं ॥

जिसका मार्ग ( गमन ) समाप्त हो चुका है, जो शोक रहित तथा सर्वथा मुक्त है; जिसकी सभी ग्रंथियाँ क्षीण हो गई हैं; उसके लिये सन्ताप नहीं है ।

Completely without sorrow is he who has ceased moving ( i. e. whose karma is finished ), who is without troubles and who, wholly free from everything, has severed all bonds.

उध्युञ्जन्ति सतीमन्तौ, न निकेते रमन्ति ते ।  
हंसा व पल्लवं हित्वा, ओकमोकं जहन्ति ते ॥२॥

राजगृह ( वेणुवन )

महाकस्सेप

उद्युजते स्मृतिमन्तो न निकेते रमन्ति ते ।  
हंसा इव पल्वलं हित्वा ओकमोकं जहति ते ॥

ཐམ་ཏང་ལྷན་བར་རབ་ལྗོངས་པ།

དེ་རྣམས་གནས་ལ་ཆགས་མ་ཡིན། །

ངང་པས་རྒྱང་བྱ་གཏོང་བ་བཞིན།

བྱིས་དང་བྱིས་མི་དེ་ཡིས་འདོར།

सचेत हो वह उद्योग करते हैं, ( गृह-सुख ) में रमण नहीं करते, हंस जैसे क्षुद्र जलशय को छोड़कर चले जाते हैं ( वैसे ही वह अर्हत् गृह को छोड़ जाते हैं ) ।

The mindful exert themselves. Attachment to no abode, they abandon home after home, like swans who have left their lake.

P 56 (XVII 1)

P 48 V 91

དེ་དག་ཀྱིས་ལ་མི་དགའ་བར།

རྒྱ་དང་ལྷན་པ་འབད་པ་ཡིས།

འཇམ་པ་མཚོ་རྒྱུ་བ་ལྟར།

ཕེ་རྒྱ་ཁྱིམ་ཕྱེས་མེ་པ་པ་།

येसं सन्निचयो नत्थि, ये परिञ्जातभोजना ।  
 सुञ्जतो अनिमित्तो च, विमोक्खो येसं गोचरो ।  
 आकासे व सकुन्तानं, गति तेसं दुरन्नया ॥३॥

जैतवन

वेलट्टि सीस

येषां सन्नचयो नास्ति ये परिज्ञातभोजनाः ।  
 शून्यतोऽतिमित्तश्च विमोक्षो यस्य गोचरः ।  
 आकाश इव शकृन्तानं गतिः तेषां दुरन्वया ॥

சு. பி. சி. சி. சி.

གང་ལ་གསོག་པའི་ཡོད་མིན་ཞིང་།

གང་གིས་ཡོངས་སུ་གནང་བ་ལྟོང་།

གང་གི་སྒྲོན་ལྷ་མ་སྒྲོང་ཉིད་དང་།

མཚན་མེད་རྣམ་པར་ཤར་བ་ཏེ།

དེ་ནས་མ་གོ་འཕང་ནས་སའའ་ལ།

ཏུ་ལམ་བཞིན་དུ་གྲེས་པར་དགའ།

जो ( वस्तुओं का ) संचय नहीं करते, जिनका भोजन नियत है, शून्यता-स्वरूप तथा कारण-रहित मोक्ष (=निर्वाण) जिनको दिखाई पड़ता है; उनकी गति (=गंतव्य स्थान) आकाश में पक्षियों की ( गति की ) भाँति अज्ञेय है।

Those who do not hoard, who reflect well over their food, and whose object is the Void, the signless Liberation, their course cannot be traced, like that of birds in the sky.

P 107 ( XXIX, 25 )

P 49 V 92

གང་དག་ཀྱང་དུ་སོགས་མེད་ཅིང་། །

གང་དག་ཁ་ཟས་ཡོངས་ཤེས་པ། །

ཕྱོད་དང་མཚན་མ་མེད་པ་དང་། །

དབེན་པ་ཉིད་ཀྱི་སྒྲོང་ཡུལ་ཅན།

དེ་དག་འགྲོ་བ་རྟོགས་དཀའ་ཏེ།

ནམ་མཁར་ལ་ནི་བྱ་རྗེས་བཞིན།

यस्सासवा परिक्वीणा, आहारे च अनिस्सितो ।  
 सुञ्जतो अनिमित्तो च, विमोक्खो यस्स गोचरो ।  
 आकासे व सकुन्तानं, पदं तस्स दुरन्नयं ॥४॥

राजगृह ( वेणुवन )

अनुरुद्ध ( थेर )

यस्यास्रवाः परिक्वीणा आहारे च अनिःसृतः ।  
 शून्यतोऽनिमित्तश्च विमोक्षो यस्य गोचरः ।  
 आकाश इव शकुन्तानां पदं तस्य दुरन्वयम् ॥

गदं गौं च गं च अदसं च उदं । ।

असं च वल्लिं च अदं च अदं । ।

गदं गौं सुदं पुं सुदं उदं ददं । ।

अदं च उदं च अदं च उदं च उदं । ।

दे उदं च अदं च उदं च अदं च । ।

पुं अदं च वल्लिं पुं अदं च उदं । ।

जिसके आश्रव (=मल) क्षीण हो गये हैं, जो आहार में आसक्त नहीं, तथा शून्य और अनिमित्त विमोक्ष जिसका गोचर है, उसकी गति, आकाश में पक्षियों की गति की भाँति अज्ञेय है ।

He whose corruptions (asava-sensuality; craving for existence; speculation; ignorance.) are destroyed, who is not attached to food, and whose object is the Void, the signless Liberation, his path cannot be traced, like that of birds in the sky.

P 108 ( XXIX, 31 )

P 49 V 93

गदं दगं च अदं च उदं च उदं । ।

गदं गौं च अदं च उदं च अदं च । ।

सुदं ददं अदं च अदं च उदं । ।

ददं च उदं च अदं च उदं च उदं । ।

दे दगं अदं च उदं च अदं च उदं । ।

अदं च उदं च अदं च उदं च उदं । ।

यस्सिन्द्रियाणि समथङ्गतानि,

अस्सा यथा सारथिना सुदन्ता ।

पहीनमानस्स अनासवस्स,

देवा पि तस्स पिहयन्ति तादिनो ॥५॥

श्रावस्ती ( पूर्वोराम )

महाकव्यायन

यस्येन्द्रियाणि शमतां गतानि,

अश्वा यथा सारथिना सुदान्ताः ।

प्रहीणमानस्य अनास्रवस्य देवा,

अपि तस्य स्पृहयन्ति तादृशः ॥

ཡང་གི་ཀུན་དགའ་ར་བར་ཀུན་གྱི་ཆེན་པོ་ལོ།

ཁ་ལོ་བསྐྱར་བས་ལེགས་དུལ་དྲ་བཞིན་དུ། ।

གང་གི་དབང་པོ་ཆམས་ནི་ཞི་གུར་ཅིང་། ।

ང་གྱལ་སྤངས་ཤིང་ཟག་བ་ཟད་བྱས་པ། ।

ཅུ་ཡང་དེ་ལ་སྒྲོན་བ་དེ་ལྟ་ཅིང་། ।

सारथी द्वारा सुदान्त ( = सुशिक्षित ) अश्वों की भाँति जिसकी इन्द्रियाँ शान्त हैं, जिसका अभिमान नष्ट हो गया, (और) जो आस्रवरहित है; ऐसे उस ( पुरुष ) की देवता भी स्पृहा करते हैं ।

Even the gods wish to emulate one whose senses are subdued, like horses well trained by the charioteer, whose pride is destroyed, and who is free of corruptions.

पठविसमो नो विरुज्जति,  
 इन्द्रखीलूपमो तादि सुब्बतो ।  
 रहदो व अपेतकद्दमो,  
 संसारा न भवन्ति तादिनो ॥६॥

जैतवन

सारिपुत्त ( धेर )

पृथिवीसमो न विरुध्यते इन्द्रकीलोपमस्ताहक् सुव्रतः ।  
 हृद इवापेतकदर्दमः संसारा न भवन्ति तादृशः ॥

संनल्लैवल्लैकं दुक्कमं वरं सैव नो वाञ्छे ।  
 न वरं सैव न सुखं वरं वल्लैकं दुक्कमं वल्लुगसं वदन् ।  
 ज्जेहं सुवल्लैकं दुक्कैव वरं न वरं व ।  
 नैव न वरं नैव न वरं सैव न वरं नैव न वरं ।

वैसा सुन्दर व्रतधारी इन्द्रकील के समान (अचल ) तथा पृथिवी के समान जो श्रुब्ध नहीं होता; ऐसे (पुरुष) में कर्दरहित सरोवर की भाँति संसार (- मल ) नहीं रहता ।

There is no cycle of births and deaths for the man who is imperturbable and tolerant as the earth, firm and steady like the kila ( weapon ) of Indra, and free of muddy cloudiness like a lake.

सन्तं तस्स मनं होति, सन्ता वाचा च कम्म च ।  
सम्मदञ्जा विमुत्तस्स, उपसमन्तस्स तादिनो ॥७॥

जैतवन

कोसम्बिभासित तिसस ( थेर )

शान्तं तस्य मनो भवति शान्ता वाक् च कर्म च ।  
सभ्यगाज्ञाविमुक्तस्य उपशान्तस्य तादृशः ॥

शुचं सुदेहं सुसंशुचं सुचं च ।

देहं सुदेहं सुसंशुचं सुचं च ।

संशुचं सुदेहं सुसंशुचं सुचं च ।

संशुचं सुदेहं सुसंशुचं सुचं च ।

संशुचं सुदेहं सुसंशुचं सुचं च ।

उपशान्त और यथार्थ ज्ञान द्वारा मुक्त हुए उस (अहंतपुरुष) का मन शान्त होता है, वाणी और कर्म शान्त होते हैं ।

Calm and quiet is the mind, speech and action of one who has obtained freedom through true knowledge and is perfectly tranquil and unperturbable.

अस्सद्धो अकतञ्जु च, सन्धिच्छेदो च यो नरो ।

हतावकासो वन्तासो, स वे उत्तमपोरिसो ॥८॥

## जैतवन

सारिपूत्र ( थेर )

अश्रद्धोऽकृतज्ञश्च सन्धिच्छेदश्च यो नरः ।

हतावकाशो वान्ताशः स वै उत्तम पुरुषः ॥

ཕྱི་ལོ་བཅའ་ཚུ་གཤམ་སྐྱོད་ཀྱི་ཡོད།

མི་གང་མེས་བ་མེད་པ་དང་།

མ་གུས་པ་ཤེས་མཚམས་སྒྲིར་ཅད། །

གནས་སྤངས་ཞེན་བ་བྲལ་གུར་བ། །

དེ་ནི་ལྷ་ས་ལྷ་མཆོག་ཡིན་ནོ།

जो ( मूढ़- ) श्रद्धारहित, अकृत ( = बिना बनाये = निर्वाण ) = ज्ञ ( संसार की ) संधिका छेदन करने वाला; अवकाश रहित, ( विषय- ) भोग को चमत्कर दिया नर है, वही उत्तम पुरुष है ।

The man who is not credulous, who understands the unmade ( Nirvana ), who has severed the connection, who has given up desire for a fixed home, who has become free of all desires, he, indeed, is the noblest of men.

1 བའ་མག་ ལུ་རི་བྱ ( ལུ་རི་བྱ ) རི་ མཆོག་ལྷུང་གི་  
ཡ་གྲུལ་དེ་ཡིན་ཞིང་། དེ་གཉིས་ཀྱང་ དང་པོ་སྒྲོབ་དཔོན་ཡང་དག་ཀྱལ་  
བ་ཅན་ ( བལ་ཆེད་གཅེད་ལུ་བའི་སྒྲོབ་བ ) ལས་རབ་དུ་བྱུང་བའི་འོག་དུ་  
སྒྲོབ་དཔོན་འདས་བ་ན་འཕགས་བ་དྲ་བུལ ( ལུ་སྒྲེའི་ཡ་གྲུལ ) དང་མཐུང་དེ་  
ཆོགས་བཅད་གཅིག་ཅུ་ཕྱི་ལས་བའི་བ་མཐོང་དེ་ དེ་གཉིས་རི་རིས་  
འཁོར་ཉིས་བཟུ་ལུ་བཅུ་བཅས་སྒྲོབ་བའི་སྒྲོབ་རྒྱུ་ཕྱིན་དེ་ བསྒྲོབ་བར་  
ཆོགས་ནས་དགྲ་བཅོམ་བར་གྱུར་དོ།



ग्रामे वा यदि वारञ्जे, निम्ने वा यदि वा स्थले ।  
यत्थ अरहन्तो विहरन्ति, तं भूमिरामण्यकं ॥६॥

जेतवन

( खदिरवनी ) रेवल ( थेर )

ग्रामे वा यदि वाऽऽरण्ये निम्ने वा यदि वा स्थले ।  
यत्थारहन्तो विहरन्ति सा भूमि रामणीया ॥

गुणं सुदं कं नु कं नु नु ।

सुखं सुखं नु नु कं नु नु ।

सुखं सुखं नु नु कं नु नु ।

सुखं सुखं नु नु कं नु नु ।

सुखं सुखं नु नु कं नु नु ।

गाँव में या जंगल में, निम्न वा (ऊँचे) स्थल में जहाँ (कहीं) अर्हत् (लोग)  
विहार करते हैं, वही रमणीय भूमि है ।

Delightful is that place wherever Arhats dwell, whether  
it be a village or a forest, by lake or by vale.

P 106 ( XXIX, 18 )

P 52 V 98

सुखं सुखं नु नु कं नु नु ।

सुखं सुखं नु नु कं नु नु ।

सुखं सुखं नु नु कं नु नु ।

सुखं सुखं नु नु कं नु नु ।

रमणीयानि अरञ्जानि, यत्थ न रमती जनो ।  
वीतरागा रमिस्सन्ति, न ते कामगवेसिनो ॥१७॥

जेतवन

आरण्यक भिक्षु

रमणीयान्यरण्यानि यत्र न रमते जनः ।  
वीतरागा रमन्ते न ते कामगवेषिणः ॥

गदः दुःखे वो मी दगदः वरी ।  
दगदः वः क्खसः किं क्खसः दगदः खे ।  
अददः वः हेसः सुः मी अळ्ळः वरी ।  
अददः क्खसः सुः वः दः क्खसः दगदः ।

दगदः वळ्ळः वरी खे क्खः दः ।

अदुः वदुः वरी ।

उस रमणीय वन में जहाँ ( साधारण ) जन रमण नहीं करते, काम (भोगों) के पीछे न भटकनेवाले वीतराम रमण करेंगे ।

Delightful are the forests where worldlings find no joy.  
There the passionless will rejoice, for they seek no sensual pleasures.

P 106 ( XXIX, 17 )

P 52 V 99

दगदः वरः दगदः वः सुः अः वः ।  
दः वः सुः वो मी दगदः अदः ।  
दः वः अददः क्खसः सुः वः दगदः ।  
अददः वः अळ्ळः वरः सुदः क्खसः मी ।

## ८—सहस्सवग्गो

सहस्समपि चे वाचा, अनत्थपदसंहिता :

एकं अत्थपदं श्रेयो, यं सुत्वा उपसम्मति ॥१॥

वेणुवन

तम्बदाठिक ( चोररघातक )

सहस्रमपि चेद् वाचः अनर्थपदसंहिताः ।

एकमर्थपदं श्रेयो यच्छ्रुत्त्वोपशाम्यति ॥

देवमदेकं वदामि ।

देवमदेकं वदामि वदामि वदामि ।

सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति ।

मादं विना भवति भवति भवति ।

देवमदेकं वदामि वदामि वदामि ।

व्यर्थ के पदों से युक्त सहस्रों वाक्यों से भी ( वह ) सार्थक एक पद श्रेष्ठ है, जिसे सुनकर शान्ति होती है ।

Better than a thousand utterances composed of meaningless words is one sensible word, by hearing which, one becomes pacified.

P 77 ( XXVI, 1 )

P 53 V 100

मादं विना भवति भवति भवति ।

सुखं भवति सुखं भवति सुखं भवति ।

मादं विना भवति भवति भवति ।

देवमदेकं वदामि वदामि वदामि ।

सहस्रमपि चे गाथा, अनर्थपदसंहिता ।  
एकं गाथापदं श्रेयो, यं सुत्वा उपसम्मति ॥२॥

जितवन

दारुचीरिय ( थेर )

सहस्रमपि चेद् गाथा अनर्थपदसंहिताः ।  
एकं गाथापदं श्रेयो यच्छ्रुत्वोपशाम्यति ॥

देवमेव केव कसस वसवस वृष वरि ।  
केवस सु वरु व वृष वृष वरि ।  
वृष वृष वृष वृष वृष वरि ।  
केवस वरु वृष वृष वृष वरि ।

व्यर्थ के पदों से युक्त हजार गाथाओं से भी एक गाथापद श्रेष्ठ है, जिसे सुनकर शान्ति होती है ।

Better than a thousand verses composed of meaningless words is one word of a verse by hearing which one becomes pacified.

यो च गाथा सतं भासे, अन्त्यपदसंहिता ।  
एकं धम्मपदं सेव्यो, यं सुत्वा उपसम्मति ॥३॥

यश्च गाथाशत भाषितानर्थपदसंहितम् ।  
एकं धर्मपदं श्रेयो यच्छ्रुत्वोपशाम्यति

གང་གིས་དེ་མེད་ཆོག་བསགས་བའི།  
 ཆོགས་བཅད་བརྒྱ་ལྷག་འདོན་བ་བས།  
 གང་ཞིག་ཐོས་ན་ཅེས་ཞི་བའི།  
 ཆོས་ཀྱི་ཆོགས་བཅད་གཅིག་ཙམ་མཆོག།

(जो) व्यर्थ के पदों से युक्त सौ गाथायें भी माषे, (कहे) (उससे) धर्म का एक पद भी श्रेष्ठ है, जिसे सुनकर शान्ति होती है।

Better than reciting a hundred verses composed of meaningless words is to recite one verse of Dharma by hearing which one becomes pacified.

གང་དག་ཆོས་དང་མི་ལྔ་ཆོག །  
 ཆོག་ས་བཅད་བརྒྱ་དག་རྒྱ་པ་ལས། །  
 གང་དག་ཉི་ཤར་ཞི་གུར་པའི། །  
 ཆོས་ལྔ་ཆོག་གཅིག་ཐོས་པ་ཅུང་།

यो सहस्सं सहस्सेन, सङ्ग्रामे मानुसे जिने ।  
एकं च जेय्यमत्तानं, स वे सङ्ग्रामजुत्तमो ॥४॥

यः सहस्रं सहस्रेण संग्रामे मानुषान् जयेत् ।  
एकं च जयेद् आत्मानं स वै संग्रामजिदुत्तमः ॥

झें-स्रवा-झें-गी-सि-कस-की ।  
माद-गीस-मायु-दु-सस-व-वसा ।  
वद-गी-द-मा-सु-सस-सु-सा ।  
दे-की-मायु-दु-सस-सु-व-वसा ।

संग्राम में जो हजारों हजार मनुष्यों को जीत ले, उससे एक अपने को जीतने वाला कहीं उत्तम संग्रामजित् है ।

Although one may conquer in battle a thousand thousand men, yet the greatest victor is the one who conquers himself.

P 74 ( XXIII, 3 )

P 54 V 103

माद-गी-झें-स्रवा-झें-द-गी ।  
सि-सि-मायु-दु-सस-सु-व-वसा ।  
माद-गी-वद-मा-सु-सस-सु-सा ।  
दे-की-सि-सि-मायु-दु-सस-सु-व-वसा ।

अत्ता हवे जितं सेय्यो, या चायं इतरा पजा ।  
अत्तदन्तस्स पोसस्स, निच्चं सञ्जतचारिनो ॥५॥

जितवन

अनर्थ-पुच्छक ब्राह्मण

आत्मा ह वै जितः श्रेयान् या चेयमितराः प्रजा ।  
दान्तात्मनः पुरुषस्य नित्यं संयतचारिणः ॥

सुखं सुदुखं वदंति तदा ।  
दुःखं सुखं वदंति तदा ।  
वदंति तदा सुखं वदंति तदा ।  
सुखं सुदुखं वदंति तदा ।

इन अन्य प्रजाओं के जीतने की अपेक्षा अपने को जीतना श्रेष्ठ है ।  
अपने को दमन करनेवाला, नित्य अपने को संयम करनेवाला जो पुरुष है ।

Those beings who discipline themselves, who always act with self-control, their self-conquest is indeed superior to conquest over other beings.

P 75 ( XXIII, 4 )

P 55 V 104

दुःखं सुखं वदंति तदा ।  
सुखं सुदुखं वदंति तदा ।  
वदंति तदा सुखं वदंति तदा ।  
सुखं सुदुखं वदंति तदा ।

नेव देवो न गन्धर्वो, न मारो सह ब्रह्मणा ।  
जितं अपजितं कयिरा, तथारूपस्स जन्तुनो ॥६॥

नैव देवो न गन्धर्वो न मारः सह ब्रह्मणा ।  
जितं अपजितं कुर्यात् तथारूपस्य जन्तोः ॥

ལྷ་ཡིས་མ་ཡིན་ངྷི་ཟས་མིན།      1  
བདུད་དང་ཚངས་པ་བཅས་པས་མིན།  
དེ་ལྟའི་ངང་ཚུལ་དང་ལྷན་བཤི།      1  
སྐལ་བཤི་སྤྱེས་བྱ་པས་པ་མེད།      1

इस प्रकार के प्राणी के जीते को, न देवता, न गंधर्व, न ब्रह्मा सहित मार,  
बेजीता कर सकते हैं ।

Not even a god nor a Gandharva nor Mara along with  
Brahma could turn into defeat the victory of such a one ( who  
has conquered himself ).

P 75 ( XXIII, 5 )

P 55 V 105

ལྷེས་རབ་ཀྱིས་གནས་དགེ་སྤྲོད་གིས།  
སྐལ་བར་བྱས་ལ་བདུད་དང་ནི།      1  
ཚངས་པར་བཅས་པས་པས་མི་ནུས།  
ལྷ་ཡིས་མ་ཡིན་ངྷི་ཟས་མིན།      1



मासे मासे सहस्रेन, यो यजेथ सतं समं ।  
 एकं च भावित्तानं, मुहुत्तमपि पूजये ।  
 सायेव पूजना सेव्यो, यं चे वस्ससतं हुतं ॥७॥

देणुवन

सारिपुत्त के माम

मासे मासे सहस्रेणयो यजेत शतं समान् ।  
 एकं च भावितात्मानं मुहूर्तमपि पूजयेत् ।  
 सैव पूजना श्रेयसी यच्चेद् वर्षशतं हुतम् ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

सहस्र ( -दक्षिण यज्ञ ) से जो महीने महीने सौ वर्ष तक यजन करे, और यदि परिशुद्ध मनवाले एक ( पुरुष ) को एक मुहुर्त ही पूजे; तो सौ वर्ष हवन से यह पूजा ही श्रेष्ठ है ।

Although month after month, with a thousand things, one might make sacrifice for a hundred years, yet if for only a moment one would make offering to one who truly meditates, then that would indeed be better than the century of sacrifice.

यो च वस्ससतं जन्तु, अग्निं परिचरे वने ।  
 एकं च भावितत्तानं, मुहूर्तमपि पूजये ।  
 सायेव पूजना सेय्यो, यं चे वस्ससतं हुतं ॥८॥

वेणुवन

सारिपुत्र का भांजा

यश्च वर्षशतं जन्नुरग्निं परिचरेद् वने ।  
 एकं च भावितात्मानं मुहूर्तमपि पूजयेत् ।  
 सैव पूजना श्रेयसी यच्चेद् वर्षसतं हुतम् ॥

གང་ཞིག་ལོ་ནི་བརྒྱ་ལྷག་བར།                     |  
 ཉག་ས་སྤུ་མེ་ལ་མཆོད་པ་དང་།                     |  
 གང་གིས་བསྐྱེད་པའི་བདག་ཉིད་ཅན།                     |  
 སྤྱད་ཅིག་ཅམ་ལ་མཆོད་བྱེད་ན།                     |  
 སྤྱིན་སྤྱེག་ལོ་བརྒྱ་བྱས་པ་བས།                     |  
 མཆོད་པ་དེ་ཉིད་མཆོག་ཏུ་འགྱུར།                     |

यदि प्राणी सौ वर्ष तक वन में अग्निपरिचरण (= अग्निहोत्र) करे, और यदि पशुशुद्धि मनवाले एक (पुरुष) को एक मुहूर्त ही पूजे; तो सौ वर्ष के हवन से यह पूजा ही श्रेष्ठ है।

Although for a century a man might tend the sacrifice fire in the forest, yet if for only a moment he would honour one who truly meditates this homage would be better than the sacrifices of a hundred years.

P 79 ( XXIV, 13 )

P 56 V 107

མི་ནི་ལོ་བརྒྱར་ཉག་ས་ཆལ་ན།                     |  
 མེ་ལ་ཡོངས་བདེན་གང་ཡིན་དང་།                     |  
 བདག་ཉིད་བསྐྱེད་པ་ལྷན་ཅམ་དག།                     |  
 མཆོད་པ་བྱེད་པ་གང་ཡིན་པ།                     |  
 མཆོད་བྱེད་དེ་ནི་ཆེས་ཐུང་གི།                     |  
 ལོ་བརྒྱར་སྤྱིན་སྤྱེག་བྱེད་མེ་ཐུང་།                     |

यं किञ्चि यिटुं च हुतं च लोके,  
 संवच्छरं यजेथ पुञ्जपेक्खो ।  
 सब्बं पि तं न चतुभागमेति,  
 अभिवादना उज्जुगतेसु सेय्यो ॥६॥

वेणुवन

सारिपुत्त का मित्र ब्राह्मण

यत् किञ्चिद् इष्टं च हुतं च लोके,  
 संवत्सरं यजेत पुण्यापेक्षः ।  
 सर्वमपि तत् न चतुर्भागमेति,  
 अभिवादना ऋजुगतेषु श्रेयसी ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

गणेशाय नमः ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।

पुण्य की इच्छा से जो वर्ष भर नाना प्रकार के यज्ञ और हवन को करे, तो भी वह सरलता को प्राप्त (पुरुष) के लिए की गई अभिवादना के चतुर्थांश से भी बढ़कर नहीं है ।

Whatever sacrifices or oblations a man might offer in a year in order to gain merit is altogether not worth a quarter of the superior offering of reverence shown towards one who follows the straight way.

P 81 ( XXIV, 34 )

P 57 V 108

नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।

अभिवादनसीलिस्स, निच्चं बुद्धापचायिनो ।

चत्तारो धम्मा वड्ढन्ति, आयु वण्णो सुखं बलं ॥१०॥

## अरण्यकुटी

दीधायु कुकार

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धापचारिनः ।

चत्वारि घर्मा वर्धन्ते आयुर्वर्णः सुखं बलम् ॥

ནང་གི་གཙུག་ལག་ཁང་དུ་གྱུར་བྱ་རྒྱུ་ལོ་ལོ་ལོ་ལོ། །

དྲཱ་ཏུ་གན་རབས་ལ་གུས་གྲིང་། །

ཞེས་སྐུ་པའི་ཚུལ་ཅན་ལ།

ཆེ་དང་མདངས་དང་བདེ་བ་ལྟོབས། །

ཚེས་བཞི་དག་ནི་འཕེལ་བར་འགྱུར། །\*

जो अभिवादनशील है, जो सदा वृद्धों की सेवा करनेवाला है, उसकी चार बातें ( धर्म ) बढ़ती हैं,—आयु, वर्ण, सुख और बल ।

For one who is ever inclined to honour and respect the elders, four blessings increase, lifespan, beauty, bliss and strength.

\*मनुस्मृति में—

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ।

चत्वारि संप्रवर्द्धन्ते आयुर्विद्यायशोबलम् ॥ ( २। १२१ )

ཚོགས་བཅད་འདི་འདྲ་མ་གྱི་དཔེ་བར་ཡང་བྱང་བ་ནི།

དཔག་ཏུ་གྲོག་རབས་ཉེར་བརྟེན་ཅིང་། །

ཞེ་ས་སྒྲ་བའི་ཚུལ་ཅན་ལ།

ཆེ་དང་རིག་བ་སྒྲུན་བྲགས་སྟོབས། །

ཆོས་བཞི་དག་ནི་ཡང་དག་འཕེལ། །

॥ ॐ नमः ॥

यो च वस्ससतं जीवे, दुस्सोलो असमाहितो ।

एकाहं जीवितं सेय्यो, सीलवन्तस्स ज्ञायिनो ॥११॥

जेतवन

संकिच्च (= सांकृत्य) सामणेर

यश्च वर्षशतं जीवेद् दुःशीलोऽसमाहितः ।

एकाहं जीवितं श्रेयः शीलवतो ध्यायितः ॥

कुपुं पुनं कंयं पुनं कंयं अरे । ।

कुपुं अकंयं मज्झं वरं मं अरेणं वा ।

अं वकुं पुनं पुनं अकंयं वं असा । ।

कुपुं म्मिस्सं अकंयं वरं मं अरेणं वा ।

अं मं अरेणं अं अकंयं वं अकंयं । ।

दुराचारी और एकाग्रचित्तताविरहित (= असमाहित) के सौ वर्ष के जीने से भी सदाचारी और ध्यानी का एक दिन का जीवन श्रेष्ठ है ।

Though one might live for a hundred years, immoral and uncontrolled, yet better than this would be a life of one day that was virtuous and meditative.

P 78 (XXIV, 3)

P 59 V 110

कुपुं अकंयं मज्झं वरं मं अरेणं वा ।

अं वकुं पुनं पुनं अकंयं वं असा । ।

कुपुं म्मिस्सं अकंयं वरं मं अरेणं वा ।

अं मं अरेणं अं अकंयं वं अकंयं । ।

यो च वस्ससतं जीवे, दुप्पञ्चो असमाहितो ।  
एकाहं जीवितं सेय्यो, पञ्चवन्तस्स जायिनो ॥१२॥

जैतवन

कोण्डब्ब ( थेर )

यश्च वर्षशतं जीवेद् दुष्प्रज्ञोऽसमाहिताः ।  
एकाहं जीवितं श्रेयः प्रज्ञावतो ध्यायिनः ॥

येसं अकमं मत्तमं वरं सै अइवां वा ।  
अं वत्तुं दवां दुं अक्कं वं वसा ।  
येसं रवं उक्कं वत्तुं वसमं वा दवं वा ।  
उक्कं वत्तुं वत्तुं अक्कं वं मत्तं वा ।

दुष्प्रज्ञ और असमाहित के सौ वर्ष के जीने से भी प्रज्ञावान् और ध्यानी का एक दिन का जीवन श्रेष्ठ है ।

Though one might live for a hundred years, with no knowledge and no control, yet better than this would be a life of one day that was wise and meditative.

P 78 ( XXIV, 5 )

P 59 V 111

येसं अकमं मत्तमं वरं स वत्तुं वा ।  
अं वत्तुं दवां वत्तुं वत्तुं अक्कं वं वसा ।  
येसं रवं उक्कं वत्तुं मत्तमं वत्तुं वा ।  
उक्कं वत्तुं वत्तुं अक्कं वं मत्तं वा ।

यो च वस्ससतं जीवे, कुसोतो हीनवीरियो ।  
एकाहं जीवितं सेय्यो, विरियमारमतो दहं ॥१३॥

यश्च वर्षशतं जीवेत् कुसीदो हीनवीर्यः ।  
एकाहं जीवितं श्रेयो वीर्यमारमतो दृढम् ॥

བཙོན་འགྲུས་དཔལ་ཞིང་ལེ་ལོ་ཅན། །  
ལོ་བརྒྱ་དག་དུ་འཚོ་བ་ལས། །  
བཙོན་འགྲུས་ཚུམ་པའི་བདུན་པ་ཅན། །  
ཉི་མ་གཅིག་ལ་འཚོ་བ་མཆོག། །

आलसी और अनुद्योगी के सौ वर्ष के जीवन से दृढ़ उद्योग करनेवाले के  
जीवन का एक दिन श्रेष्ठ है ।

Though one might live for a hundred years, dull and  
inert, yet better than this would be a life of one day in which  
one strove with diligence.

P 78 ( XXIV 4 )

P 60 V 112

བཙོན་མེད་ལེ་ལོ་ལྷན་པ་དག། །  
ལོ་བརྒྱར་གསོན་པ་གང་ཡིན་བས། །  
བཙོན་འགྲུས་བདུན་པ་བཙུམས་པ་དག། །  
ཉིན་གྲག་འགར་ཞིག་གསོན་པ་རྒྱུ་། །

यो च वस्ससतो जीवे, अपस्सं उदयब्बयं ।

एकाहं जीवितं सेय्यो, पस्सतो उदयब्बयं ॥१४॥

जैतवन

पटाचारा ( थेरी )

यश्च वर्षशतं जीवे अपस्सं उदयव्ययम् ।

एकाहं जीवितं सेय्यो पस्सतो उदयव्ययम् ॥

सुत्तेज्जिद्वन्द्ववसिसेसव ॥ १

अवसुन्दवन्द्ववसिसेसव ॥ १

सुत्तेज्जिद्वन्द्ववसिसेसव ॥ १

सुत्तेज्जिद्वन्द्ववसिसेसव ॥ १

(संसार में वस्तुओं के) उत्पत्ति और विनाश का न ख्याल करने के सौ वर्ष के जीवन से उत्पत्ति और विनाश का ख्याल करने वाले का एक दिन श्रेष्ठ है ।

Though one might live for a hundred years, without seeing the arising and passing, yet better than this would be a life of one day in which one saw the rise and fall. ( of the Five Aggregates, namely the impermanence of all conditioned things).

P 78 ( XXIV. 6 )

P 60 V 113

सुत्तेज्जिद्वन्द्ववसिसेसव ॥ १

अवसुन्दवन्द्ववसिसेसव ॥ १

सुत्तेज्जिद्वन्द्ववसिसेसव ॥ १

सुत्तेज्जिद्वन्द्ववसिसेसव ॥ १



यो च वस्ससतं जीवै, अपस्सं अमर्तं पदं ।  
एकाहं जीवितं सेत्थो, पस्सतो अमर्तं पदं ॥१५॥

जैतवन

किसागोतम

यश्च वर्षशतं जीवेद् अपश्यन् अमृतं पदम् ।  
एकाहं जीवितं श्रेयः पश्यतोऽमृतं पदम् ॥

བདུད་རྩི་གོ་འཕང་མ་མཐོང་བ། །  
ལོ་བརྒྱ་དག་དུ་འཚོ་བ་ལས། །  
བདུད་རྩི་གོ་འཕང་མཐོང་བ་ནི། །  
རྩི་མ་གཅིག་ལ་འཚོ་བ་མཆོག་ །

अमृतपद ( = दुःखनिर्वाण ) को न ख्याल करने के सौ वर्ष के जीवन से,  
अमृतपद को देखनेवाले जीवन का एक दिन श्रेष्ठ है ।

Though one might live for a hundred years, without  
seeing the Undying Stage, yet better than this would be a life  
of one day in which one saw the Undying Stage.

P 79 ( XXIV )

P 61 V 114

འཚོ་མེད་གོ་འཕང་མ་མཐོང་བ། །  
ལོ་བརྒྱ་དག་གསོན་བ་གང་ཡིན་ལས། །  
འཚོ་མེད་གོ་འཕང་མཐོང་བ་དག །  
རྩི་གཅིག་ལ་འཚོ་བ་མཆོག་ལ་རྒྱུང་། །

यो च वस्ससतं जीवे, अपस्सं धम्ममुत्तमं ।  
एकाहं जीवितं सेय्यो. पस्सतो धम्ममुत्तमं ॥१६॥

जेतवन

बहुपुत्तिका ( थेरो )

यश्च वर्षशतं जीवेदपश्यन् धर्ममुत्तमम् ।  
एकाहं जीवितं श्रेयः पश्यतो धर्ममुत्तमम् ॥

कसं ग्गिंमकंवांकेमंमव्वेदंवर । ।

अंमकुंरुवांरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुं । ।

कसं ग्गिंमकंवांकेमंमव्वेदंवर । ।

केमंमकुंरुवांरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुं । ।

रुंरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुंरुं । ।

उत्तम धर्म को न देखने के सौ वर्ष के जीवन से, उत्तम धर्म के देखनेवाले के जीवन का एक दिन श्रेष्ठ है ।

Though one might live for a hundred years, without understanding the supreme Dharma, yet better than this would be a life of one day in which one understood the supreme Dharma.

## ६—पापवर्गा

अभित्यरेथ कल्याणे, पापा चित्तं निवारये ।

दग्धं हि करोतो पुञ्जं, पापस्मिं रमती मनो ॥१॥

जेतवन

( चूल ) एकसाटक ( ब्राह्मण )

अभित्वरेत कल्याणे पापात् चित्तं निवारयेत् ।

तद्रितं हि कुर्वतः पुण्यं पापे रमते मनः ॥

सुखं भुङ्क्ते कल्यणं पापात् चित्तं निवारयेत् ।

दग्धं हि करोतो पुञ्जं, पापस्मिं रमती मनो ॥१॥

सुखं भुङ्क्ते कल्यणं पापात् चित्तं निवारयेत् ।

दग्धं हि करोतो पुञ्जं, पापस्मिं रमती मनो ॥१॥

सुखं भुङ्क्ते कल्यणं पापात् चित्तं निवारयेत् ।

पुण्य ( कर्मों में ) जल्दी करे, पाप से चित्त को निवारण करे, पुण्य की धीमी गति से करने पर चित्त पाप में रत होने लगता है ।

Make haste in doing good and check your mind from evil, for the mind of one who is slow to gain merit, delights in evil.

P 100 ( XXVIII, 23 )

P 62 V 116

सुखं भुङ्क्ते कल्यणं पापात् चित्तं निवारयेत् ।

दग्धं हि करोतो पुञ्जं, पापस्मिं रमती मनो ॥१॥

सुखं भुङ्क्ते कल्यणं पापात् चित्तं निवारयेत् ।

दग्धं हि करोतो पुञ्जं, पापस्मिं रमती मनो ॥१॥

पापं चे पुरिसो कयिरा, न नं कयिरा पुनप्पुनं ।  
न तम्हि छन्दं कयिराथ, दुक्खो पापस्स उच्चयो ॥२॥

जैतवन

सेय्यसक ( थेर )

पाप चेत् पुष्पः कुर्यात् न तत् कुर्यात् पुनः पुनः ।  
न तस्मिं छन्दं कुर्यात्, दुःख पापस्य उच्चयः ॥

स्त्रेसं सुसं वक्कुं लं स्त्रेणं सुसं गुदं ।      ।  
अदं ददं अदं दुं दें सें गु ।      ।  
दें लं ददुं वदं सें गुं स्त्रे ।      ।  
वसणसं वदें स्त्रेणं वं सुणं वसुलं ३९ ।      ।

यदि पुरुष ( कभी ) पापकर डाले, तो उसे पुनः पुनः न करे, उसमे रत न होवे, ( क्योंकि ) पाप का संचय दुःख ( का कारण ) होता है ।

Should a person commit evil, let him not do it again and again. He should not take pleasure in it for painful is the accumulation of evil.

P 100 ( XXVIII, 21 )

P 62 V 117

स्त्रेणं वं सुणं वसुलं सेंणसं वसं ण ।  
दें लं ददुं वदं सें गुं ।      ।  
वक्कुं लं स्त्रेणं वं सुसं णं अदं ।      ।  
अदं ददं अदं दुं दें सें गु ।      ।

पुञ्जं चे पुरिसो कयिरा, कयिरा नं पुनप्पुनं ।  
तस्मिं छन्दं कयिराथ, सुखो पुञ्जस्स उच्चयो ॥३॥

जेतवन

लाजदेव की कन्या

पुण्यं चेत् पुरुषः कुर्यात्, कुर्यात् एतत् पुनः पुनः ।  
तस्मिं छन्दं कुर्यात् सुखः पुण्यस्य उच्चयः ॥

སྒྲེས་བྱས་བསོད་ནམས་བྱེད་བ་ན། ।  
ཡང་དང་ཡང་དུ་དེ་དག་བྱ། ।  
དེ་ལ་འདུན་བར་བྱ་བ་སྒྲེ། ।  
དག་བའི་སྤང་བོ་བདེ་བ་ཉིད། ।

यदि पुरुष पुण्य करे तो, उसे पुनः पुनः करे, उसमें रत होवे, ( क्योंकि )  
पुण्य का संचय सुखकर होता है ।

Should a person perform good, let him do it again  
and again, he should take pleasure in it, for blissfull is the  
accumulation of good.

P 100 ( XXVIII, 22 )

P 63 V 118

བསོད་ནམས་བདེ་བ་སྒྲེས་བས་ན།  
དེ་ཉིད་ལ་ནི་དག་བར་བྱ། ।  
གལ་དེ་བསོད་ནམས་བྱས་ན་ཡང་། ।  
དེ་ནི་ཡང་དང་ཡང་དུ་བྱ། ।

पापोऽपि पस्सति भद्रं, याव पापं न पच्वति ।

यदा च पच्वति पापं, अथ पापो पापानि पस्सति ॥४॥

जेतवन

अनाथपिण्डक ( सेठ )

पापोऽपि पश्यति भद्रं यावत् पापं न पच्यते ।

यदा च पच्यते पापं अथ पापानि पश्यति ॥

ཀྱུ་ཤེད་ཚལ་དུ་མགོན་མེད་ཟས་སྦྱིན་ལའོ་<sup>1</sup>।

ཇི་སྒྲིད་སྒྲིག་པ་སྦྱིན་གྱི་བར། ।

སྒྲིག་ཅན་ཡིན་ཡང་བཟང་བོར་མགྲོང་། ।

གང་ཆོ་སྒྲིག་པ་སྦྱིན་གྱུར་བ། ।

དེའི་ཆོ་སྒྲིག་པ་ཅན་རྣམས་མགྲོང་། ।

पापी भी तब तक भला ही देखता है, जब तक कि पाप का विपाक नहीं होता; जब पाप का विपाक होता है; तब ( उसे ) पाप दिखाई पड़ने लगता है ।

Even an evil-doer sees happiness, as long as his evil deed does not ripen. But when it bears fruit, then he sees the evil results.

P 100 ( XXVIII, 19 )

P 63 V 119

ཇི་སྒྲིད་སྒྲིག་པ་མ་སྦྱིན་པ། ।

དེ་སྒྲིད་སྒྲིག་པ་ཅང་བར་ལྟ། ।

གང་ཆོ་སྒྲིག་པ་སྦྱིན་གྱུར་པ། ।

དེ་ཆོ་སྒྲིག་པ་མགྲོང་བར་འགྱུར། ।

1 ཁྱིམ་བདག་ མགོན་མེད་ཟས་སྦྱིན་ནི་ ཅུང་ཅུ་ནས་ཁྱིམ་གྱི་ཇི་བོར་  
གྱུར་དེ་ མགོན་མེད་དབུལ་བོ་མང་བོར་གོས་ཟས་སྦྱིན་གྱིས་ཆོས་པར་  
ཤེད་པས་ན་ མིང་མགོན་མེད་ཟས་སྦྱིན་དུ་བདག་སོ།

भद्रोऽपि पश्यति पापं, याव भद्रं न पच्यते ।  
यदा च पच्यते भद्रं, अथ भद्राणि पश्यति ॥५॥

भद्रोऽपि पश्यति पापं यावद् भद्रं न पच्यते ।  
यदा च पच्यते भद्रं अथ भद्राणि पश्यति ॥

ॐ श्रीं वज्रं पद्मे श्रीं वज्रं ।  
वज्रं पद्मे श्रीं वज्रं पद्मे ॥  
वज्रं पद्मे श्रीं वज्रं पद्मे ।  
ॐ वज्रं पद्मे श्रीं वज्रं पद्मे ॥

भद्र ( पुण्य करने वाला पुरुष ) भी तब तक पाप को देखता है, जब तक कि पुण्य का विपाक नहीं होने लगता; जब पुण्य का विपाक होने लगता है, तो पुण्यों को देखने लगता है ।

Even a good person sees evil until his good deeds ripen.  
But when they bear fruit, then he sees the happy results.

P 100 ( XXVIII, 20 )

P 64 V 120

ॐ श्रीं वज्रं पद्मे श्रीं वज्रं पद्मे ।  
ॐ श्रीं वज्रं पद्मे श्रीं वज्रं पद्मे ॥  
वज्रं पद्मे श्रीं वज्रं पद्मे ।  
ॐ वज्रं पद्मे श्रीं वज्रं पद्मे ॥

माप्पमञ्जेथ पापस्स, न मन्तं आगमिस्सति ।  
 उदविन्दुनिपातेन, उदकुम्भो पि पूरति ।  
 बालो पूरति पापस्स, थोकथोकम्पि आचिनं ॥६॥

जैतवन

असंयमी ( भिक्षु )

माऽवमन्येत् पापं न मां तद् आगमिष्यति ।  
 उदविन्दुनिपातेन उदकुम्भोऽपि पूर्यते ।  
 बालः पूरयति पापं स्तोकं स्तोकमप्याचिन्वन् ॥

བདག་ལ་དེ་ཡིས་ཅི་གནད་ཅེས། ।

སྒྲིག་བ་ལ་ནི་བརྒྱུ་མི་བྱ། ।

ཅུ་ཡི་བྲིག་བ་བབས་བ་ཡིས། ।

ཅུ་བྱས་ནི་དྲུང་གང་བར་འགྱུར། ।

ཅུང་ཟད་ཅུང་ཟད་བསགས་བ་ཡིས། ।

སྒྲིག་བ་སྒྲིག་བས་གང་བར་འགྱུར། ।

“वह मेरे पास नहीं आएगा” ऐसा ( सोच ) पाप की अवहेलना न करे ।  
 पानी की बूंद के गिरने से घड़ा भर जाता है ( ऐसे ही ) मूर्ख थोड़ा थोड़ा संचय  
 करते पाप को भर लेता है ।

‘Think not lightly of evil, saying “Misfortune will not come to me.” Even as a water-jar is filled by the falling of drips, so the fool gathering little by little, fills himself with evil.

P 5 ( XVII, 5 )

P 64 V 121

སྒྲིག་བ་ཅུང་བྱས་བདག་ནི་དྲུ། ।

སྒྲི་བཞིན་མི་འོང་ས་སེམས་ཤིག། ।

ཅུ་ཡི་བྲིག་བ་ཅུང་བ་ཡིས། ।

བྱས་ཆེན་གང་བ་ཇི་བཞིན་དུ། ।

ཅུང་ཟད་ཅུང་ཟད་བསགས་བ་ཡི། ।

དག་བས་བརྒྱུ་བ་གང་བར་འགྱུར། ।



माप्पमञ्जेथ पुञ्जस्स, न मन्तं आगमिस्सति ।  
उदबिन्दुनिपातेन, उदकुम्भो पि पूरति ।  
धीरो पूरति पुञ्जस्स, थोकथोकम्पि आचिनं ॥७॥

## जेतवन

विलालपाद ( सेठ )

माऽवमन्येत पुण्यं न मां तद् आगमिष्याति ।  
उदविन्दुनिपातेन उदकुम्भोऽपि पूर्यते ।  
धोरः पूरयतिपुण्यं स्तोकं स्तोकमप्याचिन्वन् ॥

བདག་ལ་རི་ཡིས་ཅི་པན་ཞེས།  
བསོད་ནམས་ལ་ནི་བརྒྱས་མི་ང།  
རྒྱ་ཡི་ཐིག་པ་འབབ་པ་ཡིས།  
རྒྱ་བྱས་ནི་དྲུང་གང་བར་འགྱུར།  
རྒྱང་ཟད་རྒྱང་ཟད་བསགས་པ་ཡིས།  
མཁས་བས་བསོད་ནམས་རྫོགས་བར་འགྱུར།

“वह मेरे पास नहीं आएगा”—ऐसा (सोच) पुण्य की अवहेलना न करे। पानी की बँद गिरने से घड़ा भर जाता है। धीरे थोड़ा थोड़ा पुण्य संचय कर पात्र भर लेता है।

Think not lightly of good, saying "The benefit will not come to me." Even as a water-jar is filled by the falling of drips, so the wise man gathering little by little, fills himself with good.

P 57 ( XVII, 6 )

P 65 V 122

དག་པ་ཅུང་ལུས་བདག་ཉིད་ཀྱི།  
 ལྷི་བཞིན་མི་འོང་མ་སེམས་ཤིག།  
 ཅུ་ཡི་ཤིག་པ་ལྷུང་བ་ཡིས།  
 ལུས་ཆེན་གང་བ་ཇི་བཞིན་དུ།  
 ཅུང་ཟད་ཅུང་ཟད་བསགས་པ་ཡི།  
 དག་པས་བརྟན་པ་གང་བར་འགྱུར།

वाणिजो व भयं मगं, अप्सत्थो महद्धनो ।

विसं जीवितुकामो व, पापानि परिवज्जये ॥८॥

जेतवन

महाधान ( सेठ )

वाणिजो व भयं मार्गं अल्पसार्थो महाधनः ।

विषं जीवितुकाम इव पापानि परिवर्जयेत् ॥

गुणं भुवः कथं नु क्खं वः अरे ।

क्खं क्खं क्खं वः गुणं नु वः ।

अद्विगलं वः अद्विगलं वः अद्विगलं वः ।

अद्विगलं वः अद्विगलं वः अद्विगलं वः ।

अद्विगलं वः अद्विगलं वः अद्विगलं वः ।

थोड़े काफिले और महाधनवाला बनजारा जैसे भययुक्त रास्ते को छोड़ देता है, ( अथवा ) जीने की इच्छावाला पुरुष जैसे विष को ( छोड़ देता है ) वैसे ही ( पुरुष ) पापों को छोड़ देता है ।

Just as a merchant with a small escort and great wealth avoids a perilous way, or just as one desiring to live avoids poison, even so should one shun evil.

P 99 ( XXVIII, 14 )

P 65 V 123

क्खं क्खं क्खं वः गुणं नु वः ।

क्खं वः अद्विगलं वः अद्विगलं वः ।

अद्विगलं वः अद्विगलं वः अद्विगलं वः ।

अद्विगलं वः अद्विगलं वः अद्विगलं वः ।

पाणिमिह चे व्रणो नास्स, हरेय्य पाणिना विसं ।  
नाब्बणं विसमन्वेति, नत्थि पापं अकुब्बता ॥६॥

वेणुवन

कुक्कुटमिच्छ

पाणौ चेद व्रणो न स्याद हरेत् पाणिना विषम् ।  
नाऽव्रणं विषमन्वेति, नास्ति पाप अकुवतः ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

यदि हाथ में घाव न हो, तो हाथ से विष को लेले (क्योंकि) घाव (=व्रण)  
-रहित ( शरीर में ) विष नहीं लगता; ( इसी प्रकार ) न करनेवाले को पाप  
नहीं लगता ।

If there is no wound in the hand, one may carry poison  
in it. Poison does not affect one who is free from wounds.  
No evil befalls him who does no evil.

P 99 ( XXVIII, 15 )

P 66 V 124

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

यो अप्यदुष्टस्त नरस्य दुस्सति,  
 सुद्धस्त पोसस्त अनङ्गणस्त ।  
 तमेव बालं पच्चेति पापं,  
 सुखुमो रजो पटिवातं व खित्तो ॥१०॥

जैतवन

कोक ( कुत्ते का शिकारी )

योऽल्पदृष्टाय नरान दुष्यति  
 शुद्धाय पुरुषायाऽनङ्गणाय ।  
 तमेव बालं प्रत्येति पापं, सूक्ष्मो  
 रजः प्रतिवातमिव क्षिप्तम् ॥

ལྷན་པའི་ཆུང་མ་རྒྱུ་ལོ།

ནམ་དག་བསྐྱད་ཀ་མེད་པའི་སྒྲིམ་སྒྲ་དང་། །  
 ཉེས་ཐུང་མེ་ལ་སྒྲ་ཡིས་གཞོན་བྱས་པ། །  
 རྒྱུ་ལོ་ལྷན་པའི་ཆུང་མ་རྒྱུ་ལོ་ལྷན་པའི་ཆུང་མ་རྒྱུ་ལོ། །  
 ལྷན་པའི་ཆུང་མ་རྒྱུ་ལོ་ལྷན་པའི་ཆུང་མ་རྒྱུ་ལོ། །

जो दोषरहित शुद्ध निर्मल पुरुष को दोष लगाता है, उसी अज्ञ को (उसका)  
 पाम लौटकर लगता है, ( जैसे कि ) सूक्ष्म धूलि को हवा के आने के रख फेंकने से  
 ( वह फेंकने वाले पर पड़ती है ) ।

Whoever offends a harmless man, pure and faultless,  
 upon that very fool the evil recoils, like fine dust thrown  
 against the wind.

P 98 ( XXVIII, 9 )

P 66 V 125

གང་ཞིག་སྒྲིམ་སྒྲ་དག་ཅིང་ཉོན་མོངས་མེད། །  
 རབ་དྲུ་སྒྲ་མེད་མི་ལ་སྒྲིམ་སྒྲ་ལོ། །  
 ལྷན་པའི་ཆུང་མ་རྒྱུ་ལོ་ལྷན་པའི་ཆུང་མ་རྒྱུ་ལོ། །  
 རྒྱུ་ལོ་ལྷན་པའི་ཆུང་མ་རྒྱུ་ལོ་ལྷན་པའི་ཆུང་མ་རྒྱུ་ལོ། །

गर्भमेके उत्पज्जन्ति, निरयं पापकम्मिनो ।

सगं सुगतिनो यन्ति, परिनिब्बन्ति अनासवा ॥११॥

जैतवन

( माणिकार कुलूपग ) तिरस ( थेर )

गर्भमेक उत्पद्यन्ते, निरयं पापकम्मिणः ।

स्वर्गं सुगतयो यान्ति, परिनिर्वान्त्यनासवाः ॥

अमं कुमं यत् ।

अमं कुमं यत् ।

अमं कुमं यत् ।

अमं कुमं यत् ।

अमं कुमं यत् ।

कोई (पुरुष) गर्भ में उत्पन्न होता है, (कोई) पाप कर्मा नरक में (जाते हैं)  
कोई ( सुगतिवाले पुरुष ) स्वर्ग को जाते हैं; ( और चित्त के ) मलों से रहित  
( पुरुष ) निर्वाण को प्राप्त होते हैं ।

Some are born in a womb ( i. e. into this world ), the  
wicked are born in hell, the pious go to heaven and these free  
of the corrupting taints pass into Nirvana.

P 4 ( I, 22 )

P 67 V 126

अमं कुमं यत् ।

अमं कुमं यत् ।

अमं कुमं यत् ।

अमं कुमं यत् ।

न अन्तलिक्खे न समुद्धमज्जे,  
 न पव्वतानं विवरं पविस्स ।  
 न विज्जती सो जगतिप्पदेसा,  
 यत्थद्वितो मुच्चेय्य पापकम्मा ॥१२॥

जेतवन

तीन भिक्षु

नान्तरिक्षे न समुद्रमध्ये  
 न पर्वतानां विवरं प्रविश्य ।  
 न विद्यते स जगति प्रदेशो  
 यत्रस्थितो मुच्येत पापकर्मणः ॥

དག་སྒོང་གསུམ་ལོ།

གང་དུ་སྒྲིག་པའི་མས་ཀྱིས་མི་ཚུགས་པའི། ।  
 ས་ཕྱོགས་དེ་ནི་ཡོད་པ་མ་ཡིན་དེ། ।  
 བར་སྒྲང་ལ་མེད་ཀྱི་མཆོད་དེ་དབུས་སུ་མེད། ।  
 རི་བོ་དེ་སུམ་དང་བྲག་གི་ཁོངས་སུ་མེད། ।

न आकाश में न समुद्र के मध्य में न पर्वतों के विवर में प्रवेश कर—संतार  
 में कोई स्थान नहीं है जहाँ रहकर—पाप कर्मों के (फल से) (प्राणी) बच सके ।

Neither in the sky, nor in mid-ocean, nor by entering a  
 mountain cave, is found that place on earth where, by abiding,  
 one may escape ( the consequences of ) an evil deed.

P 33 ( IX, 5 )

P 67 V 127

གང་དུ་གནས་ན་ལས་ཀྱི་མི་ཚུགས་པའི། ।  
 ས་ཕྱོགས་དེ་ནི་ཡོད་པ་མ་ཡིན་དེ། ।  
 བར་སྒྲང་ལ་མེད་ཀྱི་མཆོད་དེ་ནང་ན་མེད། ।  
 རི་བོ་ནམས་ཀྱི་གསེབ་དུ་ཚུགས་ཀྱང་མིན། ।

न अन्तलिक्खे न समुद्धमज्जे,  
 न पव्वतानं विवरं पविस्स ।  
 न विज्जती सो जगतिप्पदेसो,  
 यत्थट्ठितं नप्पसहेत्थमच्चु ॥१३॥

कपिलवस्तु ( न्यग्रोधाराम )

सुप्पबुद्ध ( शाक्य )

नान्तरिक्षे न समुद्रमध्ये  
 न पर्वतानां विवरं प्रविश्य ।  
 न विद्यते स जगति प्रदेशो  
 यत्रस्थितं न प्रसहेत मृत्युः ॥

कु.वा.हुदि.दोक्ख.व.अ.वेण.स.व.व.स.द.अ.दो.  
 वा.दु.वा.स.व.अ.के.व.स.सि.हु.वा.स.दो. ।  
 स.हु.वा.स.दे.वे.अ.द.व.स.अ.वे.दो. ।  
 व.स.हु.व.अ.वे.द.हु.स.के.दे.द.व.स.सु.वे.दो. ।  
 दे.वे.दे.सु.अ.द.व.वा.वा.हि.द.स.सु.वे.दो. ।

ह्री.वा.व.दे.ह्री.के.दो. । अ.दु.द.वा.व.दे.॥

न आकाश में न समुद्र के मध्य में न पर्वतों के विवर में प्रवेश कर—संसार में कोई स्थान नहीं है, जहाँ रहने वाले को मृत्यु न सतावे ।

Neither in the sky, nor in mid-ocean, nor by entering a mountain cave, is found that place on earth where, by abiding, one will not be overcome by death.

P 4 ( I, 24 )

P 68 V 128

वा.दु.वा.स.व.अ.के.व.स.सि.हु.वा.स.दो. ।  
 स.हु.वा.स.दे.वे.अ.द.व.स.अ.वे.दो. ।  
 व.स.हु.व.अ.वे.द.हु.स.के.दे.द.व.स.सु.वे.दो. ।  
 दे.वे.दे.सु.अ.द.व.वा.वा.हि.द.स.सु.वे.दो. ।

## १०—दण्डवग्गे

सब्बे तसन्ति दण्डस्स, सब्बे भायन्ति मच्चुनो ।  
अत्तानं उपमं कत्वा, न हनेय्य न घातये ॥१॥

जेतवन

छव्वग्गिय ( भिक्षु )

सर्वे त्रस्यन्ति दण्डात् सर्वे विभ्यति मृत्योः ।  
आत्मानं उपमां कृत्वा न हन्यात् न घातयेत् ॥

सुयं सुदं ऊयं दुदुवा सुं १ यं वा सुदं स य ।

ऊयं यं यं किं सुदं सुदं सुदं ॥

ऊयं यं यं किं सुदं सुदं सुदं ॥

ऊयं सुदं यं किं सुदं सुदं सुदं ॥

ऊयं सुदं यं सुदं सुदं सुदं सुदं ॥

दण्ड से सभी डरते हैं, मृत्यु से सभी भीत होते हैं, अपने समान ( इन बातों को ) जानकर न मारे न मारने की प्रेरणा करे ।

All beings tremble at punishment, all fear death, Likening others to oneself, one should neither kill nor cause to kill.



सबै तसन्ति दण्डस, सबैसं जोवितं पियं ।

अत्तानं उपमं क्त्वा, न हनेय्य न घातये ॥२॥

## जेतवन

षट्वर्गीय ( भिक्षु )

सर्वं त्रस्यन्ति दण्डात् सर्वेषां जीवितं प्रियम् ।

आत्मानं उपमां कृत्वा न हन्यात् न घातयेत् ॥

ཅད་པ་ལ་ནི་བྲམས་ཅད་སྒྲག

གསོན་པ་ལ་ཞི་བམས་ཅད་དགའ།

རང་ཉིད་ལ་ནི་དབ ལོངས་ལ།

ཡེ་ཤེད་ཡར་མ་ཡུར་པ་མེད་མེད་ཀྱི་།

सभी दण्ड से डरते हैं, सबको जीवन प्रिय है, ( इसे ) अपने समान जानकर न मारे न मारने की प्रेरणा करे ।

All beings tremble at punishment, to all life is dear.  
Likening others to oneself, one should neither kill nor cause  
to kill.

P 23 ( V, 19 )

P 69 V 130

ཐམས་ཅད་ལ་ཡང་སྟོག་ནི་སྟབས་

ཐམས་ཅད་ཆད་པས་འཛིགས་པས་ན།

རང་གི་ཉམས་ལ་དབག་གྱིས་དེ།

བདེག་པར་མི་བྱ་བསང་མི་བྱ།

- [illegible]

सुखकामानि भूतानि, यो दण्डेन विहिंसति ।

अतनो सुखमेसानो, पेच्च सो न लभते सुखं ॥३॥

जेलवन

बहुत से लड़के

सुखकामानि भूतानि यो दण्डेन न विहिनस्ति ।

आत्मनः सुखमन्विष्य प्रेत्य स न लभते सुखम् ॥

རང་གི་བདེ་བ་བཅུ་ནས་མི། ।

བདེ་བ་འདོད་པའི་མི་ནམས་ལ། ।

ཆད་པ་གཅོད་པར་བྱེད་པ་དེ། ।

ཕྱི་མར་བདེ་བ་འཕྲོག་མི་འགྲུང། ।

सुख चाहने वाले प्राणियों को, अपने सुख की चाह से जो दूसरों को झड़ देता है, वह मरकर सुख नहीं पाता ।

When he who seeks his own happiness inflicts pain ( literally "strikes with a stick" ) on beings who ( like himself ) are desirous of happiness, he does not obtain happiness after death.

P 113 ( XXX, 3 )

P 70 V 131

བདེ་བ་འདོད་ཕྱིར་འབྱུང་གི་ལ། ।

གང་ཞིག་འཆོ་ཞིང་ཆད་པས་གཅོད། ।

བདག་གི་བདེ་བ་འདོད་པ་དེ། ।

ཕ་རྒྱལ་དུ་ནི་བདེ་མི་འགྲུང། ।

सुखकामानि भूतानि, यो दण्डेन न हिंसति ।  
अत्तनो सुखमेसानो, पेच्च सो लभते सुखं ॥४॥

सुखकामानि भूतानि यो दण्डेन न हिनस्ति ।  
आत्मनः सुखमन्विष्य प्रेत्य स लभते सुखम् ॥

རང་གི་བདེ་བ་བཅའ་ནས་ཀྱང་། །  
བདེ་བ་འདོད་པའི་མི་ནམས་ལ། །  
ཆད་པ་གཅོད་བར་མི་བྱེད་ན། །  
ཕྱི་སར་བདེ་བ་འབྲོབ་བར་འགྱུར། །

सुख चाहने वाले प्राणियों को, अपने सुख की चाह से जो दण्ड से नहीं मारता, वह मरकर सुख को प्राप्त होता है ।

When he who seeks his own happiness does not inflict pain ( "strike with a stick" ) on beings who ( like himself ) are desirous of happiness, he obtains happiness after death.

P 113 ( XXX, 4 )

P 70 V 132

གང་ཞིག་བདེ་བ་འདོད་པ་དག །  
འགྱུར་བོ་ལ་ནི་མི་འཆོ་ཞིང་། །  
ཆད་པས་མི་གཅོད་བདེ་འདོད་པ། །  
དེ་དག་པ་རྒྱལ་བདེ་བ་བྲོབ། །

मावोच परुषं कञ्चि, वृत्ता पटिवदेयु तं ।  
दुःखा हि सारम्भकथा, पटिदण्डा फुसेय्यु तं ॥५॥

जितवन

कुण्डधान ( थेर )

मा वोचः परुषं किञ्चिद् उक्ताः प्रति वदेयुस्त्वाम् ।  
दुःखा हि संरम्भकथाः प्रतिदण्डाः स्वशेयुस्त्वाम् ॥

शुभं भूयः कथं नृपे ।

कौण्डिन्यः कुप्यतेऽप्यन्यथा ।

तुं यः क्षुब्धः सति यः क्षुब्धः सति ।

तः सति यः सति यः क्षुब्धः सति ।

तुं यः सति यः क्षुब्धः सति ।

कठोर बचन न बोलो; बोलने पर ( दूसरे भी वैसे ही ) तुम्हें बोलेंगे,  
दुर्वचन दुःखदायक ( होते हैं ), ( बोलने से ) बदले में तुम्हें दण्ड मिलेगा ।

Do not speak harshly to anyone. Those who are spoken to will answer you ( in the same way ). Since angry words are painful, retaliation will touch you.

P 86 ( XXVI, 3 )

P 71 V 133

कौण्डिन्यः कुप्यतेऽप्यन्यथा ।

क्षुब्धः सति यः क्षुब्धः सति ।

तः सति यः सति यः क्षुब्धः सति ।

तुं यः सति यः क्षुब्धः सति ।

सचे नेरेसि अत्तानं, कंसो उपहतो यथा ।  
 एस पत्तोसि निब्बानं, सारम्भो ते न विज्जति ॥६॥

स चेत् नेरयमि आत्मानं कांस्यमुपहतं यथा ।  
 एष प्राप्तोऽसि निर्वाणं संरम्भस्ते न विद्यते ॥

नेरुं नेरुं चरुं चरुं चरुं चरुं । ।  
 चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं । ।  
 चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं । ।  
 चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं । ।

टूटा काँसा जैसे निःशब्द रहता है, ( वैसे ) यदि तुम अपने को ( निःशब्द रखो ), तो तुमने निर्वाण को पा लिया, तुम्हारे लिए कलह (= हिंसा ) नहीं रही ।

If you silence yourself like a broken gong, you will have attained Nirvana, for there will be no strife in you.

P 86 ( XXVI, 5 )

P 71 V 134

चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं । ।  
 चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं । ।  
 चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं । ।  
 चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं चरुं । ।

यथा दण्डेन गोपालो, गावो पाजेति गोचरं ।

एवं जरा च मच्चु च, आयुं पाजेन्ति पाणिनं ॥७॥

श्रावस्ती ( पूर्वाराम )

विशाखा आदि ( उपासिकायें )

यथा दण्डेन गोपालो गाः प्राजयति गोचरम् ।

एवं जरा च मृत्युश्चायुः प्राजयतः प्राणिनाम् ॥

ཡར་བྱི་ནགས་སུ་ས་ག་མ་ལོ།

ཇི་ལྟར་ཕྱགས་ཇིས་དབྱག་པ་ཡིས། ।

ཕྱགས་ནམས་ལྷས་སུ་འདྲོད་བྱེད་པ། ।

དེ་བཞིན་སྟོག་ཆགས་ནམས་ཀྱི་ཆོ། ।

ག་དང་འཆི་བས་འདྲོད་པར་འགྱུར། ।

जैसे ग्वाला लाठी से गावों को चरागाह में ले जाता है; वैसे ही बुढ़ापा और मृत्यु प्राणियों की आयु को ले जाते हैं ।

As with a staff a cowherd drives his cattle to pasture, even so do death and decay compel the lives of beings.

P 3 ( I, 15 )

P 72 V 135

དབེར་ན་ཕྱགས་ཇི་དབྱགས་ཐོགས་ཀྱིས། ।

ཕྱགས་ནམས་གནས་སུ་ཕྱིན་བྱེད་ལྟར། ।

དེ་བཞིན་ནད་དང་ག་བ་ཡིས། ।

མི་ནམས་འཆི་བདག་རྒྱུ་དུ་སྒྲེལ། ।

अथ पापानि कर्मानि, करं बालो न बुज्झति ।

सेहि कम्मेहि दुम्मेधो, अग्निदद्धो व तप्पति ॥८॥

राजगृह ( वेणुवन )

अजगर ( प्रेत )

अथ पापानि कर्माणि कुर्वन् बालो न बुध्यते ।

स्वैः कर्मभिः दुर्मैधा अग्निदग्ध इव तप्यते ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

पाप कर्म करते समय मूढ़ ( पुरुष उसे ) नहीं बूझता, पीछे दुर्बुद्धि अपने ही कर्मों के कारण आग से जले की भाँति अनुताप करता है ।

When a fool does wicked deeds he does not realise ( their evil nature ). By his own deeds the stupid man is consumed, as if being burnt with fire.

P 33 ( IX, 11 )

P 72 V 136

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

यो दण्डेन अदण्डेसु, अप्यदुट्ठेसु दुस्सति ।

दसन्नमञ्जतरं ठानं, सिप्पमेव निगच्छति ॥६॥

राजगृह ( वेणुवन )

महामोग्गलान ( थेर )

यो दण्डेनादण्डेष्वप्रदुष्टेषु दुष्यति ।

दशानामन्यतमं स्थानं क्षिप्रमेव निगच्छति ॥

येन सदेव कथं नु । ( सक्खिमाणा अक्खं पदे । )

मादं मासं कदं वं सदेव पदे ।

तेसं सदेव कदं वसं मात्तेन पुदे व ।

माक्खसं सक्खसं वत्तं पदे मादं कदं प ।

देसं वदं सुदं नु पदे वत्तं प ।

जो दण्डरहितों के दण्ड से ( पीड़ित करता है ), निर्दोषों को दोष लगाता है, वह शीघ्र ही इन स्थानों में से एक को प्राप्त होता है ।

He who inflicts punishments on those who do not deserve it and offends those who are harmless will soon come to one of these ten states.

P 101 ( XXVIII, 26 )

P 73 V 137-140

मादं मासं कदं वं सदेव पदे ।

देसं वदं सुदं नु पदे वत्तं प ।

माक्खसं सक्खसं वत्तं पदे मादं कदं प ।

सुदं नु पदे वत्तं पदे वत्तं प ।

1. सक्खिमाणा अक्खं ( सक्खिमाणा अक्खं पदे ) किं सक्खिमाणा अक्खं पदे ।  
मादं कदं पदे वत्तं पदे वत्तं पदे वत्तं पदे ।



वेदनं फरुसं जानि, सरीरस्स च भेदनं ।

मरुकं वा पि आब्राधं, चित्तक्खेपं व पाणुणे ॥१०॥

वेदनां परुषां ज्यानि शरीरस्य च भेदनम् ।

मुरुकं वाऽप्याब्राधं चित्तक्षेपं वा प्राप्नुयात् ॥

हुव.खे.दे.कै.व.स.वे.वे.द. । ।

मृ.स.के.दु.स.सु.र.क.द.व.द. । ।

ह्वे.व.दे.ग.वे.द.व.द.सु.द.व.द.स. । ।

से.स.स.के.र.व.दु.द.सु.ग.स.व.द.वे.व. । ।

कड़वी वेदना, हानि, अग का भंग होना, मारी बीमारी, (या) चित्तविक्षेप  
(पगल) को प्राप्त होता है ।

He will incur acute pain, disaster, bodily injury, or even  
grievous sickness, or loss of mind.

P 101 ( XXVIII, 26 )

P 73 V 138

कै.व.स.वे.वे.द.व.द.ग.ग.स. । ।

मृ.स.के.दु.स.सु.र.क.द.व.द.स. । ।

ह्वे.व.दे.ग.वे.द.व.द.सु.द.व.द.स. । ।

मृ.स.स.के.र.व.दु.द.सु.ग.स.व.द.वे.व. । ।

राजतो वा उपसर्गं, अग्भक्खानं च दाहणं ।  
परिक्खयं च ज्ञातीनं, भोगानं च पभञ्जुरं ॥११॥

राजतो वोपसर्गमभ्याह्वानं वा दाहणम् ।  
परिज्ञयं वा ज्ञातीनां भोगानां वा प्रभञ्जनम् ॥

क्रुप'सो'यस'के'रु'स'र'द'द' ।      ।  
य'र'र'र'र'र'र'र'र' ।      ।  
ग'र'र'र'र'र'र'र'र' ।  
य'र'र'र'र'र'र'र'र' ॥

या राजा से दण्ड को ( प्राप्त होता है ), दाहण निन्दा, जाति बंधुओं का विनाश, भोगों का क्षय,

Or oppression by the king, or a fearful accusation, or loss of relatives, or the destruction of wealth,

P 101 ( XXVIII, 26 )

P 73 V 139

ग'र'र'र'र'र'r'r'r' ।  
य'र'र'र'र'r'r'r' ।  
क्रुप'सो'य'र'r'r' ।  
य'र'र'र'r'r'r' ।

अथवास्त अगारानि, अग्निं दहति पावको ।  
 कायस्त भेदात् दुष्प्रज्ञो, निरयं सोपपज्जति ॥१२॥

अथवाऽऽगाराण्यग्निर्दहति पावकः ।  
 कायस्य भेदात् दुष्प्रज्ञो निरयं स उपपद्यते ॥

देवैः पितृभ्यः कृताः पुत्राः ।  
 तेऽपि दुष्प्रज्ञाः सन्ति ।  
 तेऽपि दुष्प्रज्ञाः सन्ति ।  
 तेऽपि दुष्प्रज्ञाः सन्ति ।

अथवा उसके घर को अग्नि = पावक जलाता है; काया छोड़ने पर वह दुर्बुद्धि नर्क में उत्पन्न होता है ।

Or a ravaging fire will burn his house. Upon the dissolution of the body this unwise man will be born in hell.

P 101 ( XXVIII, 26 )

P 73 V 140

देवैः पितृभ्यः कृताः पुत्राः ।  
 तेऽपि दुष्प्रज्ञाः सन्ति ।  
 तेऽपि दुष्प्रज्ञाः सन्ति ।  
 तेऽपि दुष्प्रज्ञाः सन्ति ।



अलङ्कृतो चे अपि समं चरेय्य,  
 सन्तो दन्तो नियतो ब्रह्मचारी ।  
 सब्बेसु भूतेसु निधाय दण्डं,  
 सो ब्राह्मणो सो समणो स भिक्खु ॥१४॥

जैतवन

सन्तति ( महामात्य )

अलंकृतश्चेदपि शमं चरेत्  
 शान्तो दान्तो नियतो ब्रह्मचारी ।  
 सर्वेषु भूतेषु निधाय दण्डं  
 स ब्राह्मणः स श्रमणः स भिक्षुः ॥

सुखं सुखं वसुधं वसुधं सुखं सुखं सुखं सुखं ।  
 सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं ।  
 सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं ।  
 सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं ।

अलंकृत रहते भी यदि वह शान्त, दान्त, नियमतरपर, ब्रह्मचारी सारे प्राणियों के प्रति दण्डत्यागी है, तो वही ब्राह्मण है, वही श्रमण (=संन्यासी) वही भिक्षु है ।

Even though he be adorned ( with fine clothes etc. ), if he should live according to the Dharma, refined, controlled, celibate, and has ceased from injuring all other beings, then he indeed is a Brahman, an ascetic, a monk.

P 143 ( XXXIII 1 )

P 75 V 142

सुखं सुखं वसुधं वसुधं सुखं सुखं सुखं सुखं ।  
 सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं ।  
 सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं ।  
 सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं ।

हिरोनिसेधो पुरिसो, कोचि लाकेस्मि विज्जति ।

यो निन्दं अपबोधेति, अस्सो भद्रो कसामिव ॥१५॥

जेतवन

पिलोतिक ( थेर )

हीनिषेधः पुरुषः कश्चित् लोके विद्यते ।

यो निन्दां न प्रबुध्यति अश्वो भद्रः कसामिव ॥

मादं विना दं वदं वुत्ता स मा वल्लि । ।

सुदं वदं वदं सुदं विना स । ।

दं कसं दमा वदं सुदं सुदं । ।

ददं विना दं कं दं दमा दं दं दं । ।

लोक में कोई पुरुष होते हैं; जो (अपने ही) लज्जा करके निषिद्ध ( कर्म ) को नहीं करते, जैसे उत्तम घोड़ा कोड़े को नहीं सह सकता, वैसे ही वह निन्दा को नहीं सह सकते ।

Is there in the world any man so restrained by conscience that he avoids censure as a well-trained horse avoids the whip ?

P 63 ( XIX, 2 )

P 76 V 143

दं वदं दं वदं वुत्ता स मा वल्लि । ।

सुदं वदं वदं सुदं विना स । ।

दं वदं वदं सुदं विना स । ।

दं वदं वदं सुदं विना स । ।

दं वदं वदं सुदं विना स । ।

दं वदं वदं सुदं विना स । ।

अस्सो यथा भद्रो कसानिविट्ठो,  
आतापिनो संवेगिनो भवाथ ।  
सद्धाय सीलेन च वीरियेन च,  
समाधिना धम्मविनिच्छयेन च ।  
सम्पन्नविज्जाचरणा पतिस्सता,  
पहस्सथ दुक्खमिदं अनप्पकं ॥१६॥

अश्वो यथा भद्रः कशानिविष्ट  
आतापिनः संवेगिनो भवत ।

श्रद्धया शीलेन च वीर्येण च  
समाधिना धर्मविनिश्चयेन च ।

सम्पन्नविद्याचरणाः प्रतिस्मृताः  
प्रहास्यथ दुःखमिदं अनल्पकम् ॥

སྤྱེལ་སྤྱེལ་སྤྱེལ་ཞིང་ཡང་དག་རིག་གུར་ཅིང་།  
 དང་པ་ཚུལ་ཁྱིམ་སང་ནི་བཙུན་འབྲུས་དང་།  
 དྲིང་དེ་འཛིན་དང་ཚེས་ལ་དེས་པ་ཡིས།  
 ཏ་མཚེག་ལྷུགས་ཀྱིས་ལུས་པ་ཇི་བཞིན་དུ།  
 རིག་དང་ཞབས་ལྷན་སྟེ་སྟེ་དཔལ་ལྷན་ནམས།  
 ལྷི་ཚུང་ལྷུག་ལྷུག་འདྲི་ནི་རབ་སྤྱོད་ལ།

कोड़े पड़े उत्तम घोड़े की भाँति, उद्योगी; ग्लानियुक्त, (वैगवान) हो; श्रद्धा आचार, वीर्य, समाधि, और धर्म निश्चय से युक्त (बन) विद्या और आचरण से समन्वित हो, दौड़कर इस महान् दुःख (-राशि) को पार कर सकते हैं।

Be fearless and of good understanding, like a well-trained horse when touched by the whip, and you will, by these qualities of faith, virtue, effort, concentration, investigation of the Dharma, knowledge, good behaviour and mindfulness, get rid of this great suffering ( of worldly existence ).

P 63 ( XIX, 2 )

P 76 V 144

[illegible]

उदकं हि नयन्ति नेत्तिका,  
 उसुकारा नमयन्ति तेजनं ।  
 दारुं नमयन्ति तच्छका,  
 भत्तानं दमयन्ति सुव्रता ॥१७॥

उदकं हि नयन्ति नेतृकाः, इषुकारा नमयन्ति तेजनम् ।  
 दारुं नमयन्ति तक्षका आत्मानं दमयन्ति सुव्रताः ॥

पुनः वः सप्तमं गृह्यते अत्रैव । १

सप्तमं सप्तमं कृत्वा विष्णुं सः वक्ष्यते । १

पुनः सप्तमं कृत्वा गृह्यते अत्रैव सः । १

सप्तमं विष्णुं सः वक्ष्यते अत्रैव । १

कनः वरिः सः कनः ।

पुनः वरिः सः ॥

नहरवाले पानी ले जाते हैं, वाण बनाने वाले वाण को ठीक करते हैं,  
 बढ़ई लकड़ी को ठीक करते हैं, सुन्दर व्रतवाले अपने को दमन करते हैं ।

Irrigators lead the waters, fletchers fashion the arrow shafts, carpenters bend the wood, and the wise control themselves.



## ११—जरावग्गो

को नु हासो किमानन्दो, निच्चं पज्जलिते सति ।

अन्धकारेण ओनद्धा, पदीपं न गवेसथ ॥१॥

जेतवन

विसाखा की संगिनी

को नु हासः क आनन्दो नित्यं प्रज्वलिते सति ।

अन्धकारेणाऽवनद्धाः प्रदीपं न गवेषयथ ॥

कुयं सुदेहं दुअं ॥

दुअं दुअं दुअं दुअं दुअं ॥

उअं दुअं दुअं दुअं दुअं ॥

सुअं दुअं दुअं दुअं दुअं ॥

सुअं दुअं दुअं दुअं दुअं ॥

जब नित्य ही ( आग ) जल रही हो, तो क्या हँसी है, क्या आनन्द है ?  
अंधकार से घिरे तुम दीपक को ( क्यों ) नहीं ढूँढ़ते हो ?

Why this laughter, why this jubilation, while this world  
is ever burning ? Why do you not seek the light, you who are  
surrounded by the darkness ( of ignorance ).

P 1 ( I, 2 )

P 78 V 146

दुअं दुअं दुअं दुअं दुअं ॥

उअं दुअं दुअं दुअं दुअं ॥

सुअं दुअं दुअं दुअं दुअं ॥

सुअं दुअं दुअं दुअं दुअं ॥

पस्स चित्तकतं बिम्बं, अरुकायं समुस्सितं ।  
आतुरं बहुसङ्कप्पं, यस्स नत्थि धुवं ठिति ॥२॥

राजगृह ( बेणुवन )

सिरिमा

पश्य चित्रोक्तं बिम्बं अरु-कायं समुच्छितम् ।  
आतुरं बहुसङ्कल्प यस्य नास्ति ध्रुवं स्थितिः ॥

ह्रैसं सैमां क्खं पं स्रं क्खेमां पण्डमां ।     |  
सं यीसं पुसं किं रं पं पण्डमां ।     |  
कं पं पण्डमां किं रं पं पण्डमां ।     |  
पण्डमां पण्डमां पण्डमां पण्डमां ।     |

देखो विचित्र शरीर को, जो व्रणों से युक्त, फूला, पीड़ित नाना संकल्पों से युक्त है, जिसकी स्थिति अनियत है ।

Behold this beautified form ! A mass of sores, full of sickness, much thought of, with nothing lasting nor stable about it,

परिजिण्णमिदं रूपं, रोगनीळं पभङ्गुरं ।  
भिज्जति पूतिसन्देहो, मरणन्तं हि जीवितं ॥३॥

जेटवन

उत्तरी ( थेरी )

परिजीर्णमिदं रूपं रोगनी पभङ्गुरम् ।  
भिद्यते पूतिसन्देहो मरणान्तं हि जीवितम् ॥

ཀྱུ་ཡི་ཆུང་ཆུང་དུ་འོ།

གཞུགས་ནི་ཡོངས་སུ་གས་གུར་ཅིང་། ।

ནད་ཀྱི་ཆང་སྡེ་ཡང་བ། ।

ནག་གི་སྤང་བོ་འདི་ཞིག་ནས། ।

གསོན་པའི་མཐའ་མར་འཆི་བ་ཉིད། ।

यह रूप जीर्ण-शीर्ण; रोग का घर, और भंगुर है, सड़कर देह भग्न होती है; जीवन मरणान्त जो ठहरा ।

This body is worn out, a nest of diseases and very frail.  
This putrid mass breaks up. Truly life ends in death.

P 6 ( I, 33 )

P 79 V 148

གསོན་མཐའ་འཆི་བ་ཡིན་པའི་ཕྱིར། ।

ལུས་འདི་ཡོངས་སུ་ག་བ་དང་། ।

ནད་ཀྱི་ཆང་འདི་གུར་འཇིག་ཅིང་། ।

ནག་གི་ཆོགས་ཀྱང་འཇིག་པར་འགུར། ।

यानिमानि अपत्थानि, अलाबूनेव सारदे ।  
कापोतकानि अट्टोनि, तानि दिस्वान का रति ॥४॥

जैतवन

अधिमस ( भिक्षु )

यानिमान्यपत्थान्यलाबूनीव

शरदि ।

कापोतकान्यस्थीति तानि दृष्ट्वा का रतिः ॥

ཀླུ་ཕྱེད་ཚལ་དུ་འོ།

གང་འདི་རྣམས་ནི་སྒྲོན་ཀ་ཡི། 1

ཀྱ་བ་བཞིན་དུ་འཕྱོར་གུར་བའི། 1

རྩས་བ་ཕུ་བའི་མདོག་ཅན་དེ། 1

དེ་རྣམས་མཐོང་ན་དགའ་བཅི། 1<sup>2</sup>

शरद काल की अपत्थ लौकी की भाँति ( फेंक दी गई ), या कबूतरों की  
सी ( सफेद हो गई ) हड्डियों को देखकर किसको इस ( शरीर में ) प्रेम होगा ?

Like gourds cast away in autumn are these dove-hued  
bones. What pleasure is there in looking at them ?

P 2 ( I, 3 )

P 79 V 149

རྩས་བ་ཕུ་བའི་མདོག་འདྲ་བ། 1

བོར་བ་གང་ཡིན་འདི་དག་ནི། 1

ཕྱོགས་དང་ཕྱོགས་སུ་རྣམ་འཕྱོར་བ། 1

དེ་མཐོང་འདི་ལ་ཅི་ཞིག་དགའ། 1

1 ཆོགས་བཅད་འདི་འདྲ་དྲག་པོ་ལྷའི་དྲོ་བཞིན་དུ་ཡང་བྱུང་བར།

यानी मान्य परिधानि विक्षिप्तानि दिशोदशः ।

कपोतवर्णान्यस्थीनि तानि द्रष्टवैहकारतिः ॥

གང་འདི་རྣམས་ནི་མ་གཡོར་གིང་། ཕྱེད་དང་ཕྱེད་སུ་འཕྱོར་གུར་བའི།

རྩས་བ་ཕུ་བའི་མདོག་ཅན་དེ། མཐོང་ན་འདི་ལ་དགའ་བ་ཅི། ཕྱ་བ་སོགས་  
དེ། གཞན་ཡང་ཆོགས་བཅད་འདྲ་འབྲིག་འདི་འདྲ་མང་ཡང་མ་སྒྲོས་སོ།

अट्टीनं नगरं कृतं, मांसलोहितलेपनं ।  
यत्थ जरा च मच्चु च, मानो मक्खो च ओहितो ॥५॥

जेतवन

रूपनन्दा ( थेरी )

अस्थनां नगरं कृतं मांसलोहितलेपनम् ।  
यत्र जरा च मृत्युश्च मानो अक्षश्चावहितः ॥

शुभं भूयः कथं नृणां नृणां नृणां नृणां ॥

नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां ॥

नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां ॥

नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां ॥

नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां ॥

हड्डियों का ( एक ) नगर बनाया गया है, जो मांस और रक्त से लेपा गया है; जिसमें जरा और मृत्यु, अभिमान और डहक छिपे हुये हैं ।

In this city made of bones, plastered over with flesh and blood, reside old age and death, pride and deceit.

P 56 ( XVI, 22 )

P 80 V 150

नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां ॥

नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां ॥

नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां ॥

नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां नृणां ॥

जीरन्ति वे राजरथा सुचित्ता,  
अथो सरीरं पि जरं उपेति ।  
सतं च धम्मो न जरं उपेति,  
सन्तो हवे सङ्गि पवेदयन्ति ॥६॥

जेतवन

मल्लिका देवी

जीर्यन्ति वैराजरथाः सुचित्रा अथ शरीरमपि जरामुपेति ।  
सतां च धर्मो न जरामुपेति सन्तो ह वै सद्भयः प्रवेदयन्ति ॥

གྲུ་ལ་བྱེད་ཚུ་རྒྱ་མོ་མཐའ་ལྷི་ལ་ལའོ།  
 གྲུ་ལ་བོ་འི་ཤིང་རྟ་བྱ་བོ་སྤྱིང་བར་གྱུར།  
 འོན་ཏེ་ཡང་ན་ལུས་ཀྱང་ག་བར་འགྱུར།  
 དམ་པ་ནམས་ཀྱི་ཆོས་ནི་ག་མི་འགྱུར།  
 ཆོག་ཤེས་དམ་པའི་དངོས་པོར་རབ་རྒྱ་བརྩན།

सुचित्रित राजरथ भी पुराने हो जाते हैं, और शरीर भी जरा को प्राप्त होता है; (किन्तु) सज्जनों का धर्म (=गुण) जरा को नहीं प्राप्त होता, सन्त जन सत्यपुरुषों के बारे में ऐसा ही कहते हैं।

The ornamental royal chariots wear out. The body also approaches old age. But the Dharma of the Holy decays not. To be satisfied, is the real teaching of the Holy Ones (Buddha).

P 5 ( I, 27 )

P 80 V 151

གྲུལ་པོ་འི་གིང་ན་གིན་དུ་བཀྲ་བའང་འཛིག།  
 ར་བཞིན་ལུས་ཀྱང་ཉེ་བར་གྱ་བར་འགྱུར།  
 དམ་པ་ནམས་ཀྱི་ཚོས་འདི་དམ་པ་ཉི།  
 མི་མཚོག་གཞན་རྟོགས་བྱེད་ཅིང་གྱ་མི་འགྱུར།

1 བཀའ་ཟུག་ རམྱེང་ལྷན་མ (མཐའ་ཡི་ཀ་རྒྱུ་ཤྱི) ཀོ་ས་ལའི་རྒྱལ་པོ་  
གསལ་རྒྱལ་གྱི་བཙུན་མོ་དམ་པ་ཡིན་ལ་ རྒྱལ་བའི་བཙུན་པ་ལ་མི་  
ཕྱེད་བའི་དྲ་པ་ཐོབ་པའི་དགེ་བཙུན་མ་ཞིག་གོ།

अप्पस्सुतायं पुरिसो, बलिबद्धो व जीरति ।  
मंसानि तस्स वड्ढन्ति, पञ्ञा तस्स न वड्ढति ॥७॥

जैतवनं

( काल ) उदायी ( थेर )

अल्पश्रुतोऽयं पुरुषो बलीवर्द इव जीर्यति ।  
मांसानि तस्य वर्द्धन्ते प्रज्ञा तस्य न वर्द्धते ॥

अप्यस्सुतायं पुरिसो बलिबद्धो व जीरति ।

मंसानि तस्य वर्द्धन्ते प्रज्ञा तस्य न वर्द्धते ॥

अल्पश्रुतः पुरुषो बलीवर्द इव जीर्यति ।

मांसानि तस्य वर्द्धन्ते प्रज्ञा तस्य न वर्द्धते ॥

अल्पश्रुतः पुरुषो बलीवर्द इव जीर्यति ।

अल्पश्रुत (= अज्ञानी) पुरुष बैल की भाँति जीर्ण होता है । उसका माँस ही बढ़ता है, प्रज्ञा नहीं बढ़ती ।

A man who has learnt but little grows old like an ox;  
his flesh increases but his knowledge does not grow.





गृहकारक दिद्वीसि, पुन गेहं न काहसि ॥  
 सब्बा ते फासुका भग्गा, गृहकूटं विसङ्खतं ॥  
 विसङ्खारगतं चित्तं, तण्हानं खयमज्झगा ॥६॥

गृहकारक दृष्टोऽसि पुनर्गेहं न करिष्यसि ।  
 सर्वास्ति पार्श्विका भग्ना गृहकूटं विसंस्कृतम् ॥  
 विसंस्कारगतं चित्तं तृष्णानां क्षयमध्यगात् ॥

हिमं गुं पुं वं हिं वं कै मं वं ॥ १ ॥  
 क्षं वं हिं वं कै हिं वं ॥ २ ॥  
 हिं वं गुं वं वं वं वं वं वं वं ॥ ३ ॥  
 हिं वं गुं वं वं वं वं वं वं वं ॥ ४ ॥  
 वं वं वं वं वं वं वं वं वं ॥ ५ ॥  
 वं वं वं वं वं वं वं वं वं ॥ ६ ॥

हे गृहकारक ! ( अब ) तुझे पहिचान लिया, ( अब ) फिर तू धर नहीं बन  
 सकेगा । तेरी सभी कड़ियाँ भग्न हो गयीं, गृह का शिखर भी निर्बल हो गया ।  
 संस्कार-रहित चित्त से तृष्णा का क्षय हो गया ।

O house builder, you are seen ! You shall build no  
 house again. All your rafters are broken, your ridge-pole is  
 shattered. To the unconditioned ( Nirvana ) goes my mind,  
 the end of craving have I attained.

P 122 ( XXXI, 7 )

P 82 V 154

मं हिं वं वं हिं वं वं वं ॥ १ ॥  
 हिं वं गुं वं वं वं वं वं वं ॥ २ ॥  
 वं वं वं वं वं वं वं वं वं ॥ ३ ॥  
 वं वं वं वं वं वं वं वं वं ॥ ४ ॥  
 वं वं वं वं वं वं वं वं वं ॥ ५ ॥  
 वं वं वं वं वं वं वं वं वं ॥ ६ ॥



अचरित्वा ब्रह्मचरियं, अलब्ध्वा योवने धनं ।  
सेन्ति चापातिखीणा व, पुराणानि अनुत्थुनं ॥११॥

अचरित्वा ब्रह्मचर्यं अलब्ध्वा यौवने धनम् ।  
शेरते चापोऽतिक्षीण इव पुराणान्यनुतन्वन्तः ॥

कंस वर सुद व म सुद उद । ।  
मलेक दुस के के म के द व । ।  
उद उद क म व र म सु व ले क दु । ।  
सु क सु हे स सु उ सु द व र उ सु र । ।

ब्रह्मचर्य को बिना पालन किये, जबानी में धन को बिना कमाये, (पुरुष)  
मत्स्यहीन जलाशय में बूढ़े क्रौंच पक्षी से जान पड़ते हैं ।

Men who have not practiced celibacy, during youth have  
not gained wealth. They lie useless like worn out bows,  
repenting after the past.

P 57 ( XVII, 4 )

P 83 V 156

कंस वर सुद व म सुद उद । ।  
मलेक दुस के के म के द व । ।  
सु क क दु स व हे स सु क ले क । ।  
सु स व सु स स क स के उ म व र उ सु र । ।

## १२—अतवग्गो

अत्तानं चे पियं जञ्जा, रक्खेय्य नं सुरक्खितं ।  
तिण्णं अञ्जनरं यामं, पटिजग्गेय्य पण्डितो ॥१॥

सुसुमार ( चुनार ) गिरि ( भेसकलावन )

बोधि कुमार

आत्मानं चेत् प्रिय जानीयाद् रक्षेत्त सुरक्षितम् ।  
त्रयाणामन्यतमं यामं प्रतिजागृयात् पण्डितः ॥

गुँस'व'ग'सँद'गुँ'दँ'सु'म'सु'दँ'ग'स'सु'द'स'व'  
वद'ग'दँ'ग'सँ'स'स'स'स'ग' । ।  
दँ'दँ'स'सु'द'दँ'स'स'स'स'स'स' । ।  
द'ग'द'सु'द'ग'स'स'स'स'स'स' । ।  
स'स'स'स'स'स'स'स'स'स'स' । ।

अपने को यदि प्रिय समझा है, तो अपने को सुरक्षित रखना चाहिए,  
पंडित (जन) (रात के) तीनों यामों (=पहरों) में से एक में जागरण करें ।

Knowing that oneself is dear to one, one should take real  
care. During the three watches ( of the night ) the wise man  
should keep awake and vigilant.

P 22 ( V, 16 )

P 84 V 157

ग'स'दँ'वद'ग'स'स'स'स' । ।  
सु'द'ग'स'स'स'स'स'स' । ।  
स'स'स'स'स'स'स'स' । ।  
द'दँ'दँ'स'स'स'स'स' । ।

अत्तानमेव पठमं, पतिरूपे निवेशये ।  
अथञ्जमनुसासेय्य न किलिस्सेय्य पण्डितो ॥२॥

जेतवन

( शाक्यपुत्र ) उपनन्द ( थेर )

आत्मानमेव प्रथमं प्रतिरूपे निवेशयेत् ।  
अथान्यमनुशिष्यात् न विलिष्येत् पण्डितः ॥

शुभं बुद्धिं कथं नु भूते नृणां यत् । ।

सौम्यं सत्त्वमिदं भूते नृणां यत् । ।

कुर्वन् नृणां सुखं सत्त्वमिदं भूते नृणां यत् । ।

देवतां भूतेषु यत् सत्त्वमिदं भूते नृणां यत् । ।

सत्त्वमिदं भूतेषु यत् सत्त्वमिदं भूते नृणां यत् । ।

पहिले अपने को ही उचित (काम) में लगावे, (फिर) यदि दूसरे को उपदेश करे, (तो) पंडित क्लेश को न प्राप्त होगा ।

One should first establish oneself in what is proper, and only then should one instruct others. Such a wise man will not be reproached.

P 75 ( XXIII, 6 )

P 84 V 158

सत्त्वमिदं भूते नृणां यत् सत्त्वमिदं भूते नृणां यत् । ।

सुखं नृणां भूतेषु यत् सत्त्वमिदं भूते नृणां यत् । ।

सत्त्वमिदं भूतेषु यत् सत्त्वमिदं भूते नृणां यत् । ।

सुखं नृणां भूतेषु यत् सत्त्वमिदं भूते नृणां यत् । ।

अत्तानं चे तथा कयिरा, यथाञ्जमनुसासति ।

सुदन्तो वत दमेथ, अत्ता हि किर दुद्दमो ॥३॥

जेतवन

( अभ्यासी ) तिस्स ( धेर )

आत्मानं चेत् तथा कुर्यात् यथाऽन्यमनुशास्ति ।

सुदान्तो वत दमयेद्, आत्मा हि किल दुर्दमः ॥

अरं कुयं अरं । ।

इं अरं गल्लं अरं गल्लं अरं गल्लं । ।

इं अरं अरं अरं अरं अरं अरं । ।

अरं अरं अरं अरं अरं अरं अरं । ।

अरं अरं अरं अरं अरं अरं अरं । ।

अपने को वैसा बनावें, जैसा दूसरे को अनुशासन करना है; (पहले) अपने को भी भली प्रकार दमन करे; वस्तुतः अपने को दमन करना ( हो ) कठिन है ।

As he instructs others so he himself should act; with himself fully controlled, he should control others. For difficult indeed is the control of self.

P 75 ( XXIII, 8 )

P 85 V 159

अरं अरं अरं अरं अरं अरं अरं । ।

अरं अरं अरं अरं अरं अरं अरं । ।

अरं अरं अरं अरं अरं अरं अरं । ।

अरं अरं अरं अरं अरं अरं अरं । ।

अत्ता हि अत्तनो नाथो, को हि नाथो परो सिया ।  
अत्तना हि सुदन्तेन, नाथं लभति दुल्लभं ॥४॥

जितवन

कुमार कश्यप की माता (थेरी)

आत्मा<sup>१</sup> हि आत्मनो नाथः को हि नाथः परः स्यात् ।  
आत्मनैव सुदान्तेन नाथं लभते दुर्लभम् ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

वदन्ति वदन्ति नमो भगवते वासुदेवाय ।

नमो भगवते वासुदेवाय नमो भगवते वासुदेवाय ।

वदन्ति वदन्ति नमो भगवते वासुदेवाय ।

नमो भगवते वासुदेवाय नमो भगवते वासुदेवाय ।

( पुरुष ) अपने ही आप मालिक है दूसरा कौन मालिक हो सकता है;  
अपने को भली प्रकार दमन कर लेने पर (वह एक) दुर्लभ मालिक को पाता है ।

The self is the lord of self, who else could be the lord ?  
By self-control a man finds a lord who is difficult to obtain.

१. भगवद्गीता ( अध्याय ६ ) में—

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ।

आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥४॥

बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्माना जितः ।

अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥५॥

P 85 V 160

वदन्ति वदन्ति नमो भगवते वासुदेवाय ।

नमो भगवते वासुदेवाय नमो भगवते वासुदेवाय ।

वदन्ति वदन्ति नमो भगवते वासुदेवाय ।

नमो भगवते वासुदेवाय नमो भगवते वासुदेवाय ।

[ མཁས་པས་ཚོས་ནམས་ཐོབ་པར་འགྱུར། །  
 མཁས་པས་གྲགས་པ་ཐོབ་པར་འགྱུར། །  
 མཁས་པས་བདེ་བ་ཐོབ་པར་འགྱུར། །  
 མཁས་པས་བདེ་འགྲོ་ཐོབ་པར་འགྱུར། །  
 མཁས་པས་མཐོ་རིས་དགའ་བར་འགྱུར། །  
 གཉེན་གྱི་ནང་ན་ལམ་མེར་འབར། །  
 བྱ་ངན་ནང་ན་གདུང་མི་འགྱུར། །  
 འཆིང་བ་ཐམས་ཅད་གཅོད་པར་འགྱུར། །  
 ངན་འགྲོ་ཐམས་ཅད་སྤོང་བར་འགྱུར། །  
 སྤྱག་བསྐྱེད་ཀྱན་ལས་རབ་དུ་ཐར། །  
 བདག་ཉིད་མགོན་དུ་འགྱུར་བ་འཐོབ། །  
 བྱ་ངན་འདས་ཉིད་ཉི་བར་འགྱུར། །  
 ཉིད་པར་དགའ་བའི་མགོན་ཉིད་འགྱུར། ། ]

ཤད་གྲག་ནང་འཁོད་འདི་ནམས་ཚོས་ཀྱི་ཚོག་སུ་བཅད་པར་མི་གསལ།



अत्तना हि कतं पापं, अत्तजं अत्तसम्भवं ।  
अभिमन्थति दुग्धं, वजिरं वस्ममयं मणिं ॥५॥

जैतवन

महाकाल ( उपासक )

आत्मनैव कृतं पापं आत्माजं आत्मसम्भवं ।  
अभिमन्थति दुग्धं वज्रमिवास्ममयं मणिम् ॥

अपने से जात, अपने से उत्पन्न, अपने से किया पाप, ( करने वाले )  
दुर्बुद्धि को पाषाणमय वज्रमणि की ( चोट की ) भाँति मन्थन ( = पीड़ित )  
करता है ।

अपने से जात, अपने से उत्पन्न, अपने से किया पाप, ( करने वाले )

दुर्बुद्धि को पाषाणमय वज्रमणि की ( चोट की ) भाँति मन्थन ( = पीड़ित )

करता है ।

अपने से जात, अपने से उत्पन्न, अपने से किया पाप, ( करने वाले )

अपने से जात, अपने से उत्पन्न, अपने से किया पाप, ( करने वाले )  
दुर्बुद्धि को पाषाणमय वज्रमणि की ( चोट की ) भाँति मन्थन ( = पीड़ित )  
करता है ।

By oneself alone is evil done, it is self-born and self-  
caused. Evil grinds the unwise as does a diamond, a hard gem.

P 86 V 161

अपने से जात, अपने से उत्पन्न, अपने से किया पाप, ( करने वाले )

दुर्बुद्धि को पाषाणमय वज्रमणि की ( चोट की ) भाँति मन्थन ( = पीड़ित )

करता है ।

अपने से जात, अपने से उत्पन्न, अपने से किया पाप, ( करने वाले )



सुकरानि असाधूनि, अत्तनो अहितानि च ।  
यं वे हितं च साधुं च, तं वे परमदुष्करं ॥७॥

राजगृह ( वेणुवन )

संघ में फूट के समय

सुकराण्यसाधून्यात्मनोऽहितानि च ।  
यद् वै हितं च साधु च तद् वै परमदुष्करम् ॥

འོད་མཐོང་ལ་དུ་འོད་། ।

བདག་ཉིད་ལ་ནི་གཞོན་འགྱུར་བའི། ।

ཉེས་པ་མཆོག་ནི་བྱེད་བར་སྒྲུ། ।

ཕན་དང་ལེགས་པ་གང་ཡིན་པ། ।

དེ་ནི་མཆོག་དུ་བྱ་བར་དགའ། ।

अनुचित और अपने लिए अहित ( कर्मों का करना ) सुकर है; (लेकिन)  
जो हित और उचित है; उसका करना परम दुष्कर है ।

Easy to do are things that are bad and harmful to oneself.  
But exceedingly difficult to do is that which is beneficial  
and good.

P 99 ( XXVIII, 16 )

P 87 V 163

བདག་ལ་མི་ཕན་བྱ་བ་དང་། ।

ལེགས་པ་མ་ཡིན་བྱ་བར་སྒྲུ། ।

གང་དག་ཕན་ཞིང་བདེ་འགྱུར་བ། ।

དེ་ནི་མཆོག་དུ་བྱ་བར་དགའ། ।

यो सासनं अरहतं, अरियानं धम्मजीविनं ।  
पटिक्कोसति दुम्मेधो, दिट्ठि निस्साय पापिकं ।  
फलानि कटुकस्सेव, अत्तघाताय फल्लति ॥८॥

जेतवन

काल ( घेर )

यः शासनमर्हतां आर्याणां धर्मजीविनाम् ।  
प्रतिक्रुष्यति दुर्मेधा दृष्टि निःश्रित्य पापिकाम् ।  
फलानि काष्ठकस्यैवात्महत्यायै फुलति ॥

कुयं सुदे कयं सुदे ॥

कसं गृहं अकं दं अययसं वं दं । ।  
दग्गं वत्थं कसं गृहं वत्थं वं दं । ।  
गदं गीसं वं दं सुदे वं दं । ।  
सुदे वं दं सुदे वं दं वं दं । ।  
सुदे वं दं सुदे वं दं वं दं । ।  
सुदे वं दं सुदे वं दं वं दं । ।

धर्मजीवी, आर्य, अर्हत्तों के शासन (= धर्म ) को, जो दुर्बुद्धि बुरी दृष्टि से निन्दता है; वह बाँस के फल की भाँति अपनी हत्या के लिए फूलता है ।

The foolish man who, following false doctrines, scorns the teaching of the dharma followers, of the noble and of virtuous, comes to fruition only for self-destruction, like the Khattaka reed. ("The reed either dies after it has borne fruit or is cut down for the sake of its fruit" Max Muller Dhammapada (1881) P. 46 ).

P 31 ( VIII 7 )

P 87 V 164

वसं वत्थं गदं गीसं वं दं । ।  
वत्थं वत्थं कसं अययसं वं दं । ।  
दग्गं वत्थं कसं गृहं वत्थं वं दं । ।  
वत्थं वं दं सुदे वं दं वं दं । ।  
सुदे वं दं सुदे वं दं वं दं । ।  
सुदे वं दं सुदे वं दं वं दं । ।

अत्तना हि कतं पापं, अत्तना सङ्किलिस्सति ।  
 अत्तना अकतं पापं, अत्तना व विमुज्जति ।  
 सुद्धो असुद्धि पच्चत्तं, नाञ्जो अञ्जं विसोधये ॥६॥

जेतवन

( चूल ) काल ( उपासक )

आत्मनैव कृतं पाप आत्मना संकिलिष्यति ।  
 आत्मनाऽकृतं पापं आत्मनैव विशुध्यति ।  
 शुद्धश्चशुद्धी प्रत्यात्मं नाऽन्योऽन्यं विशोधयेत् ॥

कुयं भुएः कंयं नु कयं पं कुएः वं यरे । ।

झैयं वं भुएः वं रं रं भुएः रे । ।

रं रं भुएः भुएः कं कं रं रं भुएः । ।

झैयं वं यं झैयं वं रं रं भुएः रे । ।

रं रं भुएः भुएः कं कं रं रं भुएः । ।

रं रं भुएः रं रं भुएः रं रं भुएः रे । ।

भुएः भुएः भुएः भुएः भुएः भुएः । ।

अपने से किया पाप अपने को ही मलिन करता है, अपने पाप न करे तो अपने ही शुद्ध रहता है; शुद्धि अशुद्धि प्रत्येक ( आदमी ) की अलग अलग है; दूसरा ( आदमी ) दूसरे को शुद्ध नहीं कर सकता ।

By oneself alone is evil done, by oneself is one defiled.  
 By oneself is evil avoided, by oneself alone is one purified.  
 Purity and impurity depend on oneself. No-one can purify another.

P 99 ( XXVIII, 11 )

P 88 V 165

रं रं भुएः भुएः कं कं रं रं भुएः रे । ।

रं रं भुएः भुएः कं कं रं रं भुएः । ।

रं रं भुएः भुएः कं कं रं रं भुएः रे । ।

रं रं भुएः भुएः कं कं रं रं भुएः । ।

भुएः भुएः भुएः भुएः भुएः भुएः । ।

रं रं भुएः रं रं भुएः रं रं भुएः रे । ।

अतदर्थं परत्थेन, बहुनाऽपि न हापये ।  
अतदर्थमभिज्ञाय, सदर्थपसुतो सिया ॥१०॥

जेतवन

अतदर्थ ( धेर )

आत्मनोऽर्थं परार्थेन बहुनाऽपि न हापयेत ।  
आत्मनोऽर्थमभिज्ञाय सदर्थप्रसितः स्यात् ॥

ཀུམ་བྱེད་ཆལ་རུ་འོ། །

གཞན་དོན་མང་པོ་འི་ལྷན་རུ་ཡང་། །

རང་གི་དོན་ནི་བདང་མི་བྱ། །

རང་དོན་མངོན་བར་ཤེས་པ་ཡིས། །

དམ་བཅི་དོན་ནི་ལྷན་རུ་ཡང་མ་བྱ། །

བདག་གི་ཤེ་ཆན་དེ།

ལེན་བཅུ་གཅིས་བའོ། །

पराये के बहुत हित के लिए भी अपने हित की हानि न करे; अपने हित को जानकर सच्चे हित में लगे ।

For the sake of others' ( worldly ) welfare, however great, one's own ( spiritual ) welfare should not be neglected. Well perceiving one's own welfare, be zealous regarding real benefit (i. e. release from sorrow).

P 75 ( XXIII, 9 )

P 88 V 166

བདག་གི་དོན་ལྷན་རུ་གཞན་དོན་ནི། །

མང་པོ་དག་ཀྱང་བདང་བར་བྱ། །

བདག་དོན་ཆེད་ཆེད་ཤེས་གུར་ཀྱང་། །

རང་གི་དོན་གྱི་མཆོག་རུ་འགྱུར། །

## १३—लोकवग्गो

हीनं धम्मं न सेवेय्य, प्रमादेन न संवसे ।  
मिच्छादिष्टं न सेवेय्य, न सिया लोकवद्धुतो ॥१॥

जेतवन

कोई अल्पवयस्क मिश्र

हीनं धम्मं न सेवेत्, प्रमादेन न संवसेत् ।  
मिच्छादृष्टं न सेवेत्, न स्यात् लोकवर्द्धनः ॥

शुचं भूतं कथं नृप ॥

दमकं वरं कसं वै वद्धेनं मीं नृप ।  
वरा मीदं वरं वै वद्धेनं मीं नृप ।  
वरा वरं वरं वरं वद्धेनं मीं नृप ।  
वद्धेनं वरं वरं वरं वरं वद्धेनं मीं नृप ।

पाप ( = नीच धर्म ) को न सेवन करे, न प्रमाद से लिप्त होवे; झूठी धारणा को न सेवन करे, ( आदमी को ) लोक ( जन्म मरण ) वर्द्धक नहीं बनना चाहिए ।

Do not follow mean things, live not in heedlessness, Do not embrace false views. Do not increase worldly ties.





धम्मं चरे सुचरितं, न तं दुच्चरितं चरे ।  
 धम्मचारी सुखं सेति, अस्मि लोके परमिह च ॥३॥

धर्मं चरेत् सुचरितं न तं दुश्चरितं चरेत् ।  
 धर्मचारी सुखं श्रेतेऽस्मिन् लोके परम च ॥

कसं गुं सुदं प ममं प सुदा ।  
 उंसं वरं सुदं प दे मी सुदा ।  
 ममिं देव देव देव म ममिं देव ।  
 कसं प सुदं प ममं प ममिं प ।

सुचरित धर्म का आचरण करें, दुश्चरित कर्म (=धर्म) का सेवन न करें ॥  
 धर्मचारी (पुरुष) इस लोक और परलोक में सुख पूर्वक सोता है ।

Lead a righteous life, and not one that is corrupt. The  
 righteous live happily both in this world and in the next.

P 113 (XXX, 5)

P 91 V 169

कसं सुदं प ममं प सुदं प ममिं प ।  
 उंसं वरं सुदं प दे मी सुदा ।  
 ममिं देव देव देव म ममिं देव ।  
 कसं सुदं प ममं प ममिं प ममिं प ।

यथा बुब्बुळकं पस्से, यथा पस्से मरीचिकं ।  
एवं लोकं अवेक्खन्तं, मच्चुराजा न पस्सति ॥४॥

जैनवन

पाँच सौ ज्ञानी ( भिक्षु )

यथा बुद्बुदकं पश्येद् यथा पश्येत् मरीचिकाम् ।  
एवं लोकप्रेक्षमाणं मृत्युराजो न पश्यति ॥

सुय.प्रे.क.प.पु.११

हे.पु.पु.व.म.पे.व.प.१ ।

हे.पु.पु.पु.म.पे.पु.व.१ ।

दे.पु.पु.पु.पु.म.पे.व.प.१ ।

दे.पु.पु.पु.पु.म.पे.पु.व.१ ।

जैसे बुलबुले को देखकर, जैसे ( मरु- ) मरीचिका को देखता है, लोक को वैसे ही ( जो पुरुष ) देखता है, उसकी ओर यमराज ( आँख उठाकर ) नहीं देख सकता ।

Look upon the world as a bubble; look upon it as a mirage. One who looks thus upon the world cannot be seen by the king of death.

P 94 ( XXVII, 14 )

P 91 V 170

हे.पु.पु.पु.म.पे.व.प.१ ।

हे.पु.पु.पु.म.पे.व.पु.१ ।

दे.पु.पु.पु.पु.म.पे.पु.व.१ ।

दे.पु.पु.पु.पु.म.पे.पु.व.१ ।

एथ पस्सथिमं लोकं, चित्तं राजरथूपमं ।  
यत्थ बाला विसीदन्ति, नत्थि सङ्गो विजानतं ॥५॥

राजगृह ( वेणुवन )

अभय राजकुमार

एत पश्यतेमं लोकं चित्रं राजपथोपमम् ।  
अत्र बाला विषीदन्ति नास्ति संगो विजानताम् ॥

देव.सदे.क.व.हु.देव.स.देव.व.दे. । ।

कु.व.दे.दे.दे.हु.व.व.व.व. । ।

दे.व.दे.दे.दे.दे.दे.व.व.व. । ।

व.व.व.व.व.व.व.व.व. । ।

व.व.व.व.व.व.व.व.व. । ।

आओ, विचित्र राजपथ के समान इस लोक को देखो, जिसमें मूढ़ आसक्त होते हैं, ज्ञानी जन आसक्त नहीं होते ।

Come, behold this world, alike an ornamented royal chariot. Herein fools flounder, but for the wise there is no attraction.

P 94 ( XXVII, 17 )

P 92 V 171

व.व.व.व.व.व.व.व.व. । ।

दे.व.व.व.व.व.व.व.व.व. । ।

कु.व.दे.दे.दे.हु.व.व.व.व. । ।

व.व.व.व.व.व.व.व.व. । ।

यो च पुब्बे पमज्जित्वा, पच्छा सो नप्पमज्जति ।  
सो इमं लोकं प्रभासेति, अब्भा मुत्तो व चन्दिमा ॥६॥

जितवन

सम्मुञ्जानि ( थेर )

यश्च पूर्वं प्रमाद्य पश्चात् स न प्रभाद्यति ।  
स इमं लोकं प्रभासयत्येभ्रान्मुक्त इव चन्द्रमा ॥

གང་ཞིག་སྤོང་ཆད་བག་མེད་ཀྱང་། །  
སྤྱི་ནས་བག་དང་ལྷན་ལྷུང་བ། །  
སྤྱི་ན་ལས་གྲོལ་བའི་རྒྱ་བ་བཞིན། །  
འཛིག་རྟེན་འདི་ན་དེ་གསལ་འགྱུར། །

जो पहले भूल कर फिर भूल नहीं करता, वह मेघ से उन्मुक्त चन्द्रमा की  
भाँति इस लोक को प्रकाशित करता है ।

He who though formerly heedless later becomes heedful,  
illuminates this world, like the moon freed from clouds.

P 53 ( XVL 5 )

P 92 V 172

འདི་ན་གང་སྤོང་བག་མེད་ལས། །  
སྤྱི་ནས་བག་དང་ལྷན་འགྱུར་དེ། །  
སྤྱི་ན་བྲལ་ཉི་མ་རྒྱ་བ་ལྷན། །  
འཛིག་རྟེན་འདི་ན་ཀྱང་དུ་གསལ། །

यस्स पापं कतं कम्मं, कुसलेन पिधीयति ।

सो इमं लोकं पभासेति, अब्भा मुत्तो व चन्दिमा ॥७॥

## जेतवन्

अंगुलिमाल ( थेर )

यस्य पापं कृतं कर्म कुशलेन पिधीयते ।

स इमं लोकं प्रभासयत्यग्नान्मुक्त इव चन्द्रमा ॥

ཀྱུང་ཕྱེད་ཚལ་དུ་སོར་སྤང་<sup>1</sup>ཅན་ལའོ། །

གང་གིས་རྒྱལ་པོའི་ལས་བྱས་པ།

དགེ་བས་གཡོགས་པར་གྱུར་པ་དེ།

ཕྱི་ན་ལས་གྲོང་པའི་རྒྱ་པ་པའི་ན།

འཛིན་རྟེན་འདི་ན་རབ་གསལ་འགྲུང་།

जो अपने किये पाप कर्मों को पुण्य से ढांक देता है, वह मेघ से उन्मुक्त चन्द्रमा की भाँति इस लोक को प्रकाशित करता है ।

Whoever, by good deeds, cover up the evil they have done, illuminate this world, like the moon freed from clouds.

P 54 ( XVI, 9 )

P 93 V 173

གང་ཞིག་སྒྲིག་པའི་ལས་བྱས་པ།

དགེ་བས་འགྲོ་བས་པར་ཕྱིར་བ་ནི།

[illegible]

འཇིག་རྟེན་འདི་ན་ཀུན་ཏུ་གསལ། །

1 བཀའ་མཁའ་ ཨོ་ཤུ་ལི་སྐ་ལ་ ( སོར་སོན་སྤོང་བ་ཅན ) མི་ སྤྱི་རྒྱུ་  
བའི་བཤེས་གཉེན་གྱིས་ བསྐྱུ་ས་བའི་རྒྱེན་གྱིས་མི་བསྐྱུ་བ་དུག་བ་ཅན་  
དུ་གྱུར་དེ། མི་མཐོང་ཅན་གསོད་བའི་དམ་བཅན་ལྟེ་ས་ས་རང་གི་ས་  
ཡང་གསོད་ལ་ཁད་བ་ན། ལྟོན་བ་སྤྲུགས་རྩེ་ཅན་གྱིས་བྱམས་བའི་  
ལྟོབས་གྱིས་བདུལ་དེ་ཆོས་བསྐྱུར་བས་བརྟན་བ་མཐོང་ལྟེ་གནས་བརྟན་  
དགྲ་བཅོམ་པར་གྱུར་བ་དེ་ལོ། །

अन्धभूतो अयं लोको, तनुकेत्थ विपस्सति ।

सकुणो जालमुत्तो व अप्पो सग्गाय गच्छति ॥८॥

आलवी

रंगरेज की कन्या

अन्धभूतोऽयं लोकः तनुकोऽत्र विपश्यति ।

शकुन्तो जालमुक्त इवाल्पः स्वर्गाय गच्छति ॥

अद्वैतः देवः अद्वैतः सुखः वराः ॥ १ ॥

अद्वैतः सुखः सुखः सुखः सुखः ॥ १ ॥

सुखः सुखः सुखः सुखः सुखः ॥ १ ॥

सुखः सुखः सुखः सुखः सुखः ॥ १ ॥

यह लोक अन्धे जैसा है, यहाँ देखनेवाले थोड़े ही हैं, जाल से मुक्त पक्षी की भाँति विरले ही स्वर्ग को जाते हैं ।

This world is in darkness, few are here who can clearly see. As the birds that escape from a net are few, so are they that go to heaven.

P 92 ( XXVII, 4 )

P 93 V 174

अद्वैतः देवः सुखः वराः सुखः अद्वैतः ॥ १ ॥

देवः सुखः सुखः सुखः सुखः सुखः ॥ १ ॥

सुखः सुखः सुखः सुखः सुखः सुखः ॥ १ ॥

सुखः सुखः सुखः सुखः सुखः सुखः ॥ १ ॥

हंसादिच्चपथे यन्ति, आकासे यन्ति इद्धिया ।  
नीयन्ति घोरा लोकम्हा, जेत्वा मारं सवाहिनि ॥६॥

जितवन

तीस भिक्षु

हंसा आदित्यपथे यन्ति, आकाशे यन्ति ऋद्धिया ।  
नीयन्ते घोरा लोकात् जित्वा मारं सवाहिनीम् ॥

शुभं भुवः ऋद्धिं शुभं भुवः ॥ ।

८८ वः ३० मः ५० वः ५० ॥ ।

८८ वः ३० मः ५० वः ५० ॥ ।

८८ वः ३० मः ५० वः ५० ॥ ।

८८ वः ३० मः ५० वः ५० ॥ ।

हंस सूर्यपथ (=आकाश) में जाते हैं, (योगी) ऋद्धि (-बल) -से आकाश में जाते हैं, घोर (पुरुष) सेना-सहित मार को पराजित कर लोक से (निर्वाण को) ले जाते हैं ।

Swans travel on the path of the sun, (men) travel through air by physic powers. The wise are led away from the world, having conquered Mara and his host.

P 56 ( XVII, 2 )

P 94 V 175

८८ वः ३० मः ५० वः ५० ॥ ।

८८ वः ३० मः ५० वः ५० ॥ ।

८८ वः ३० मः ५० वः ५० ॥ ।

८८ वः ३० मः ५० वः ५० ॥ ।

एकं धर्मं अतोतस्स, मुसावादिस्स जन्तुनो ।  
वित्तिणपरलोकस्स, नत्थि पापं अकारियं ॥१०॥

जितवन

चिंचा ( माणविका )

एकं धर्ममतीतस्य मृषवादिनो जन्तोः ।  
वित्तीर्णपरलोकस्य चास्ति पापमकार्यम् ॥

सुयं सुदं ऊयं सुदं ॥

ऊँसं गतिगं अदं वरं सुसं वं यी ।

वहुवं ऊँसं सुं वरं सुं वं यी ।

अदं गतिगं वं वं वं वहुवं सुसं ग्रीसं ।

वीं सुं वं यी सुं वं वं यी ।

जो धर्म को अतिक्रमण कर चुका, जो प्राणी मृषावादी है, जो परलोक का ख्याल छोड़ चुका है, उसके लिए कोई पाप अकरणीय नहीं ।

There is no evil that cannot be done by a lying person who has transgressed the Dharma ( Truth ), and who is not concerned with another world ( the next rebirth ).

P 94 V 176

ऊँसं गतिगं वं वं वं वं वं वं वं वं ।

अदं गतिगं वं वं वं वं वं वं वं वं ।

सुसं वं वं वं वं वं वं वं वं वं ।

वीं वं वं वं वं वं वं वं वं वं ।



न वे कदरिया देवलोकं वजन्ति,  
 बाला हवे नप्पसंसन्ति दानं ।  
 धीरो च दानं अनुमोदमानो,  
 तेनेव सो होति सुखी परत्थ ॥११॥

जैतवन

( अयुक्त दान )

न [वै] कदर्या देवलोकं व्रजन्ति  
 बाला ह वै न प्रशंसन्ति दानम् ।  
 धीरश्च दानं अनुमोदमानस्तेनैव  
 स भवति सुखी परत्र ॥

कुप सुदेवलो ।

अहं स व मघो देवलो देवलो देवलो देवलो ।  
 देवलो देवलो देवलो देवलो देवलो देवलो ।  
 देवलो देवलो देवलो देवलो देवलो देवलो ।  
 देवलो देवलो देवलो देवलो देवलो देवलो ।

कंजूस देवलोक नहीं जाते; मूढ़ ही दान की प्रशंसा नहीं करते; धीर दान का अनुमोदन कर, उसी ( कर्म ) से पर ( लोक ) में सुखी होता है ।

Truly, misers do not go to the celestial realms. Fools do not praise the benefits of liberality, but the wise man rejoices in giving, thereby becoming happy hereafter.

P 34 ( X, 2 )

P 95 V 177

अहं स व मघो देवलो देवलो देवलो देवलो ।  
 देवलो देवलो देवलो देवलो देवलो देवलो ।  
 देवलो देवलो देवलो देवलो देवलो देवलो ।  
 देवलो देवलो देवलो देवलो देवलो देवलो ।

पृथिव्या एकरज्जेन, सगस्स गमनेन वा ।

सम्बलोकाधिपच्चेन, सोत्तापत्तिफलं वरं ॥१३॥

अतएव

अनाथपिण्डिक के पुत्र के सम्बन्ध में

पृथिव्या एकराज्यात् स्वर्गस्य गमनाद् वा ।

सर्बलोकाऽऽधिपत्याद् वा स्रोतापत्तिफलं वरम् ॥

संश्लेषेण अस्मिन्नुपनिषत्सु ।

अथैवमस्मिन्नुपनिषत्सु ।

अथैवमस्मिन्नुपनिषत्सु ।

अथैवमस्मिन्नुपनिषत्सु ।

अथैवमस्मिन्नुपनिषत्सु ।

अथैवमस्मिन्नुपनिषत्सु ।

(सारी) पृथिवी का एक राजा होने से, या स्वर्ग के गमन से, ( या ) सभी लोकों के अधिपति होने से भी स्रोतापत्ति फल ( का मिलना ) श्रेष्ठ है ।

Better than absolute sovereignty over the earth, better than going to heaven and even better than lordship over all worlds, is the fruit of a Stream-winner. ( Srota-apanna-one who has entered on the path to Nirvana ).

२४—बुद्धवग्गो

यस्स जितं नावजीयति,  
जितं यस्स नो याति कोचि लोके ।  
तं बुद्धमनन्तगोचरं,  
अपदं केन पदेन नेस्सथ ॥१॥

उस्वेला<sup>१</sup>

मागन्दिप ( ब्राह्मण )

यस्य जितं नावजीयते ।  
जितमस्य न याति कश्चिल्लोके ।  
तं बुद्धमनन्तगोचरं अपदं केन पदेन नेष्यथ ? ॥

ཕྱུལ་རྩེ་རྒྱལ་ལྷ་ལྷ་མེ་ལ་གསུངས་པ།  
གང་གི་རྒྱལ་པ་ལམ་པར་མི་རྒྱས་ཏེ།  
འདི་ཡི་རྒྱལ་པ་འཇིག་རྟེན་སྐྱེས་མི་བསྟོད།  
སངས་རྒྱལ་མཐའ་མེད་མེད་ཕྱེད་རྒྱལ་གནས་མེད་ཏེ།  
ལམ་ནི་གང་གིས་མེད་ཕྱིས་བཟོ་བར་བྱ།

जिसका जीता बेजीता नहीं किया जा सकता, जिसके जीते ( राग, द्वेष, मोह फिर ) नहीं लौटते; उस अपद ( =स्थान रहित ), अनन्तगोचर ( = अनन्त को देखने वाले ) ब्रह्म को किस पथ से प्राप्त करने ?

He whose conquest (of ignorance, desire, anger etc.) is not turned into defeat, why should he not leave this world ( i. e. for Nirvana)? That Buddha of limitless sphere of activity who is without fixed abode, by what path will you lead him astray ?

P 112 ( XXIX, 55 )

P 96 V 179

གང་ཞིག་རྒྱལ་ལས་མི་ཉམས་ཤིང་། །  
འཛིན་དེན་མ་རྒྱལ་ཅུང་ཟད་མེད། །  
སངས་རྒྱས་སྤྱོད་ལྷལ་མཐའ་ལས་དེ། །  
འགྲོ་མེད་གོམ་པ་གང་གིས་བཤེ། །

1 ལུ་ཅ་པོ་ལྷ (སྒྲིབ་རྩམ་) བེའུ་ལ་དཔུང་གི་ཆར་གནོགས་པ་  
 དང་། དེའི་གྲོང་ཁྱིམ་སྡེ་ཅན་ རཀར་ག་སོགས་པཟང་སྒྲིབ་ཚོགས་རྒྱག་  
 ཅུ་པཎྜིན་པར་ཆོགས་དེ་ཆོས་ཀྱི་སྐྱེ་ག་ཕྱོད་པའི་གནས་ཁྲུང་ཅན་དེའོ། །

यस्स जालिनी विसत्तिका,  
तण्हा नत्थि कुहिञ्चि नेतवे ।  
तं बुद्धमनन्तगोचरं,  
अपदं केन पदेन नेस्सथ ॥२॥

यस्य जालिनी विषात्मिका तृष्णा  
नास्ति कुत्रचित् नेतुम् ।  
तं बुद्धमनन्तगोचरं अपदं केन पदेन नेष्यथ ? ॥

स्येदं चरिं द्वा वं दुवा गी वदवा छिदं उवा ।  
वाव अदं अस्सिदं वं वाव अदं अस्सिदं वीव व ।  
सदसं कुसं सवदं स्येदं सुदं सुअं वावसं स्येदं दे ।  
असं वी वदं गीसं सुदं गीसं वगी वरं सु ।

जिसकी जाल फैलानेवाली विषरूपी तृष्णा कहीं भी ले जाने लायक नहीं रही; उस अपद ( = स्थान रहित ), अनन्तगोचर ( अनन्त दृष्टा ) बुद्ध को किस पथ से प्राप्त करोगे ?

In whom there is no entangling poisonous craving to lead to any involvement, that Buddha of limitless sphere of activity who is without fixed abode, by what path will you lead him astray ?

P 112 ( XXIX, 57 )

P 96 V 180

वाव अदं अस्सिदं सुदं स्येदं व वी ।  
सुअं स्येदं द्वा वं अवाव स्येदं वा ।  
सदसं कुसं सुदं सुअं सवदं असं दे ।  
अस्सिदं स्येदं वीसं व वदं गीसं वगी ।

ये ज्ञानपसुता धीरा, नेक्खम्मूपसमे रता ।  
देवा पि तेसं पिहयन्ति, सम्बुद्धानं सतीमतं ॥३॥

संकाश्य नगर

देव, मनुष्य

ये ध्यानप्रसिता धीरा नैक्कम्म्योपशमे रताः ।  
देवा अपि स्पृहयन्ति संबुद्धानां स्मृतिमताम् ॥

सुद्धिं विरजयन्त्यस्य भवन्ति ।

सुद्धिं विरजयन्त्यस्य भवन्ति ।

सुद्धिं विरजयन्त्यस्य भवन्ति ।

सुद्धिं विरजयन्त्यस्य भवन्ति ।

सुद्धिं विरजयन्त्यस्य भवन्ति ।

जो धीर ध्यान में लग्न, निष्कर्मता और उपशम में रत हैं, उन स्मृतिमानों  
(=सचेत) बुद्धों की देवता भी स्पृहा (=होड़) करते हैं ।

Even the gods emulate those wise ones who are devoted to meditation, who delight in the calm of non-activity, the mindful, perfect Buddhas.

किच्छो मनुस्सपटिलाभो, किच्छं मच्चान जीवितं ।

किच्छं सद्धम्मस्सवनं, किच्छो बुद्धानमुप्पादो ॥४॥

वाराणसी

एरकपत्त ( नागराज )

कृच्छो मनुष्यप्रतिलाभः कृच्छं मर्त्यानां जीवितम् ।

कृच्छं सद्धर्मश्रवणं कृच्छो बुद्धानां उत्पादः ॥

मनुस्सपटिलाभो मनुस्सपटिलाभो ।

मनुस्सपटिलाभो मनुस्सपटिलाभो ।

मनुस्सपटिलाभो मनुस्सपटिलाभो ।

मनुस्सपटिलाभो मनुस्सपटिलाभो ।

मनुस्सपटिलाभो मनुस्सपटिलाभो ।

मनुष्य (योनि) का लाभ कठिन है, मनुष्य का जीवन (मिलना) कठिन है, सच्चा धर्म सुनने को मिलना कठिन है, बुद्धों ( = परम ज्ञानियों ) का जन्म कठिन है ।

Difficult to obtain is birth as a human being, difficult is the life of mortals. It is difficult to hear the Holy Dharma. Difficult ( i. e. rare ) is the appearance of the Buddhas ( or, it is difficult for beings to make Buddhahood arise in themselves).

सबपापस्त अकरणं, कुशलस्त उपसम्पदा ।

सचित्तपरियोदपनं, एतं बुद्धान सासनं ॥५॥

जेतवन

आनन्द ( थेर ) का प्रश्न

सर्वपापस्याकरणं

कुशलभ्योपसम्पदा ।

स्वचित्तपर्यवदापनं एतद् बुद्धानां शासनम् ॥

सुयं सुदेकं वदुं गुणं दमयिष्यामि ।

स्त्रीयं वदुं यदं विदुं ।

दमो वदुं सुखं सुखं क्लेशं वदुं ।

दमं वदुं श्रेयसं विदुं यदं सुदुमं ।

दमं विदुं यदं सुखं वदुं वदुं ।

सारे पापों का न करना, पुण्य का संचय करना, अपने चित्त को परिशुद्ध करना, यह है बुद्धों की शिक्षा ।

Not to do any evil whatsoever, to cultivate virtue and everything admirable, and to fully purify one's mind this is the teaching of the Buddha.

P 97 ( XXVIII. 1 )

P 98 V 183

स्त्रीयं वदुं यदं विदुं ।

दमो वदुं सुखं सुखं क्लेशं वदुं ।

दमं वदुं श्रेयसं विदुं यदं सुदुमं ।

दमं विदुं यदं सुखं वदुं वदुं ।

खन्ती परमं तपो तितिक्षा,  
 निब्बानं परमं वदन्ति बुद्धा ।  
 न हि पब्वजितो परूपघाती,  
 समणो होति परं विहेठयन्तो ॥६॥

चेतवन

आनन्द ( थेर )

क्षान्तिः परमं तपः तितिक्षा निर्वाणं परमं वदन्ति बुद्धाः ।  
 नहि प्रव्रजितः परोपघाती श्रमणो भवति परं विहेठयन् ॥

བཟོད་པ་དཀའ་ཐུབ་དམ་པ་བཟོད་པ་ནི།                     ।  
 སྤངས་པ་མཆོག་ཅེས་སངས་རྒྱལ་གསུངས།  
 རབ་དུ་བྱུང་བ་གཞན་ལ་གནོད་པ་ངང་།                     ।  
 གཞན་ལ་འཛོལ་དགོས་པ་སྤངས་པ་ཡིན་ནོ།                     ।

क्षमा परम तप और तितिक्षा है, बुद्ध निर्वाण को परम ( = उत्तम )  
 बतलाते हैं; दूसरे का घात करने वाला; दूसरे को पीड़ित करने वाला प्रव्रजित  
 ( = गृहत्यागी ) श्रमण ( = संन्यासी ) नहीं हो सकता ।

Forbearing patience is the highest asceticism. The Buddha  
 said that it is the supreme Nirvana. For he is not a renunciate  
 who harms another, nor is he a virtuous ascetic who molests  
 others.

P 86 ( XXVI, 2 )

P 98 V 184

བཟོད་པ་དཀའ་ཐུབ་མཆོག་ཅེས་བཟོད་པ་ནི།                     ।  
 སྤངས་པ་མཆོག་ཅེས་སངས་རྒྱལ་གསུངས།  
 རབ་དུ་བྱུང་བ་གཞན་ལ་འཛོལ་བ་ནི།                     ।  
 གཞན་ལ་གནོད་པ་སྤངས་པ་སྤངས་པ་ཡིན་ནོ།                     ।



अनूपवादो अनूपघातो, पातिमोक्खे च संवरौ ।  
 मत्तञ्जुता च भत्तस्मि, पन्तं च शयनासनं ।  
 अधिचित्ते च आयोगो, एतं बुद्धान सासनं ॥७॥

अनूपवादोऽनुपघातः प्रातिमोक्षे च संवरः ।  
 मात्राज्ञता च भक्ते प्रान्तं च शयनासनम् ।  
 अधिचित्ते चायोग एतद् बुद्धानां शासनम् ॥

སྒྲོཏ་པར་མི་བྱ་བ་དེག་མི་བྱ། ।  
 སོ་སོར་ཐར་བ་ཡང་དག་སྒྲོམ། ।  
 ཟས་ཀྱི་ཚད་ནི་རིག་བ་དང་། ।  
 བས་མཐའ་དག་དུ་གནས་མཁ་བྱ། ।  
 ལྷག་པའི་བསམ་བ་ཡང་དག་སྒྲུར། ।  
 འདི་ནི་སངས་རྒྱས་བཟུན་བ་ཡིན། ।

निन्दान करना, घात न करना, प्रातिमोक्ष (=भिक्षु-नियम, आचार-  
 नियम) द्वारा अपने को सुरक्षित रखना, परिमाण जानकर भोजन करना,  
 एकान्त में सोना-बैठना (=शयनासन=निवासगृह); चित्त को योग में लगाना,  
 यह बुद्धों की शिक्षा है ।

Not to insult, not to harm, restraint according to Funda-  
 mental precepts (Pratimoksa), moderation in food, secluded  
 abode, to purely practise excellent thoughts, this is the teaching  
 of the Buddha.

P 199 (XXXI, 54)

P 99 V 185

སྒྲུར་བ་མི་གདབ་གནོད་མི་བྱ། ।  
 སོ་སོར་ཐར་བས་བསྒྲམ་བར་བྱ། ।  
 ཟས་ཀྱི་ཚད་ཀྱང་ཤེས་བར་བྱ། ।  
 བས་མཐའ་དགོན་བར་གནས་བྱ་ཞིང་། ।  
 ལྷག་པའི་སེམས་ལ་རྣལ་འབྱོར་བྱ། ।  
 འདི་ནི་སངས་རྒྱས་བཟུན་བ་ཡིན། ।

न कहापणवस्सेन, तित्ति कामेसु विज्जति ।

अप्पस्सादा दुखा कामा, इति विज्जाय पण्डितो ॥८॥

जेतवन

( उदास भिक्षु )

न कार्षापणवर्षेण तृप्तिः कामेषु विद्यते ।

अल्पास्वादा दुःख कामा इति विज्ञाय पण्डितः ॥

शुभं भवेत्तु ।

गुरुं वं नरेन्द्रं ववसं गुरुं ।

नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं ।

गुरुं वं नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं ।

नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं ।

यदि रूपयों ( = कहापण ) की वर्षा हो, तो भी ( मनुष्य ) की कामों ( = भोगों ) से तृप्ति नहीं हो सकती । ( सभी ) काम ( = भोग ) अल्प स्वाद ( और ) दुःख है ऐसा कह पंडित देवताओं के भोगों में रति नहीं करता ।

Even a shower of gold coins cannot satisfy the desires. The wise know that desire means little pleasure and long experience of suffering.

P 10 ( II, 17 )

P 99 V 186

गुरुं वं नरेन्द्रं ववसं गुरुं ।

नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं ।

नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं ।

नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं नरेन्द्रं वं ।

अपि दिव्येषु कामेषु, रतिं सो नाधिगच्छति ।  
तण्हक्खयरतो होति, सम्मासम्बुद्धसावको ॥६॥

अपि दिव्येषु कामेषु रतिं सनाऽधिगच्छति ।  
तृष्णाक्षयरतो भवति सम्मासम्बुद्धसावको ॥

झुं.पै.अरे.व.दवा.अ.अ. ।      ।  
रे.पै.स.दवा.अ.अ.व.रे.व.रे.दवा. ।      ।  
रे.पै.स.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ. ।      ।  
रे.व.अ.अ.व.दवा.अ.दवा. ।      ।

...सम्यक् संबुद्ध का श्रावक ( = अनुयायी ) तृष्णा को नाश करने में  
लगता है ।

( These wise ones ) realise that even the pleasures of the  
gods are without ( real ) happiness. The disciples of the Fully  
Enlightened Buddha delight only in the destruction of craving.

P 10 ( IL 18 )

P 100 V 187

झुं.पै.अरे.व.अ.अ.अ.अ.अ.अ. ।      ।  
झुं.पै.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ. ।      ।  
झुं.पै.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ. ।      ।  
झुं.पै.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ.अ. ।      ।

बहुं वे शरणं यन्ति, पर्वतानि वनानि च ।  
आरामवृक्षचैत्यानि, मनुस्सा भयतज्जिता ॥१०॥

जेतवन

अग्निदत्त ( ब्राह्मण )

बहु वै शरणं यन्ति पर्वतान् वनानी च ।  
आरामवृक्षचैत्यानि मनुष्या भयतज्जिता ॥

शुभं भुङ्क्ते ऋषयः पुत्रसंभवे ।

देवदत्तः कृष्णः देवः सौमित्रः देवः ।

गुरुः देवः देवः सौमित्रः देवः ।

देवदत्तः कृष्णः देवः सौमित्रः देवः ।

देवदत्तः कृष्णः देवः सौमित्रः देवः ।

मनुष्य भय के मारे पर्वत, वन, आराम ( = उद्यान ), वृक्ष, चैत्य  
( = चौरा ) ( आदि को देवता मान उसकी ) शरण में जाते हैं; किन्तु ये शरण  
मंगलदायक नहीं ।

To many a refuge do men go when tormented by fear, to  
hills and woods, to gardens, trees, and shrines.

P 96 ( XXVII, 28 )

P 100 V 188

देवदत्तः कृष्णः देवः सौमित्रः देवः ।

देवदत्तः कृष्णः देवः सौमित्रः देवः ।

देवदत्तः कृष्णः देवः सौमित्रः देवः ।

देवदत्तः कृष्णः देवः सौमित्रः देवः ।

नेतं खो शरणं खेमं, नेतं शरणमुत्तमं ।  
नेतं शरणमागम्य, सब्बदुक्खा पमुच्चति ॥११॥

नैतत् खलु शरणं खेमं नैतत् शरणमुत्तमम् ।  
नैतत् शरणमागम्य सर्वदुःखात्प्रमुच्यते ॥

ॠद्विंशत्तमोऽध्यायः ।  
श्रुत्वा भगवत्पुत्रोऽपि भगवत्पुत्रं ।  
ॠद्विंशत्तमोऽध्यायः ।  
श्रुत्वा भगवत्पुत्रोऽपि भगवत्पुत्रं ।

...ये शरण उत्तम नहीं; ( क्योंकि ) इन शरणों में जाकर सब दुःखों से छुटकारा नहीं मिलता ।

But such are no secure refuge, such are no refuge supreme. Resorting to such a refuge one is not released from all sorrow.

P 96 ( XXVII, 29 )

P 101 V 189

श्रुत्वा भगवत्पुत्रोऽपि भगवत्पुत्रं ।  
श्रुत्वा भगवत्पुत्रोऽपि भगवत्पुत्रं ।  
ॠद्विंशत्तमोऽध्यायः ।  
श्रुत्वा भगवत्पुत्रोऽपि भगवत्पुत्रं ।

यो च बुद्धं च धम्मं च, सङ्घं च शरणं गतो ।

चत्तारि अरियसच्चानि, सम्मप्पञ्चाय पस्सति ॥१२॥

यश्च बुद्धं च धर्मं च संघं च शरणं गतः ।

चत्वार्यार्यसत्यानि सम्यक् प्रज्ञया पश्यति ॥

सदसः कृषः कॅसः दः दमोः अदुक्कः ।

मदः मीसः सुवसः सुः सोः वः यीसः ।

सुमः वसुअः सुमः वसुअः गुक्कः अमुदः दः ॥

सुमः वसुअः रवः दुः अदसः वः दः ।

जो बुद्ध ( = परमज्ञानी ), धर्म ( = सत्यवान ) और संघ ( = परम-  
ज्ञानियों के अनुयायियों के समुदाय ) की शरण गया, जो चारों आर्य सत्त्यों को  
प्रज्ञा से भली प्रकार देखता है ।

He who takes refuge in the Buddha, the Dharma and the  
Sangha, perceives, in his clear wisdom, the four noble Truths.

P 96 ( XXVII, 30 )

P 101 V 190

मदः लेमः सदसः कृषः कॅसः दः कै ।

दमोः अदुक्कः अः कै सुवसः सोः कै ।

सुमः वसुअः सुमः वसुअः गुक्कः अमुदः दः ॥

सुमः वसुअः अदः दमः अदसः वः दः ।

दुःखं दुःखसमुत्पादं, दुःखस्स च अतिक्रमं ।  
अरियं चट्ठङ्गिकं मगं, दुःखूपसमगामिनं ॥१३॥

दुःख दुःखसमुत्पादं दुःखस्य चातिक्रमम् ।  
आर्याष्टांगिकं मार्गं दुःखोपशमगामिनम् ॥

दुःखं दुःखसमुत्पादं दुःखस्य चातिक्रमम् ।  
आर्याष्टांगिकं मार्गं दुःखोपशमगामिनम् ॥  
दुःखं दुःखसमुत्पादं दुःखस्य चातिक्रमम् ।  
आर्याष्टांगिकं मार्गं दुःखोपशमगामिनम् ॥

( १ ) दुःख, ( २ ) दुःख की उत्पत्ति, ( ३ ) दुःख का अतिक्रमण, और  
( ४ ) दुःख नाशक आर्य अष्टांगिक मार्ग—जो दुःख को शमन करने की ओर ले  
जाता है ।

There are suffering, the origin of suffering, the cessation  
of suffering and the Noble Eightfold Path, which leads to the  
cessation of suffering. ( right views, right aspirations, right  
speech, right action, right living, right exertion, right  
recollection and right meditation ).

P 96 ( XXVII, 30 )

P 101 V 191

दुःखं दुःखसमुत्पादं दुःखस्य चातिक्रमम् ।  
आर्याष्टांगिकं मार्गं दुःखोपशमगामिनम् ॥  
दुःखं दुःखसमुत्पादं दुःखस्य चातिक्रमम् ।  
आर्याष्टांगिकं मार्गं दुःखोपशमगामिनम् ॥

एतं खो सरणं खेमं, एतं सरणमुत्तमं ।

एतं सरणमागम्म, सब्बदुक्खा पमुच्चति ॥१४॥

एतत् खलु शरणं क्षेमं एतत् शरणमुत्तमम् ।

एतत् शरणमागम्य सर्वदुःखात् प्रमुच्यते ॥

འདི་དག་དག་པའི་སྐབས་ཡིན་ཏེ།

ལྷན་སྐྱོད་གྲི་མཐར་ཐུག་འདི་དག་ཡིན།

འདི་དག་སྒྲུབ་སྟེ་སོང་བ་ཡིས།

ཕྱག་པུན་ཀུན་ལས་རབ་གྱིལ་འབྱུང་།

ये हैं मंगलप्रद शरण, ये हैं उत्तम शरण, इन शरणों को पाकर (मनुष्य) सारे दुःखों से छूट जाता है ।

That indeed is a secure refuge, that is the supreme refuge. On having gone to that refuge a man is freed from all sorrows.

P 96 ( XXVII, 30 )

P 101 V 192

དེ་ནི་ལྷ་པ་ཀྱི་མཆོག་ཡིན་ཞིང་།

དེ་ནི་སྐབས་ཀྱི་དམ་པ་ཡིན།

ཕྱི་རྒྱལ་སྤྲེའོ་བ་ཡིས།

ཨེ་ག་པལ་པ་ཀུན་ལས་ལྷོ་པ་ཐུག་།



दुर्लभो पुरिसाजञ्जो, न सो सब्बत्थ जायति ।  
यत्थ सो जायति धीरो, तं कुलं सुखमेधति ॥१५॥

जैतवन

आनन्द ( थेर )

दुर्लभः पुरुषाजानेयो न स सर्वत्र जायते ।  
यत्र स जायते धीरः तत् कुलं सुखमेधते ॥

ཀུལ་བྱེད་ཚལ་དུ་འོ།

སྤྱིས་སྤྱ་ཅང་ཤེས་རྟེན་བར་དཀའ། ।  
ཐམས་ཅད་ཀུན་དུ་དེ་མི་འབྱུངས། ।  
གང་དུ་བརྟན་བ་དེ་འབྱུངས་བའི། ।  
རིགས་དེ་རྣམས་ལ་བདེ་བ་འཕྲེལ། ।

उत्तम पुरुष दुर्लभ है, वह सर्वत्र उत्पन्न नहीं होता; वह धीर (पुरुष) जहाँ उत्पन्न होता है, उस कुल में सुख की वृद्धि होती है ।

Hard to find is an intelligent man. He is not born everywhere. Where such a wise man is born that family thrives happily.

P 117 ( XXX, 28 )

P 103 V 193

སྤྱིས་སྤྱ་ཅང་ཤེས་དཀོན་བ་སྤྱེ། ।  
དེ་དག་ཀུན་དུ་འབྱུང་མ་ཡིན། ।  
བརྟན་བ་རྣམས་དང་འབྲོགས་བ་དག། ।  
གཉེན་དང་འཕྲད་བ་ལྟ་བུར་བདེ། ।  
གང་དུ་བརྟན་བ་དེ་སྤྱིས་བ། ।  
དེ་ཡི་རིགས་ཀྱིས་བདེ་བ་ཐོབ། ।

सुखो बुद्धानमुत्पादो, सुखा सद्धम्मदेसना ।  
सुखा सङ्घस्स सामग्गो, समग्गानं तपो सुखो ॥१६॥

जेतवन

बहुत से भिक्षु

सुखो बुद्धानां उत्पादः सुखा सद्धर्म-देशना ।  
सुखा संघस्य सामग्गी समग्गाणां तपः सुखम् ॥

सदसं क्रुसं अत्तुदं वं वदे वं ह्ये । ।  
दसं वदे क्खं वं वदे वं ह्ये । ।  
दग्गे अत्तुदं वं वदे वं ह्ये । ।  
वत्तुदं वं वं वं वं वं वं वं वं वं वं वं । ।

सुखदायक है बुद्धों का जन्म, सुखदायक है सच्चे धर्म का उपदेश, संघ में  
एकता सुखदायक है और सुखदायक है एकतायुक्त हो तप करना ।

Joyful is the birth of the Buddha ( or the arising of Buddhahood ). Joyful is the teaching of the Holy Dharma. Joyful is the harmony of the Sangha. Joyful is the Dharma practice of those who live in harmony.

P 116 ( XXX, 23 )

P 103 V 194

सदसं क्रुसं क्खं वं अत्तुदं वं वदे । ।  
दं वदे क्खं क्खं वं वदे वं वदे । ।  
दग्गे अत्तुदं क्खं वं वत्तुदं वं वदे । ।  
वत्तुदं वं क्खं वं वं वं वं वं वं वं वं वं वं । ।

पूजारहे पूजयतो, बुद्धे यदि व सावके ।

पपञ्चसमतिक्कन्ते, तिण्णसोकपरिट्ठवे ॥१७॥

चारिका के समय

कस्सप बुद्ध का सुवणं चैत्थ

पूजार्हन्ति पूजयतो बुद्धान् यदि वा श्रावकान् ।

प्रपञ्चसमतिक्रान्तान् तीर्णशोकपरिद्रवान् ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

सुखं वत्सलं मम नमो नमो नमो नमो ।

सुखं नमो नमो नमो नमो नमो नमो ।

सुखं नमो नमो नमो नमो नमो नमो ।

सुखं नमो नमो नमो नमो नमो नमो ।

पूजनीय बुद्धों, अथवा (उनके) अनुगामियों—जो संसार को अतिक्रमण कर गये हैं, जो शोक भय को पार कर गये हैं ।

He who pays homage to those who are worthy of homage, whether the Buddhas or their disciples, who having completely gone beyond all relative positions (of existence, non-existence etc.), have totally finished with craving and sorrow.

ते तादिसे पूजयतो, निब्बुते अकुतोभये ।  
न सक्का पुञ्जं सद्धातुं, इमेत्तमपि केनचि ॥१८॥

तान् तादृशान् पूजयतो निर्वृतान् अकुतोभयान् ।  
न शक्यं पुण्यं संख्यातुं एवम्मात्रमपि केनचित् ॥

གང་ལ་མི་འདྲིམས་སྤང་འདས་པ། ।  
དེ་ནམས་དེ་ལྷར་མཆོད་པ་ཡི། ।  
བསོད་ནམས་འདི་འདྲ་དག་གི་ཚད། ।  
སྤྲུམ་ཁྱད་བཟུང་བར་བྱས་མ་ཡིན། ।

སངས་ཀྱི་མེ་ཚན་དེ།

ལེུ་བུ་བཞི་བའོ ॥

उनकी पूजा के, (या) उन ऐसे मुक्त निर्भर (पुरुषों) की पूजा के, पुण्य का परिमाण" इतना है"—यह नहीं कहा जा सकता ।

By paying this homage to such as these who are Liberated and fearless, he gains merit which cannot be measured by anyone.

१५—सुखवग्गो

सुसुखं वत जीवाम, वेरिनेसु अवेरिनो ।  
वेरिनेसु मनुस्सेसु, विहराम अवेरिनो ॥१॥

## शाक्य नगर

### जाति-कलह के उपशमनार्थ

सुसुखं वत ! जीवामो वैरिष्ववैरिणः ।  
वैरिषु मनुष्येषु विह्वरामोऽवैरिणः ॥

ཤུགས་ཐོང་དུ་ལོ།

དགྲ་ལ་དགྲ་ཅ་མི་བྱེད་པ། །  
 ཨེ་མ་བདག་ཅག་བདེ་བར་འཛོ། །  
 དགྲ་བོའི་མི་ཡི་ནང་དུ་ཡང་། །  
 བདག་ཅག་དགྲ་དང་བྲལ་བར་གནས། །

वैरियों के प्रति ( भी ) अवैरी हो, अहो ! हम ( जैसा ) सुखपूर्वक जीवन बिता रहे हैं; वैरी मनुष्यों के बीच अवैरी होकर हम विहार करते हैं ।

Happily do we live free from enmity amongst those who hate. **A**midst hateful men we dwell without hate.

P 119 ( XXX, 46 )

P 105 V 197

འཆོ་བ་ཅན་གྱི་མི་ནང་ན། །  
 འཆོ་བ་མེད་བར་གནས་བ་དང་། །  
 འཆོ་བའི་ནང་ན་ནད་མེད་བ། །  
 གྱུ་མའོ་ཤིན་དུ་བདེ་བར་འཆོ། །

सुसुखं वत जीवाम, आतुरेसु अनातुरा ।

आतुरेसु मनुस्सेसु विहराम अनातुरा ॥२॥

सुसुखं वत ! जीवाम आतुरेष्वनातुराः ।

आतुरेषु मनुष्येषु विहरामोऽनातुराः ॥

གཞན་ལ་གཞན་པར་སྤྱད་པ། ।

ཨོ་ས་བདག་ཅག་བདེ་བར་འཆོ། ।

གཞན་བྱད་སྤྱི་ཡི་ནང་དུ་ཡང་། ।

བདག་ཅག་གཞན་པ་མེད་པར་གནས། ।

वैरियों के प्रति (भी) अवैरी हो, अहो ! हम ( जैसा ) सुखपूर्वकं जीवन बिता रहे हैं; वैरी मनुष्यों के बीच अवैरी होकर हम विहार करते हैं ।

Happily do we dwell in good health amongst the diseased.  
Amidst diseased men we dwell in good health. ( The diseases here are the troublesome passions of desire, hatred, ignorance and their kindred. )

P 119 ( XXX. 45 )

P 105 V 198

ནད་ཀྱིས་ཐེགས་བའི་སྤང་ན། ।

ནད་མེད་པར་ནི་གནས་བ་དང་། ।

ནད་བའི་ནང་ན་ནད་མེད་པ། ।

ཀྱི་མཐོ་ཤིན་དུ་བདེ་བར་འཆོ། ।

सुसुखं वत जीवाम, उस्सुकेसु अनुस्सुका ।

उस्सुकेसु मनस्सेसु, विहराम अनुस्सुका ॥ ३ ॥

सुसुखं वत ! जीवाम उत्सुकेष्वनुत्सुकाः ।

उत्सुकेषु मनुष्येषु विहराम अनुत्सुकाः ॥

རྟེན་ལ་རྟེན་པར་མི་བྱེད་པ།

ཡེ་མ་བདག་ཅག་བདེ་ཐར་འཛོ།

རྒྱལ་སྐྱོང་གི་མི་ཡི་ནང་དུ་ཡང་།

བདག་ཅག་གཏོག་འདྲོད་བྱལ་བར་གནས། །

भयभीत मनुष्यों में अभय हो, अहो ! हम सुखपूर्वक जीवन बिता रहे हैं; भयभीत मनुष्यों के बीच निर्भय होकर हम विहार करते हैं। उत्सुकों (=आसक्तों) में उत्सुका रहित हो।

Happily do we dwell without yearning ( for sensual pleasures ) amongst those who yearn ( for them ). Amidst those who yearn ( for them ) we dwell without yearning.

P 119 ( XXX, 44 )

P 106 V 199

ཉིན་པར་གྱུར་པའི་མི་ནང་ན།

ཞེན་པ་མེད་པར་གནས་པ་དང་། །

ཞེན་པའི་ནང་ན་མ་ཞེན་པ།

ཀྱི་མཐོ་ཤིན་ད་བདེ་བར་འཛོ།

सुसुखं वत जीवाम, येसं नो नास्ति किञ्चन ।  
प्रीतिभक्ष्या भविस्साम, देवा आभास्सरा यथा ॥४॥

पंचशाला ( ब्राह्मणग्राम, मगध )

मार

सुसुखं वत ! जीवामो येषां नो नास्ति किञ्चन ।  
प्रीतिभक्ष्या भविष्यामो देवा आभास्वरा यथा ॥

गदः पठि पदः स्रेयः सुदः प । ।  
जेः सः वदगः उगः वदेः वरः दको । ।  
देः गसः पः ग्रेः केः ह्यः वलेः दः । ।  
वदगः उगः दगः वः वः वरः सुदः । ।

जिन हम ( लोगों ) के पास कुछ नहीं, अहो ! अहो ! वह हम कितना  
सुख से जीवन बिता रहे हैं । हम आभास्वर देवताओं की भाँति प्रीतिभक्ष्य  
( = प्रीति ही भोजन है जीवनका ) हैं ।

Happily do we dwell, we who are without anything ( ie.  
without any involment in the cycle of conditioned existence ).  
Let us live feeding on happiness like the radiant gods.

P 120 ( XXX, 50 )

P 106 V 200

गदः पठि पदः स्रेयः सुदः ग्रे । ।  
दगः वः वः वरः सुदः वसः दः । ।  
देः गसः पः ग्रेः केः ह्यः वलेः दः । ।  
ग्रेः सः देः सुदः वदेः वरः दको । ।



जय वैरं पसवति, दुःखं सेति पराजितो ।  
उपशान्तो सुखं सेति, हित्वा जयपराजयं ॥५॥

जितवन

कोसलराज

जयो वैरं प्रसूते दुःखं शेते पराजितः ।  
उपशान्तः सुखं शेते हित्वा जयपराजयो ॥

མཉམ་པོད་དུ་གསལ་ཀྱང་ལའོ།

ཀྱང་བ་ཡིས་ནི་དབྱ་བོ་འབྱིན། ।

པ་རྩོལ་ཀྱང་བ་སྐྱུག་བསྐྱལ་ཉལ། ।

ཀྱང་དང་པས་བ་བོར་བྱས་ནས། ।

ཉེ་བར་ཞི་བ་བདེ་བར་གཟིམ། ।

विजय वैर को उत्पन्न करती है, पराजित (पुरुष) दुःख की (नींद) सोता है; (राग आदि दोष जिसके) शान्त ( हैं, वह पुरुष ) जय और पराजय को छोड़ सुख की (नींद) सोता है ।

Victory breeds hatred; the defeated live in pain. Happily the peaceful live, having giving up victory and defeat.

P 113 ( XXX, 1 )

P 107 V 201

ཀྱང་བ་ཡིས་ནི་ཁོ་འབྱུང་ཞིང་། ।

པ་རྩོལ་པས་བ་སྐྱུག་བསྐྱལ་བྲོལ། ।

ཀྱང་དང་པ་རྩོལ་འཕམ་སྤངས་ནས། ।

ཉེ་བར་ཞི་བའི་བདེ་བ་བྲོལ། ।

नत्थि रागसमो अग्नि, नत्थि दोससमो कलि ।

नत्थि खन्धसमा दुक्खा, नत्थि सन्तिपरं सुखं ॥६॥

जैतवन

कोई कुलकन्या

नास्ति रागसमोऽग्निः, नास्ति द्वेषसमा कलिः ।

नास्ति स्कन्धसमा दुःखाः, नास्ति शान्तिपरं सुखम् ॥

ब३क० अ३३० दु० री० रा० गृ० सु० म० अ३३० ।

अ३३० क० रा० अ३३० व० री० म० अ३३० ॥ १

मि० व० अ३३० व० री० अ३३० क० अ३३० ॥ १

सु० व० अ३३० व० री० सु० रा० व० अ३३० ॥ १

मि० व० अ३३० सु० रा० व० री० व० अ३३० ॥ १

राग के समान अग्नि नहीं, द्वेष के समान मल नहीं, ( पाँच ) स्कन्धों  
( ६ समुदाय ) के समान दुःख नहीं, शान्ति से बढ़कर सुख नहीं ।

There is no fire like lust, no crime like hatred. There is no misery like physical existence, no bliss higher than peace ( Nirvana ).

जिघच्छा परमा रोगा, सङ्खरा परमा दुखा ।  
एतं ज्ञत्वा यथाभूतं, निब्बानं परमं सुखं ॥७॥

आलवी

एक उपासक

जिघत्सा परमो रोगः, संस्कारः परमं दुःखम् ।  
एतद् ज्ञात्वा यथाभूतं निर्वाणं परमं सुखम् ॥

सग्गेसं वं कं गुं सुं मेसं दे । ।

अप्पेसं वं कं गुं मेसं दे । ।

अप्पेसं वं कं गुं मेसं दे । ।

अप्पेसं वं कं गुं मेसं दे । ।

भूख सबसे बड़ा रोग है, संस्कार सबसे बड़ा दुःख है, यह जान, यथार्थ निर्वाण को सबसे बड़ा सुख ( कहा जाता ) है ।

Insatiability is the greatest disease. Propensities (samskara the organising attitudes of mind) are the greatest sorrow. Knowing this as it really is, the wise realise Nirvana, the bliss supreme.

P 87 ( XXVI, 7 )

P 108 V 203

अप्पेसं वं कं गुं मेसं दे । ।

अप्पेसं वं कं गुं मेसं दे । ।

अप्पेसं वं कं गुं मेसं दे । ।

अप्पेसं वं कं गुं मेसं दे । ।

आरोग्यपरमा लाभा, सन्तुष्टिपरमं धनं ।

विस्सासपरमा वाति, निब्बानं परमं सुखं ॥८॥

## जेतवन

( पसेनदि कोसलराज )

आरोग्यं परमो लाभः, सन्तुष्टिः परमं धनम् ।

विश्वासः परमा ज्ञातिः, निर्वाणं परमं सुखम् ॥

གོ་ས་ལར་གསལ་བྱུང་ལོ།

ནད་མེད་པ་ནི་ཉེད་པའི་མཆོག།

ཆོག་ཤེས་པ་ནི་ནོར་གྱི་མཆོག་ །

མཛེལ་བའི་གྲོགས་ཅི་གཉེན་གྱི་མཆོག

མུ་ངན་འདས་པ་བདེ་བའི་མཚོག

निरोग होना परम लाभ है, सन्तोष परम धन है, विश्वास सबसे बड़ा बन्धु है, निर्वाण परम (=सबसे बड़ा) सुख है।

Health is the highest gain, contentment is the greatest wealth. Reliable friends are the best kinsmen, Nirvana is the supreme happiness.

P 87 ( XXVI, 6 )

P 108 V 204

ནད་མེད་ཉེད་པའི་དམ་པ་ཏེ།

ཆོག་གེས་པ་ནི་ནོར་ཕྱི་དབྱིག

ཡིད་གཙུག་ས་བཤེས་བའི་མཆོག་ཡིན་དེ།

ཡུ་རྟ་འདས་པ་བདེ་བའི་ཐུག།

प्रविवेकरसं पित्वा, रसं उपसमस्स च ।  
निर्दरो होति निष्पापो, धम्मप्रीतिरसं पिवं ॥६॥

वैशाली

( तिस्स थेर )

प्रविवेकरसं पीत्वा रसं उपशमस्य च ।  
निर्दरो भवति निष्पापो धर्मप्रीतिरसं पिवन् ॥

एकान्तं च तद्वद्विद्वत्पुण्यं च ।

एवमुक्तं विद्वत्पुण्यं च ।

तत्रैव विद्वत्पुण्यं च ।

तत्रैव विद्वत्पुण्यं च ।

तत्रैव विद्वत्पुण्यं च ।

एकान्त ( चिन्तन ) के रस, तथा उपशम ( =शान्ति ) के रस को पीकर  
( पुरुष ) निडर होता है, ( और ) धर्म का प्रेमरस पानकर निष्पाप होता है ।

Having tasted the flavour of complete solitude, and the  
flavour of tranquility, by then imbibing the bliss of Dharma's  
flavour one becomes free from fear and sin.

साधु दस्सनमरियानं, सन्निवासो सदा सुखो ।

अदस्सनेन बालानं निच्चमेव सुखी सिया ॥१०॥

वेलुवग्राम ( वेणुग्राम, वैशाली के पास )

सक्क ( देवराज )

साधु दर्शनमार्याणां सन्निवासः सदा सुखः ।

आदर्शनेन बालानां नित्यमेव सुखी स्यात् ॥

अथगसं वं कससं किं सस्येदं वं अथगसं । ।

अदं दगं अथगसं वं दगं दुं वदे । ।

अथगसं वं कससं किं सस्येदं वं । ।

दगं दुं वदे वं अथगसं । ।

आर्यों ( सत्पुरुषों ) का दर्शन सुन्दर है. सन्तों के साथ निवास सदा सुखदायक होता है; मूर्खों के अदर्शन होने से ( मनुष्य ) सदा सुखी रहता है ।

It is good to see the noble ones ( Aryas ), their pure company is always happy. By not seeing fools always be happy.

P 116 ( XXX, 26 )

P 109 V 206

अथगसं वं कससं किं सस्येदं वं वदे । ।

दसं वं दगं ददं अथगसं वं वदे । ।

अथगसं वं कससं किं सस्येदं वं । ।

दगं दुं वदे वं अथगसं । ।

बालसङ्गतचारी हि, दीर्घमद्धान सोचति ।  
 दुःखो बालेहि संवासो, अमित्तेनेव सब्बदा ।  
 धीरो च सुखसंवासो, जातीनं व समागमो ॥ ११ ॥

बालसंगतिचारी हि दीर्घमध्वानं शोचति ।  
 दुःखो बालैः संवासोऽमित्रेणैव सर्वदा ।  
 धीरश्च सुखसंवासो ज्ञातीनामिव समागमः ॥

सुखं न च दुःखं चैव संवासो ॥ १ ॥

दुःखं न च सुखं चैव संवासो ॥ २ ॥

सुखं न च दुःखं चैव संवासो ॥ ३ ॥

दुःखं न च सुखं चैव संवासो ॥ ४ ॥

सुखं न च दुःखं चैव संवासो ॥ ५ ॥

दुःखं न च सुखं चैव संवासो ॥ ६ ॥

मूर्खों की संगति में रहनेवाला दीर्घकाल तक शोक करता है, मूर्खों का सहवास शत्रु की तरह सदा दुःखदायक होता है, बन्धुओं के समागम की भाँति धीरों का सहवास सुखद होता है ।

If one consorts with fools one will suffer for a long time. Association with fools, as with foes, is always painful. The company of the steadfast is pleasurable, like meeting with kinsmen.

P 85 ( XXV, 24 )

P 110 V 207

सुखं न च दुःखं चैव संवासो ॥ १ ॥

दुःखं न च सुखं चैव संवासो ॥ २ ॥

सुखं न च दुःखं चैव संवासो ॥ ३ ॥

दुःखं न च सुखं चैव संवासो ॥ ४ ॥

सुखं न च दुःखं चैव संवासो ॥ ५ ॥

दुःखं न च सुखं चैव संवासो ॥ ६ ॥

तस्मा हि-

धीरं च पञ्चं च बहुश्रुतं च,  
धोरहसीलं व्रतवन्तमार्यम् ।  
तं तादिसं सत्पुरिसं सुमेधं,  
भजेथ नक्षत्रपथं च चान्दिमा ॥१२॥

तस्माद्धि धीरं च प्राज्ञं च बहुश्रुतं च धुर्यशीलं व्रतवन्तमार्यम् ।  
तं तादृशं सत्पुरुषं सुमेधसं भजेत नक्षत्रपथमिव चन्द्रमा ॥

देसः कः पञ्चः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः ।  
कुलः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः ।  
देः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः ।  
सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः ।

सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः ।

सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः ।

इसलिए धीर, प्राज्ञ, बहुश्रुत, उद्योगी, व्रती, आर्य एवं सुबुद्धिसत्पुरुष को  
वैसे ही सेवन करे, जैसे चन्द्रमा नक्षत्र पथ का ( सेवन करता है ) ।

Therefore, even as the moon follows the path of the stars,  
intelligent and saintly people should follow those who are wise  
and steady, of extensive learning, moral, of great endurance  
and noble.

P 85 ( XXV, 25 )

P 110 V 208

देः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः ।  
सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः ।  
कुलः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः ।  
सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः सप्तः ।



## १६—पियवग्गो

अयोगे युञ्जमत्तानं, योगस्मि च अयोजयं ।  
अत्थं हित्वा पियग्गाही, पिहेतत्तानुयोगिनं ॥१॥

जेतवन

तीन भिक्षु

अयोगे युञ्जन्नात्मानं योगे चायोजयन् ।  
अर्थं हित्वा प्रिय-प्राही स्पृहयेदात्मानुयोगिनम् ॥

अयं अयोगे युञ्जन्नात्मानं योगे चायोजयन् ।

अयं अयोगे युञ्जन्नात्मानं योगे चायोजयन् ।

अयं अयोगे युञ्जन्नात्मानं योगे चायोजयन् ।

अयं अयोगे युञ्जन्नात्मानं योगे चायोजयन् ।

अयं अयोगे युञ्जन्नात्मानं योगे चायोजयन् ।

अयोग ( =अनासक्ति ) में अपने को लगाने वाले; योग ( =असक्ति ) में न योग देने वाले; अर्थ ( =स्वर्ग ) छोड़ प्रिय का ग्रहण करनेवाले आत्मानुयोगी ( पुरुष ) की स्पृहा करें ।

By devoting oneself to that which should be shunned, not devoting oneself to the practice of meditation, and giving up the quest, one who is thus attached to pleasure will envy him who exerts himself in meditation.

मां पियेहि समागच्छि, अपियेहि कुदाचनं ।  
पिमानं भदस्सनं दुक्खं, अपियाणं च दस्सनं ॥२॥

मा प्रियैः समागच्छ, अप्रियैः कदाचन ।  
प्रियाणां अदर्शनं दुःखं, अप्रियाणां च दर्शनम् ॥

दमरुवण्णिमंरुण्णसंश्रिता । ।

सिंदमरुवण्णिमंरुण्णसंश्रिता । ।

दमरुवण्णिमंरुण्णसंश्रिता । ।

सिंदमरुवण्णिमंरुण्णसंश्रिता । ।

प्रियों का संग मत करो, और न कभी अप्रियों ही ( का संग करो ),  
प्रियों का न देखना दुःखद होता है, और अप्रियों का देखना ( भी ) ।

Never seek intimacy with what is pleasant or unpleasant.  
Not to see the pleasant, and the sight of the unpleasant are  
both painful.

P 21 ( V, 5 )

P 111 V 210

सुण्णं वण्णिमंरुण्णसंश्रिता । ।

सिंदसुण्णं वण्णिमंरुण्णसंश्रिता । ।

वण्णिमंरुण्णसंश्रिता । ।

सिंदसुण्णं वण्णिमंरुण्णसंश्रिता । ।

तस्मा प्रियं न कयिराथ, प्रियापायो हि पापको ।  
गन्था तेषां न विज्जन्ति, येषां नत्थि प्रियाप्पियं ॥३॥

तस्मात् प्रियं न कुर्यात्, प्रियापायो हि पापकः ।  
ग्रन्थाः तेषां न विद्यन्ते येषां नास्ति प्रियाप्रियम् ॥

देसं कं दमार् वरं खी सुं छे ।  
दमार् वं वं वं वं वं वं वं वं ।  
मार् वं वं दमार् वरं खी रं वं वं ।  
दे वं वं वं वं वं वं वं वं ।

“इसलिए प्रिय न बनाने, प्रिय का नाश बुरा लगता है; उनके (दिल में)  
गाँठ नहीं पड़ती, जिसके प्रिय अप्रिय नहीं होते ।

Hence hold nothing dear, for separation from what is  
liked is painful. Bonds do not exist for those by whom nought  
is liked or disliked.

प्रियतो जायतो सोको, प्रियतो जायतो भयं ।  
प्रियतो विप्रमुक्तस्त, नत्थि सोको कुतो भयं ॥५॥

जेटवन

कोई कुटुम्बी

प्रियतो जायते शोकः प्रियतो जायते भयम् ।  
प्रियतो विप्रमुक्तस्य नास्ति शोकः कुतो भयम् ॥

सुखं भवेत्तु भयं न ।

दुःखं च क्लेशं च सुखं न भवेत् ।  
दुःखं च क्लेशं च दुःखं न भवेत् ।  
दुःखं च क्लेशं च सुखं न भवेत् ।  
सुखं च क्लेशं च दुःखं न भवेत् ।

प्रिय ( वस्तु ) से शोक उत्पन्न होता है, प्रिय से भय उत्पन्न होता है;  
प्रिय ( के बंधन ) से जो मुक्त है, उसे शोक नहीं है, फिर भय कहाँ से ( हो ) ?

From liking springs grief, from liking springs fear. For  
him who is wholly free from liking is no grief or fear.

P 20 ( V, 1 )

P 112 V 212

सुखं च क्लेशं च सुखं न भवेत् ।  
सुखं च क्लेशं च दुःखं न भवेत् ।  
सुखं च दुःखं च क्लेशं न भवेत् ।  
सुखं च क्लेशं च दुःखं न भवेत् ।

प्रेमतो जायती सोको, प्रेमतो जायती भयं ।  
प्रेमतो विप्रमुक्तस्स, नत्थि सोको कुतो भयं ॥४॥

चेतवन

विशाखा ( उपासिका )

प्रेमतो जायते शोकः प्रेमतो जायते भयम् ।  
प्रेमतो विप्रमुक्तस्य नास्ति शोकः कुतो भयम् ॥

मत्तेसं वं क्खसं वसं सुं दं वं सुं ।

मत्तेसं वं क्खसं वसं दं वं वसं वं सुं ।

मत्तेसं वं क्खसं वं सुं दं वं सुं वं ।

सुं दं वं सुं दं दं वं वसं वं सुं ।

प्रेम से शोक उत्पन्न होता है, प्रेम से भय उत्पन्न होता है, प्रेम से मुक्त को शोक नहीं, फिर भय कहाँ से ?

From affection springs grief, from affection springs fear.  
For him who is wholly free from affection there is no grief or fear.

रतिया जायती सोको, रतिया जायती भयं ।

रतिया विप्पमुत्तस्स, नत्थि सोको कुतो भयं ॥६॥

बैशाली ( कूटागारशाला )

लिच्छविलोग

रतिया ( रत्या ) जायते शोको रत्या जायते भयम् ।

रत्या विप्रमुक्तस्य नास्ति शोकः कुतो भयम् ॥

कमसं वं कमसं वसं सुं वं सुं ।

कमसं वं कमसं वसं वं वसं वं सुं ।

कमसं वं कमसं वं सुं वसं वसं वं ।

सुं वं वं वं वं वं वं वं वं वं ।

रति ( = राग ) से शोक उत्पन्न होता है, रति से भय उत्पन्न होता है,  
राग से मुक्त को शोक नहीं, फिर भय कहाँ से ?

From attachment springs grief, from attachment springs  
fear. For him who is wholly free from attachment there is no  
grief or fear.

कामतो जायती सोको, कामतो जायतो भयं ।

कामतो विप्पमुत्तस्स, नत्थि सोको कुतो भयं ॥७॥

चेतवन

अनित्थिगन्धकुमार

कामतो जायते शोकः कामतो जायते भयम् ।

कामतो विप्रमुक्तस्य नास्ति शोकः कुतो भयम् ॥

अरेदं च क्खसं व्यसं सुदं सल्ले ।

अरेदं च क्खसं व्यसं अद्विगसं च सल्ले ।

अरेदं च क्खसं वै सल्लसं पुसं व ।

सुदं सल्ले उदं अद्विगसं च सल्ले ।

काम से शोक उत्पन्न होता है । रति से भय उत्पन्न होता है । काम से मुक्त को शोक नहीं, फिर भय कहीं से ?

From desire springs grief, from desire springs fear. For him who is wholly free from desire there is no grief or fear.

तण्हाय जायती सोको, तण्हाय जायती भयं ।

तण्हाय विप्पमुत्तस्स, नत्थि सोको कुतो भयं ॥८॥

चेतवन

कोई ब्राह्मण

तृष्णाया जायते शोकः तृष्णाया जायते भयम् ।

तृष्णाया विप्रमुक्तस्य नास्ति शोकः कुतो भयम् ॥

स्येदं पंक्षससं पसं सुदं स्ये । ।

स्येदं पंक्षससं पसं अहिससं पं स्ये । ।

स्येदं पंक्षससं पं स्येदं पसं सुदं स्ये । ।

सुदं स्येदं पं स्येदं अहिससं पं स्ये । ।

तृष्णा से शोक उत्पन्न होता है । तृष्णा से भय उत्पन्न होता है । तृष्णा से जो मुक्त व्यक्ति है उसे शोक और भय कहाँ ?

From craving springs grief, from craving springs fear.  
For him who is wholly free from craving there is no grief  
or fear.



शीलदस्सनसम्पन्नं, धम्मट्ठं सच्चवेदिनं ।

अत्तनो कम्म कुब्बानं, तं जनो कुरुते पियं ॥६॥

राजगृह ( वेणुवन )

पाँच सौ बालक

शीलदर्शनसम्पन्नं धर्मिष्ठं सत्यवादिनम् ।

आत्मनः कर्म कुर्वाणं तं जनः कुरुते प्रियम् ॥

देहं अहं कथं नुते । ।

हृत्प्रियस्य हृत्प्रियस्य हृत्प्रियस्य ।

हृत्प्रियस्य हृत्प्रियस्य हृत्प्रियस्य ।

हृत्प्रियस्य हृत्प्रियस्य हृत्प्रियस्य ।

हृत्प्रियस्य हृत्प्रियस्य हृत्प्रियस्य ।

जो शील (=आचरण) और दर्शन (=विद्या) से सम्पन्न, धर्म में स्थित, सत्यवादी और अपने काम को करनेवाला है, उस (पुरुष) को लोग प्रेम करते हैं ।

People hold dear one who is perfect in virtue and views, who is established in the Dharma, is truthful, and performs his own duty.

छन्दजातो अनक्खाते, मनसा च फुटो सिया ।

कामेसु च अप्पटिबद्धचित्तो, उद्धंसोतो ति वुच्चति ॥१०॥

चैतवस

( अनागामी )

छन्दजातोऽनाख्याते मनसा च स्फूर्तिः स्यात् ।

कामेषु चाऽप्रतिबद्धचित्त उद्धंसोता इत्युच्यते ॥

शुभं सुते ऋतं सु सुते ऋतं सु सुते ऋतं ॥ १ ॥

वर्द्धं सु सुते ऋतं सु सुते ऋतं सु सुते ऋतं ॥ १ ॥

वर्द्धं सु सुते ऋतं सु सुते ऋतं सु सुते ऋतं ॥ १ ॥

वर्द्धं सु सुते ऋतं सु सुते ऋतं सु सुते ऋतं ॥ १ ॥

वर्द्धं सु सुते ऋतं सु सुते ऋतं सु सुते ऋतं ॥ १ ॥

जो अकथ्य ( - वस्तु = निर्माण ) का अभिलाषी है, ( उसमें ) जिसका ध्यान लगा है, कामों ( = भोगों ) में जिसका चित्त बद्ध नहीं, वह उर्ध्वस्रोत कहा जाता है ।

One who has developed a longing for the inexpressible ( Nirvana ), and whose mind has become clear and turned from involvement with desire, is called "one bound upstream". ( One who goes against the current of habitual ignorance and sin, thus moving out of samsara ).

चिरप्पवासिं पुरिसं, दूरतो सोत्थिमागतं ।

जातिमित्राणि सुहज्जा च, अभिनन्दन्ति आगतं ॥११॥

ऋषिपतन

नन्दिपुत्र

चिरप्रवासिनं पुरुषं दूरतो स्वस्त्यागतम् ॥

जातिमित्राणि सुहृदश्चाभिनन्दन्त्यागतम् ॥

इदं श्रोतुं ह्युदं वरं दण्डं मरे सुदं । ।

श्लेषं सुदं वरं दण्डं मरे सुदं । ।

सुदं वरं वरे वरं श्लेषं वरं । ।

मरे वरं वरं वरं श्लेषं वरं वरं । ।

वरं वरं वरं वरं दण्डं वरं सुदं । ।

चिर-प्रवासी (=चिरकाल तक परदेश में रहे) दूर (देश) से सानन्द लौटे पुरुष का, जातिवाले, मित्र और सुहृद अभिनन्दन करते हैं ।

A man long absent and returned safe from a far, is welcomed on his arrival by kinsmen, friends, and well-wishers.

P 23 ( V, 20 )

P 116 V 219

सुदं वरं वरं वरं वरं वरं । ।

वरं वरं वरं वरं वरं । ।

मरे वरं वरं वरं वरं वरं । ।

वरं वरं वरं वरं वरं । ।

तथैव कतपुञ्जं पि, अस्मा लोका परं गतं ।  
पुञ्जानि पटिगण्हन्ति, पियं आतीव आगतं ॥१२॥

तथैव कृतपुण्यमप्यस्मात् लोकात् परं गतम् ।  
पुण्यानि प्रतिगृह्णन्ति पियं ज्ञातिमिवागतम् ॥

दे॰वर्त्ति॰वर्त्ति॰क्षम॰पु॰व॰॥॥ ।  
॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥ ।  
॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥ ।  
॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥ ।

॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥ ।

॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥ ।

पुण्यकर्मा ( पुरुष ) को इस लोक से पर ( लोक ) में जानै पर, ( उसके )  
पुण्य ( कर्म ) प्रिय जाति ( वालों ) की भाँति स्वीकार करते हैं ।

In a similar way, a man's good deeds will welcome him  
when he has gone from this world to the next, as kinsmen will  
welcome a dear one on his return.

P 23 ( V, 20 )

P 116 V 220

दे॰वर्त्ति॰वर्त्ति॰क्षम॰पु॰व॰॥॥ ।  
॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥ ।  
॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥ ।  
॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥॥ ।

## १७—क्रोधवर्गो

क्रोधं जहे विष्पजहेय्य मानं,  
संयोजनं सब्बमतिक्रमेय्य ।  
तं नामरूपस्मिमसज्जमानं,  
अकिञ्चनं नानुपतन्ति दुक्खा ॥१॥

कपिलवस्तु ( न्यग्रोधाराम )

रोहिणी

क्रोधं जह्याद् विप्रजह्यान् मानं  
संयोजनं सर्वमतिक्रमेत् ।  
तं नाम - रूपयोरसज्जमानं  
अकिञ्चनं नाऽनुपतन्ति दुःखानि ॥

१. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥  
ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥  
ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥  
ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥  
ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥

क्रोध को छोड़े, अभिमान का त्याग करे, मारे संयोजनों (=बन्धनों) से पार हो जाये, ऐसे नाम-रूप में आसक्त न होनेवाले, तथा परिग्रह रहित (पुरुष) को दुःख सन्ताप नहीं देते ।

One should give up anger, one should renounce pride, one should overcome all fetters ( of worldly attachment ). Sorrow never befalls one who does not cling to name ( nama ) and form ( rupa ) and who calls nothing his own.

P 65 ( XX, 1 )

P 117 V 221

ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥  
ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥  
ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥  
ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥

1 ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥  
ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥ १. ॐ ह्रीं ॥

यो वै उत्पतितं क्रोधं, रथं भ्रान्तं व धारये ।  
तमहं सारथिं ब्रूमि, रश्मिग्राहो इतरो जनो ॥२॥

आलवी ( अमालव चैत्य )

कोई भिक्षु

यो वै उत्पतितं क्रोधं रथं भ्रान्तमिव धारयेत् ।  
तमहं सारथिं ब्रवीमि, रश्मिग्राह इतरो जनः ॥

गद-गौश-स्रो-व-पदस-व-प ।      ।  
पौद-द-र-मि-व-वै-र-र-व-दे ।      ।  
म-प-व-वै-र-व-ग-गौश-स्रो ।      ।  
स्रो-व-ग-वै-र-व-स्रो-ग-र-व-दे ।      ।

जो चढ़े क्रोध को भ्रमण करते रथ की भाँति पकड़ ले, उसे मैं सारथी कहता हूँ, दूसरे लोग लगाम पकड़नेवाले ( मात्र ) हैं ।

Whoever checks his rising anger like a rolling chariot, him I call a true charioteer. Other people are only holding the reins.

P 67 ( XX, 22 )

P 117 V 222

गद-वै-स्रो-व-पुद-व-द- ।      ।  
पौद-द-र-मि-व-वै-र-र-व-दे ।      ।  
म-प-व-वै-र-व-ग-गौश-स्रो ।      ।  
स्रो-व-ग-वै-र-व-स्रो-ग-र-व-दे ।      ।

अक्रोधेन जिने क्रोधं असाधुं साधुना जिने ।  
जिने कदरियं दानेन, सच्चेनालिकवादिनं ॥३॥

राजगृह ( वेणुवन )

उत्तरा ( उपासिका )

अक्रोधेन जयेत् क्रोधं, असाधुं साधुना जयेत् ।  
जयेत् कदर्यं दानेन सत्येनाऽलीकवादिनम् ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

श्रद्धां ध्यात्वा भगवत्पदं ।

अपराधं क्षमां कृपाम् ।

वदन्तं वदन्तं वदन्तं ।

सत्यं वदन्तं सत्यं ।

अक्रोध से क्रोध को जीते, असाधु को साधु (= भलाई ) से जीते, कृपण को दान से जीते, झूठ बोलनेवाले को सत्य से ( जीते ) ।

Overcome another's anger by being oneself without anger, another's evil by goodness. Overcome the stingy by generosity, and liars by truth.

P 67 ( XX, 19 )

P 118 V 223

श्रद्धां ध्यात्वा भगवत्पदं ।

अपराधं क्षमां कृपाम् ।

वदन्तं वदन्तं वदन्तं ।

सत्यं वदन्तं सत्यं ।

सच्चं भणे न कुञ्जेय्य, दज्जा अप्पं पि याचितो ।

एतेहि तीहि ठानेहि, गच्छे देवान सन्तिके ॥४॥

जैतवन

महामोग्गलान ( थेर )

सत्तयं भणेत् न क्रुध्येत्, दद्यादल्पेऽपि याचितः ।

एतैस्त्रिभिः स्थानैः गच्छेद् देवानामन्तिके ॥

चरेत्तं वरं सुखं विदं वंसेत् ।

सुखं वंसेत्तं वरं सुखं विदं वंसेत् ।

वरं वंसेत्तं वरं सुखं विदं वंसेत् ।

वरं वंसेत्तं वरं सुखं विदं वंसेत् ।

सच बोले, क्रोध न करे, थोड़ा भी माँगने पर दे, इन तीन बातों से  
( पुरुष ) देवताओं के पास जाता है ।

One should speak the truth, one should not be angry, and  
one should give from what little one has to him who asks. By  
these three things one may go the presence of the gods.

P 67 ( XX. 16 )

P 118 V 224

चरेत्तं वरं सुखं विदं वंसेत् ।

सुखं वंसेत्तं वरं सुखं विदं वंसेत् ।

वरं वंसेत्तं वरं सुखं विदं वंसेत् ।

वरं वंसेत्तं वरं सुखं विदं वंसेत् ।



अहिंसका ये मुनयो, निच्चं कायेन संवृता ।  
ते यन्ति अच्युतं ठानं, यत्थ गत्वा न सोचरे ॥५॥

साकेत = अयोध्या

ब्राह्मण

अहिंसका ये मुनयो नित्यं कायेन संवृताः ।  
ते यन्ति अच्युतं स्थानं यत्र गत्वा न शोचन्ति ॥

मन्त्रः चतस्रः शुद्धः चैव । ।

सुवः च मन्त्रैः चैव । ।

द्वयः च त्रयः चैव । ।

देवैः चैव चैव । ।

मन्त्रः चैव चैव । ।

जो मुनि ( लोग ) अहिंसक, सदा काया में संयम करनेवाले हैं, वह  
( उस ) अच्युत स्थान (= जिस स्थान पर पहुँच फिर गिरना नहीं होता ) को  
प्राप्त होते हैं, जहाँ जाकर फिर नहीं शोक किया जाता ।

Those sages who, injuring none, are ever restrained in  
body, go to the changeless state ( Nirvana ), whither gone they  
never grieve.

1 मन्त्रः ( मन्त्रः चतस्रः ) सः चैव चैव ( अथवा  
चैव ) त्रयः चैव चैव चैव चैव चैव चैव चैव चैव  
चैव चैव ( HERO ) चैव चैव चैव चैव चैव चैव चैव चैव चैव चैव

सदा जागरमानानं, अहोरत्तानुसिक्खितं ।  
निब्बानं अधिमुत्तानं, अत्थं गच्छन्ति आसवा ॥६॥

राजगृह ( गृध्रकूट )

राजगृह-श्रेष्ठी की दासी

सदा जाग्रतां अहोरात्रं अनुशिक्षमाणानाम् ।  
निवर्णं अधिमुत्तानां अस्तं गच्छन्ति आसवा ॥

ཐུ་གྲོ་ཐུ་བོ་འི་རི་མཐོ། །

ཉིན་དང་མཚན་མོ་སད་གུར་ཅིང་། །

དག་དུ་ཆེས་སུ་སློབ་བྱེད་པ། །

ཐུ་ངན་འདས་པ་ལྟུང་ལེན་ནམས། །

ཁྱད་ཀྱིས་བྲག་པ་བྲད་པར་འགྱུར། །

जो सदा जागता (=सचेत) रहता है, रात-दिन ( उत्तम ) सीख सीखनेवाला होता है, और निवर्ण ( प्राप्तकर ) मुक्त हो गया है, उसके आसव (=चित्त मल ) अन्त हो जाते हैं ।

Those who are ever vigilant, who train themselves day and night and who are wholly bent on Nirvana, it is they who bring their defiling taints to an end.

पोराणमेतं अतुल, नेतं अज्जतनामिव ।  
 निन्दन्ति तुण्हिमासीनं, निन्दन्ति बहुभाणिनं ।  
 मितभाणिं पि निन्दन्ति, नत्थि लोके अनिन्दितो ॥७॥

जेटवन

अतुल ( उपासक )

पुरणामेतद् अतुल ! नैतद् अद्यतनमेव ।  
 निन्दन्ति तूष्णीमासीवं निन्दन्ति बहुभाणिनाम् ।  
 मितभाणिनमपि निन्दन्ति नास्ति लोकेऽनिन्दितः ॥

५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥

॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥  
 ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥  
 ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥  
 ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥  
 ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥  
 ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥

हे अतुल ! यह पुरानी बात है, आज की नहीं—( लोग ) चुप बैठे हुये  
 की निन्दा करते हैं, और बहुत बोलनेवाले की भी, मितभाषी की भी निन्दा  
 करते हैं ।

This is an old saying, o Atula, and not merely one of the  
 present day. "They blame those who sit in silence, they blame  
 those who speak much, and those who speak little they also  
 blame. There is no one who is not blamed in this world."

P 111 ( XXIX, 49 )

P 120 V 227

॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥  
 ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥  
 ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥  
 ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥

न चाहु न च भविस्सति, न चेतर्हि विज्जति ।  
एकन्तं निन्दितो पोसो, एकन्तं वा पसंसितो ॥८॥

न चाऽभूत् न च भविष्यति व चैतर्हि विद्यते ।  
एकान्तं निन्दितः पुरुष एकान्तं वा प्रशंसितः ॥

མཐའ་གཅིག་དུ་ནི་སྒྲོང་བ་འཇམ།     ।  
མཐའ་གཅིག་བསྟོད་བའི་སྒྲེས་བྱ་ནི།     ।  
མ་གྱུང་འགྱུང་བར་མི་འགྱུར་དེ།     ।  
ད་ལྟ་ཡང་ནི་ཡོད་མ་ཡིན།     ।

दुनिया में अनिन्दित कोई नहीं है । बिल्कुल ही निन्दित या बिल्कुल ही प्रशंसित पुरुष न था, न होगा, न आजकल है ।

There never was, there never will be, nor is there now, a person who is wholly blamed or wholly praised.

P 111 ( XXIX, 50 )

P 120 V 228

གཅིག་དུ་སྒྲོང་བར་བྱ་བ་དང་།     ।  
གཅིག་དུ་བསྟོད་བར་བྱ་བའི་མི།     ।  
ད་ལྟ་ཡོད་པ་མ་ཡིན་དེ།     ।  
གྱུང་བར་མ་གྱུང་འགྱུང་མི་འགྱུར།     ।

यं चे विज्जू पसंसन्ति, अनुविच्च सुवे सुवे ।  
अच्छिद्भवृत्तिं मेधाविं, पज्जाशीलसमाहितं ॥६॥

यश्चेद् विज्ञाः प्रशंसन्ति अनुविच्य श्व श्वः ।  
अच्छिद्रवृत्तिं मेधाविनं प्रज्ञाशीलसमाहितम् ॥

देवः पण्डितः सदा विद्वान् कृतज्ञः ।  
शुद्धः सदा विद्वान् शुद्धः सदा विद्वान् ।  
शुद्धः सदा विद्वान् शुद्धः सदा विद्वान् ।  
शुद्धः सदा विद्वान् शुद्धः सदा विद्वान् ।

अपने-अपने ( दिल में ) जान कर विज्ञ लोग अच्छिद्र वृत्ति (=दोषरहित स्वभाववाले) मेधावी; प्रज्ञा-शील-संयुक्त जिस ( पुरुष ) की प्रशंसा करते हैं.....

Observing him day by day, the intelligent praise one who is of flawless character, wise, and endowed with wisdom and virtue.

P 111 ( XXIX, 52 )

P 121 V 229

शुद्धः सदा विद्वान् शुद्धः सदा विद्वान् ।  
शुद्धः सदा विद्वान् शुद्धः सदा विद्वान् ।  
शुद्धः सदा विद्वान् शुद्धः सदा विद्वान् ।  
शुद्धः सदा विद्वान् शुद्धः सदा विद्वान् ।

निखं जम्बोनदस्सेव, को तं निन्दितुमरहति ।

देवा पि नं पसंसन्ति, ब्रह्मणा पि पसंसितो ॥१०॥

निष्कं जम्बूनदम्येव कस्तं निन्दितुमर्हति ।

देवा अपि तं प्रशंसन्ति ब्रह्मणाऽपि प्रशंसितः ॥

འཇམ་བུ་རྒྱུ་གསེར་གྱི་དྲོ་ཙེ་བཞིན། ।

སུ་ཞིག་དེ་ལ་སྤྲོད་པར་རིགས། ।

ལྷ་ཡང་དེ་ལ་བཟློད་པར་བྱེད། ।

ཚངས་པ་ཡང་ནི་དེ་ལ་བཟློད། ।

...जम्बूनाद ( सुवर्ण ) की अशर्फी के समान उसकी कौन निन्दा कर सकता है; देवता भी उसकी प्रशंसा करते हैं, ब्रह्मा द्वारा भी वह प्रशंसित होता है ।

Who dares blame such a person, who is like a coin of refined gold ? Even the gods praise him, and by Brahma too he is praised.

P 111 ( XXIX, 52 )

P 121 V 230

དེ་དག་སུས་ཀྱང་སྤྲོད་དེས་མིན། ।

འཇམ་བུ་རྒྱུ་གསེར་གྱི་གསེར་གྱི་བཞིན། ।

कायप्रकोपं रक्खेय्य, कायेन संवृतो सिया ।

कायदुच्चरितं हित्वा, कायेन सुचरितं चरे ॥११॥

वेणुवन

वज्जिय ( भिक्षु )

कायप्रकोपं रक्खेत् कायेन संवृतः स्यात् ।

कायदुश्चरितं हित्वा कायेन सुचरितं चरेत् ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

सुखं प्रीतिं वीर्यं श्रद्धां धर्मं ।

सुखं प्रीतिं धर्मं श्रद्धां वीर्यं ।

सुखं प्रीतिं श्रद्धां धर्मं वीर्यं ।

सुखं प्रीतिं धर्मं श्रद्धां वीर्यं ।

काया की चंचलता से रक्षा करें, काया से संयत रहे, कायिक दुश्चरित को छोड़ कायिक सुचरित का आचरण करें ।

One should guard against uncontrolled actions of body, one should be restrained in body. Abandoning evil conduct of body, one should practice virtue with one's body.

वचोपकोपं रक्षेय्य, वाचाय संवृतो सिया ।  
वचोदुश्चरितं हित्वा, वाचाय सुचरितं चरे ॥१२॥

वचः प्रकोपं रक्षेद् वाचा संवृतः स्यात् ।  
वचो दुश्चरितं हित्वा वाचा सुचरितं चरेत् ॥

वचः प्रकोपं रक्षेद् वाचा संवृतः स्यात् ।  
वचो दुश्चरितं हित्वा वाचा सुचरितं चरेत् ॥  
वचः प्रकोपं रक्षेद् वाचा संवृतः स्यात् ।  
वचो दुश्चरितं हित्वा वाचा सुचरितं चरेत् ॥

वाणी की चंचलता से रक्षा करें, वाणी से संयत रहें, वाचिक दुश्चरित को छोड़, वाचिक सुचरित का आचरण करें ।

One should guard against uncontrolled actions of speech, one should be restrained in speech. Abandoning evil conduct of speech, one should practice virtue with one's speech.



मनोपकोपं रक्खेय्य, मनसा संवृतो सिया ।  
मनोदुच्चरितं हित्वा, मनसा सुचरितं चरे ॥१३॥

मनः प्रकोपं रक्षेत् मनसा संवृतः स्यात् ।  
मनोदुश्चरितं हित्वा मनसा सुचरितं चरेत् ।

मैनं प्रोक्खेय्य मनसा संवृतो सिया ।  
मनोदुच्चरितं हित्वा मनसा सुचरितं चरेत् ।  
मैनं प्रोक्खेय्य मनसा संवृतो सिया ।  
मनोदुच्चरितं हित्वा मनसा सुचरितं चरेत् ।

मन की चंचलता से रक्षा करें, मन से संयत रहें, मानसिक दुश्चरित की छोड़, मानसिक सुचरित का आचरण करें ।

One should guard against uncontrolled actions of mind, one should be restrained in mind. Abandoning evil conduct of mind, one should practice virtue with one's mind.

कायेन संवृता धीरा, अथो वाचाय संवृता ।

मनसा संवृता धीरा, ते वै सुपरिसंवृता ॥१४॥

कायेन संवृता धीरा अथ वाचा संवृताः ।

मनसा संवृता धीराः ते वै सुपरिसंवृताः ॥

मङ्गलं च श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा । ।

मङ्गलं च श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा । ।

मङ्गलं च श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा । ।

मङ्गलं च श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा । ।

मङ्गलं च श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा ।

मङ्गलं च श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा श्रुत्वा । ।

जो धीर पुरुष काय से संयत, वाणी से संयत और मन से संयत रहते हैं,  
वे ही पूर्ण रूप से संयत हैं ।

The steadfast are restrained in body, in speech also they are restrained. They are restrained in mind as well. Indeed, they are perfectly restrained.

१८—मलवगो

षण्डुपलासो व दानिसि, यमपुरिसा पि च ते उपट्टिता ।  
उद्योगमुखे च तिष्ठसि, पाथेय्यं पि च ते न विज्जति ॥१॥

## जैतवन

गोधातक-पुत्र

पाण्डुपलासमिवेदानींमसियमपुरुषाअपि च त्वां उपस्थिताः ।  
उद्योममुखे च तिष्ठसि पाथेयमपि च ते न विद्यते ॥

ཡུལ་ཁྱེད་ཚལ་དུའོ། །

ཁྱེད་ཀྱི་ལོ་མ་ཟླ་བེ་ལྟ།

[illegible]

ཁྱེད་ནི་འཆི་བའི་ཁ་ན་གནས།

ཁྱེད་ལ་ལམ་ ཡུགས་དག་གང་མེད།

पीले पत्ते के समान इस वक्त तू है, यमदूत तेरे पास खड़े हैं, तू प्रयाण के लिए तैयार है और पाथेय तेरे पास कुछ नहीं है।

Like a withered leaf are you now, the messengers of death wait for you. On the threshold of death you stand, without provisions for the journey.







अनुपूर्व्वेन मेधावी, थोकथोकं खणे खणे ।  
कम्मारो रजतस्सेव, निद्धमे मलमत्तनो ॥५॥

जेतवन

कोई ब्राह्मण

अनुपूर्व्वेण मेधावी तोकं स्मोकं क्षणे क्षणे ।  
कर्मारो रजतस्येव निर्धमेत् मलमात्मनः ॥

दिसं ग्रीसं तुदं ३५ तुदं ३५ ५५ । ।  
सामसं वसं स्रग् ठेवां स्रग् ठेवां गीसं ॥  
समासं वं यीसं ३५ ५५ वल्लिक्कं ५ ।  
५५ गीं ५५ सं वसं वसं ५ । ।

बुद्धिमान (पुरुष) क्षण क्षण क्रमशः थोड़ा थोड़ा अपने मल को (वैसे हो)  
( जलावे ), जैसे कि सोनार चाँदी को ( मल को ) जलाता है ।

By degrees, little by little, from moment, a wise man  
should remove his own impurities, as a smith removes the dross  
of silver.

P 9 ( II, 10 )

P 126 V 239

समासं वं यीसं ३५ ५५ वल्लिक्कं ५ । ।  
स्रग् ठेवां स्रग् ठेवां तुदं ३५ ठेवां । ।  
स्रग् ठेवां स्रग् ठेवां तुदं ३५ ठेवां । ।  
५५ गीं ५५ सं वसं वसं ५ । ।

अयसा व मलं समुद्धृतं, तदुद्धृत्य तमेव खादति ।  
एवं अतिधोऽन्यचारिनं, सानि कम्भानि नयन्ति दुग्गतिं ॥६॥

## जेतवन

तिस्स ( थेर )

अयस इव मलं समुस्थितं त (स्मा) द्  
उत्थाय तदेव खादति ।  
एवं अतिधावनचारिणं स्वानि  
कर्माणि नश्यन्ति दुर्गतिम् ॥

ལྷུང་གེད་ཆེན་པོ། །

ལྷགས་ལས་བཅའ་ནི་རབ་ཏུ་གྲང་འགྱུར་ཅིང་། །

ལངས་ནས་དེ་ཉིད་ཟ་བར་བྱེད་པ་བཞིན།

འདི་ལྟར་གྱིས་དེ་ལོག་པར་སྒྲིང་བ་རྣམས།

लोहे से उत्पन्न मल (=मुर्चा) जैसे जिससे उत्पन्न होता है, उसे ही खा डालता है; इसी प्रकार अति चंचल (पुरुष) के अपने ही कर्म उसे दुर्गति को ले जाते हैं ।

As rust, sprung from iron, eats its source away when  
arisen, even so his own deeds lead the transgressor to states  
of woe.

P 34 ( IX, 19 )

P 126 V 240

ལྷན་ལས་གཡར་ནི་ལངས་གུར་ག།

ལངས་བ་དེས་ནི་དེ་ཉིད་ཟ།

དེ་བཞིན་མ་བརྟགས་བྱས་པ་ཡི།

རང་གི་ལས་ཀྱིས་ངན་འགྲོར་འགྲོ།



असज्जायमला मन्ता, अनुष्ठानमला घरा ।  
मलं वण्णस्स कोसज्जं, पमादो रक्खतो मलं ॥७॥

जेतवन

( लाल ) उदायी ( थेर )

अस्वाध्यायमला मंत्रा अनुत्थानमसा गृहाः ।  
मलं वर्णस्य कौसीद्यं, प्रमादो रक्षतो मलम् ॥

<sup>1</sup> འཆར་ཀ་དམར་པོ་ལ་གསུངས་པ།

ཆོ་ག་མེད་པ་སྐྱབས་ཀྱི་དྲི།

འདྲག་ཞལ་མེད་པ་ཁྱིམ་གྱི་དྲི།

ལེ་ལོ་རིགས་ཀྱི་ཁྲི་མ་རྟེ།

ཐག་མེད་པ་ནི་བསྐྱར་བའི་དྲི།

स्वाध्याय (=स्वरपूर्वक पाठ की आवृत्ति) न करना (वेद-) मन्त्रों का मल (-मुर्चा) है। शरीर का मुर्चा आलस्य है, असावधानी रक्षक का मुर्चा है।

Non-repetition is the taint of mantra, lack of maintenance is the taint of homes. Sloth is the taint of beauty and carelessness is the taint of a watcher.

1 བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་རྒྱུ་གྱུར་འཆར་ཀ་ནག་པོ་དང་། གནས་ངན་  
ལེན་སྤྱོད་པ་འཆར་ཀ་དམར་པོ་ཞེས་གནས་བདུན་པ་དག་ལ་གྲུ་དེ་རང་མེད་  
ལྷང་ན་མི་གསལ།

मलित्थिया दुच्चरितं, मच्छेरं ददतो मलं ।  
मला वे पापका धम्मा, अस्मिं लोके परमिह च ॥८॥

राजगृह ( वेणुवन )

कोई कुलपुत्र

मलं स्त्रिया दुश्चरितं मात्सर्यं ददतो मलम् ।  
मलं वै पापका धर्मा अस्मिन् लोके परम च ॥

सुदुग्धेयं दुग्धं सुदुग्धं ददतो ।  
सुदुग्धेयं दुग्धं सुदुग्धं ददतो ।  
सुदुग्धेयं दुग्धं सुदुग्धं ददतो ।  
सुदुग्धेयं दुग्धं सुदुग्धं ददतो ।

स्त्री का मल दुराचार है, कृपणता (=कंजूसी) दाता का मल है, पाप इस लोक और पर लोक ( दोनों ) में मल है ।

Misconduct is the taint of women and niggardliness is the taint of a benefactor. Taints indeed are all evil things both in this world and in the next.



सुजीवं अहिरिकेन, काकसूरेन धंसिना ।  
पक्खन्दिना पगब्भेन, सङ्किलिट्ठेन जीवितं ॥१०॥

जेतवन

( चुल्ल ) सारी

सुजीवितं अह्रीकेण काकसूरेण ध्वंसिना ।  
प्रस्कन्दिना प्रगल्भेन संकिलष्टेन जीवितम् ॥

शुभ्रं सुदं कं च सुसं रं च ॥

सं यं दं च वं सं च सं दं । ।

सं उं उं दं सुं च दं च । ।

गुं उं सुं सुं सुं सुं सुं । ।

सं सुं सुं सुं सुं सुं । ।

( पापाचार के प्रति ) निर्लज्ज, कीए के समान ( स्वार्थ में ) शूर;  
( परहित- ) विनाशी, पतित, उच्छृङ्खल और मलिन ( पुरुष ) का जीवन सुख-  
पूर्वक बीतता ( देखा जाता ) है ।

Easy is the life a shameless one who is as impudent as  
a crow, a mischief-maker, a back-biter, arrogant, and corrupt.

P 92 ( XXVII, 2 )

P 128 V 224

सुं सुं सुं सुं सुं सुं । ।

सं सुं सुं सुं सुं सुं । ।

सुं सुं सुं सुं सुं सुं । ।

सं सुं सुं सुं सुं सुं । ।

हिरीमता च दुज्जीवं, निच्चं सुच्चिगवेसिना ।  
अलीनेनाप्पगम्भेन, सुद्धाजीवेन पस्सता ॥११॥

हीमता च दुर्जीवितं नित्यं शुचिगवेषिणा ।  
अलीनेनाऽप्रगल्भेन शुद्धजीवेन पश्यता ॥

५०५ ५०५ ५०५ ५०५ ५०५ । ।  
५०५ ५०५ ५०५ ५०५ ५०५ । ।  
५०५ ५०५ ५०५ ५०५ ५०५ । ।  
५०५ ५०५ ५०५ ५०५ ५०५ । ।

( पापाचार के प्रति ) लज्जावान्, नित्य ही पवित्रता का ख्याल रखने-  
वाले, निरालस, अनुच्छृङ्खल, शुद्ध जीविका वाले सचेत ( पुरुष ) के जीवन को  
कठिनाई से बीतते देखते हैं ।

Hard is the life of a modest one who ever seeks purity,  
is detached, humble, lives in purity, and is intelligent.

P 92 ( XXVII, 3 )

P 129 V 245

५०५ ५०५ ५०५ ५०५ ५०५ । ।  
५०५ ५०५ ५०५ ५०५ ५०५ । ।  
५०५ ५०५ ५०५ ५०५ ५०५ । ।  
५०५ ५०५ ५०५ ५०५ ५०५ । ।

यो प्राणमतिपातयति, मृषावादं च भाषते ।  
लोकेऽदत्तं आदत्ते परादाराश्च गच्छति ॥१२॥

जैतवन

पाँच उपासक

यः प्राणमतिपातयति मृषावादं च भाषते ।  
लोकेऽदत्तं आदत्ते परादाराश्च गच्छति ॥

मरुतं विना श्वेतं मरुतं पुनः मरुतं ।

मरुतं विना श्वेतं मरुतं पुनः मरुतं ।

मरुतं विना श्वेतं मरुतं पुनः मरुतं ।

मरुतं विना श्वेतं मरुतं पुनः मरुतं ।

जो हिंसा करता है, झूठ बोलता है, लोक में चोरी करता है (=बिना  
दिये को लेता है), परस्त्रीगमन करता है ।

Those who in this world destroys life, utter lies, takes  
what is not given, go to the other's wives.



एवं भो पुरिस जानाहि, पापधम्मा असञ्जता ।  
मा तं लोभो अधम्मो च, चिरं दुक्खाय रन्धयुं ॥१४॥

एवं भो पुरुष ! जानीहि पापधर्माणोऽसंयतान् ।  
मा त्वां लोभोऽधर्मश्च चिरं दुःखाय रन्धेरन् ॥

ग्रा·ये·ल्लेस·सु·दे·व्व·सुदा ।                      ।  
ल्लेस·ल्लेस·स·वद्दस·लेस·सुस·वस ।                      ।  
अदे·दे·ल्लेस·स·अदे·वस·हिरे ।                      ।  
अदे·दे·ल्लेस·स·अदे·वस·हिरे ।                      ।

हे पुरुष ! संयम रहित पाप कर्म ऐसे ही होते हैं, ऐसा जान । तुझे लोभ और अधर्म चिरकाल तक दुःख में न राँधे ।

Know this, O good man ! Evil habits are not easy to restrain. Do not let desire and wickedness drag you to protracted misery.



ददाति वे यथासद्धं, यथापसादनं जनो ।  
तत्थ यो मद्धु भवति, परेसं पानभोजने ।  
न सो दिवा वा रत्तिं वा, समाधिमधिगच्छति ॥१५॥

## જેતવન

तिस्र ( बालक )

ददाति वै तथाश्रद्धं यथाप्रसादनं जनः ।  
तत्र यो मूको भवति परेषां पानभोजने ।  
न स दिवा वा रत्तिं वा समाधिं अधिगच्छति ॥

ལྷུ་ལ་བྱེད་ཆལ་དུ་འོ། །

ཕྱི་བོ་རྒྱ་མ་དང་པ་དང་།  
རྒྱ་མ་དང་པ་བཞིན་དུ་སྤྲིན།  
དེ་ལ་གང་ཞིག་གཞན་ནམས་ཀྱི།  
ཟས་དང་སྐྱེས་ལ་རེ་གཏུང་བ།  
དེས་ནི་ཉིན་དང་མཚན་མོ་ཡང་།  
དྲིང་རེ་འཛོན་ལ་འཇུག་མི་འགུར།

लोग अपनी श्रद्धा और प्रसन्नता के अनुसार दान देते हैं, दूसरों के खाने-पीने में जो ( असन्तोष के कारण ) खिन्न होता है; वह रात-दिन ( कभी ) भी एकाग्रता को नहीं प्राप्त करता ।

People give ( alms ) according to their faith and whoever becomes displeased with the food and drink given by others, does not attain concentration either by day or by night.

P 36 ( X, 12 )

P 131 V 249

ལྷ་པོ་ཉམས་མེ་ཅི་འཇགས་པ་པ།  
 དང་པ་རྩ་པལྱེན་ཕྱིན་ཕྱིན་ཅིང་།  
 གཞན་གྱི་ལས་དང་སྒྲིམ་དེ་ལ།  
 གང་ཞིག་ཡིད་ཅི་སྒྲིམ་པ་པ།  
 དེས་ནི་ཕྱིན་དང་མཚན་ཉམས་སྒྲིམ།  
 དེང་ཡུལ་ཕྱིན་པ་པ་མི་འགས་པོ།

यस्स चेतं समुच्छिन्नं, मूलवच्चं समूहतं ।  
स वे दिवा वा रात्रि वा, समाधिमधिगच्छति ॥१६॥

यस्य य तन् समुच्छिन्नं मूलखातं समुद्धतम् ।  
स वै दिवा रात्रौ वा समाधि अधिगच्छति ॥

गद'गीस'दे'व'दे'वउर'दे ।      ।  
उ'व'दुदस'कस'दुद'दुस'व ।      ।  
दे'कस'के'र'द'स'क'के'स'व' ।      ।  
दे'द'दे'र'के'व'र'के'व'स'व' ।      ।

... किन्तु जिसकी ऐसी मनोवृत्ति जड़ मूल से पूरी तरह उच्छिन्न हो गयी,  
वह रात-दिन ( सर्वदा ) एकाग्रता को प्राप्त होता है ।

But he who has fully cut off, uprooted and destroyed this  
( selfseeking concern ), attains concentration by day and  
by night.

P 36 ( X, 13 )

P 131 V 250

गद'गीस'दू'व'के'स'व'उर'दे' ।      ।  
दे'र'के'के'र'द'स'क'के'स'व' ।      ।  
दे'स'के'के'र'द'स'क'के'स'व' ।      ।  
दे'द'दे'र'के'र'द'स'क'के'स'व' ।      ।

नत्थि रागसमो अग्नि, नत्थि दोससमो गहो ।  
नत्थि मोहसमं जालं, नत्थि तण्हासमा नदी ॥१७॥

जैतवन

पाँच उपासक

नास्ति रागसमोऽग्निः नास्ति द्वेषसमो ग्राहः ।  
नास्ति मोहसमं जालं, नास्ति तृष्णा समा नदी ॥

शुभं भवेत्तत्त्वम् । ।

अग्निं कलशं अद्भुतं भवेत्तत्त्वम् । ।  
मोहं वृत्तिं भवेत्तत्त्वम् । ।  
द्वेषं वृत्तिं भवेत्तत्त्वम् । ।  
तृष्णं वृत्तिं भवेत्तत्त्वम् । ।

राग के समान आग नहीं, द्वेष के समान ग्रह (=भूत, जुड़ल) नहीं;  
मोह के समान जाल नहीं, तृष्णा के समान नदी नहीं ।

There is no fire like lust and no grip like hate. There is no  
net like delusion and no torrent like craving.

P 109 ( XXIX, 41 )

P 132 V 251

अग्निं कलशं अद्भुतं भवेत्तत्त्वम् । ।  
मोहं वृत्तिं भवेत्तत्त्वम् । ।  
द्वेषं वृत्तिं भवेत्तत्त्वम् । ।  
तृष्णं वृत्तिं भवेत्तत्त्वम् । ।

सुदस्सं वज्जमज्जेसं, अत्तनो पन दुद्दसं ।  
 परेसं हि सो वज्जानि, ओपुनाति यथा भुसं ।  
 अत्तना पन छादेति, कलिं व कितवा सठो ॥१८॥

महियनगर ( जातियावन )

मेण्डक ( श्रेष्ठी )

सुदर्शं वच्चमन्येषां आत्मनः पुनर्दुर्दशम् ।  
 परेषां हि स वच्चानि अवपुणाति यथानुषम् ।  
 आत्मनः पुनः छादयति कलिमिव कितवात् शठः ॥

བཟང་མོ་ནི་གྲོང་ཏུ་འོ། །

གཞན་གྱི་ཉེས་པ་མཐོང་སྟེ། །  
 གྱི་ནས་རང་ལས་ཐོང་བར་དཀའ། །  
 གཞན་གྱི་ཁ་ན་མ་མཐོ་བ། །  
 དེ་ཡིས་སྟེན་པ་བཞིན་ཏུ་འབྱར། །  
 རང་གི་ཁ་ན་མ་མཐོ་བ། །  
 གྱིན་པོས་ཐོང་ན་བཞིན་ཏུ་བསྐྱེད། །

दूसरे का दोष देखना आसान है, किन्तु अपना ( दोष ) देखना कठिन है,  
 वह ( पुरुष ) दूसरों के ही दोषों को भुसे की भांति उड़ाता फिरता है, किन्तु  
 अपने दोषों को वैसे ही ढाँकता है, जैसे शठ जुआरी से पासे को ।

Easily seen are the faults of others, but hard indeed to see  
 are one's own. Like chaff one winnows others faults, but one's  
 own one hides as a crafty gambler conceals a bad throw.

P 91 ( XXVII, 1 )

P 132 V 252

བདག་ལས་གཞན་པའི་སྟོན་དག་ནི། །  
 ལུབ་མ་གཏོར་བ་རྩི་བཞིན་ཏུ། །  
 གཞན་གྱི་སྟོན་མཐོང་སྟེ་བ་ཉེ། །  
 རང་གི་སྟོན་ནི་མཐོང་བ་དཀའ། །  
 གཡོན་ཅན་ཆོ་ལོ་འཛོ་བ་ལྟར། །  
 རང་གི་དེ་ནི་སྟེན་པ་དང་། །

परवज्जानुपस्सिस्स, निच्चं उज्जानसज्जिनो ।  
आसवा तस्स वड्ढन्ति, आरा सो आसवक्खया ॥१६॥

जैतवन

उज्जानसज्जी ( धेर )

परवज्जानुपस्सिनो नित्यं उद्ध्यानसंज्ञिनः ।  
आस्रवास्तस्य वर्द्धन्ते आराद् स आस्रवक्षयात् ॥

गणकं सुत्तं वेषं वत्तं वत्तं ।  
द्वयं सुत्तं वेषं वत्तं वत्तं ।  
देवत्तं वत्तं वत्तं वत्तं ।  
देवत्तं वत्तं वत्तं वत्तं ।

दूसरे के दोषों की खोज में रहने वाले, सदा हाय हाय करने वाले, पुरुष  
के आस्रव (=चित्तमल) बढ़ते हैं, वह आस्रवों के विनाश से दूर हटा हुआ है ।

The taints of one who is observant of the faults of others  
and who is ever irritable go on increasing. He is far from  
exhausting the taints.

P 91 ( XXVII, 1 )

P 132 V 253

गणकं सुत्तं वेषं वत्तं वत्तं ।  
द्वयं सुत्तं वेषं वत्तं वत्तं ।  
देवत्तं वत्तं वत्तं वत्तं ।  
गणकं सुत्तं वेषं वत्तं वत्तं ।

आकाशेय पदं नत्थि, समणो नत्थि बाहिरे ।

पपञ्चाभिरता पजा, निष्पपञ्चा तथागता ॥२०॥

कुशीनगर

( सुमद् परिव्राजक )

आकाशे च पदं नास्ति श्रमणोनास्ति बहिः ।

प्रपञ्चाभिरताः प्रजा निष्प्रपञ्चास्तथागताः ॥

<sup>१</sup> ལྷ་མཚོག་གོང་དུ། ।

ནམ་མཁའ་ལ་ནི་ལམ་མེད་ད། ।

ཕྱི་རིལ་ག་ལ་དག་སྟོང་མེད། ।

འཛིག་དེན་སྟོན་ལ་མངོན་པར་དགའ། ।

དེ་བཞིན་གསེགས་པ་སྟོན་དང་བྲལ། ।

आकाश में पद (=बिह्व) नहीं, बाहर में श्रमण (=संन्यासी) नहीं रहता, लोग प्रपञ्च में लगे रहते हैं...। किन्तु तथागत बुद्ध प्रपञ्च-रहित होते हैं ।

There is no trace to be found in the sky. The religious practice of virtue is not to be found in outer things (i. e. neither of these is to be found by looking in the wrong place for them). Mankind delights in worldliness. The Tathagatas (Buddhas) are free from worldliness.

<sup>१</sup> ལྷ་མཚོག་གོང་ ( ལྷ་མཚོག་གོང་ ) ལྷ་མཚོག་གོང་ལ་ལམ་མེད་པར་  
ལྷ་མཚོག་གོང་ལ་ལམ་མེད་པར་ལྷ་མཚོག་གོང་། ।

आकासेव पदं नत्थि, समणो नत्थि बाहिरे ।

सङ्खारा सस्सता नत्थि, नत्थि बुद्धानमिञ्जितं ॥२१॥

आकाशे च पदं नास्ति श्रमणो नास्ति बहिः ।

संस्काराः शाश्वता न सन्ति, नास्ति बुद्धानामिञ्जितम् ॥

क्खमं सत्तमं पदं नत्थि, समणो नत्थि बाहिरे ।

सुखं पदं नत्थि, नत्थि बुद्धानमिञ्जितं ।

सत्तमं पदं नत्थि, समणो नत्थि बाहिरे ।

सत्तमं पदं नत्थि, समणो नत्थि बाहिरे ।

सत्तमं पदं नत्थि ।

सत्तमं पदं नत्थि ॥

आकाश में पद (=चिह्न) नहीं, बाहर में श्रमण (=संन्यासी) नहीं रहता, संस्कार शाश्वत नहीं है, (किन्तु) तथागत (=बुद्ध) में चंचलता नहीं होते हैं ।

There is no trace to be found in the sky. The religious practice of virtue is not to be found in outer things. There is no compounded thing that is eternal. There is no instability in the Buddhas ( i. e. they are not subject to change ).

## १६—धम्मट्ठवग्गो

न तेन होति धम्मट्ठो, येनत्थं सहसा नये ।  
यो च अत्थं अनत्थं च, उभो निच्छेय्य पण्डितो ॥१॥

जेतवन

विनिच्छेयमहमच्च ( = न्यायाधीश )

न तेन भवति धर्मस्थो येनार्थं सहसा नयेत् ।  
यश्चाऽर्थं अनर्थं च उभौ निश्चिनुयात् पण्डितः ॥

कुपं सुते कंय सुते ।।

सुव क्कं सु ते ते क्कं अत्ते क्कं मात् । ।

दे व क्कं सु ते क्कं अत्ते क्कं मात् । ।

मात् मात् सु ते क्कं अत्ते क्कं मात् । ।

मात् मात् सु ते क्कं अत्ते क्कं मात् । ।

सहसा जो अर्थ ( = काम की वस्तु ) को करता है, वह धर्म में अवस्थित नहीं कहा जाता । जो अर्थ-अनर्थ दोनों विचार कर काम करता है वही पण्डित है ।

One is not just if one gives one's verdict arbitrarily. The wise man should investigate both right and wrong.



असाहसेन धम्मेन, समेन नयती परे ।  
धम्मस्स गुत्तो मेधावी, धम्मट्ठो ति पवुच्चति ॥२॥

असाहसेन धर्मेण समेन नयते परान् ।  
धर्मेण गुप्तो मेधावी धर्मस्थ इत्युच्यते ॥

सुव. कें. के. वर. व. रें. व. क. स. ।  
कें. वर. व. सुव. वर. व. रें. व. ।  
कें. वर. व. सुव. वर. व. रें. व. ।  
कें. वर. व. सुव. वर. व. रें. व. ।

सहसा जो अर्थ (=काम की वस्तु) को करता है, वह धर्म में अवस्थित नहीं कहा जा सकता । पण्डित को चाहिए कि वह अर्थ, अनर्थ दोनों का विचार (करके) करे ।

Considerately leading others according to the Dharma, the wise one is protected by the Dharma. He is said to be a guardian of the Dharma.

न तेन पण्डितो होति, यावता बहु भासति ।  
 खेमी अवैरी अभयो, पण्डितो ति पवुच्चत्ति ॥३॥

चेतवन

छवग्गिय ( मिश्रु )

न तावता पण्डितो भवति यावता बहु भाषते ।  
 खेमी अवैरी अभयः पण्डित इत्युच्यते ॥

ई०ठम०मर०रु०क्षु०प्रे०वा ।  
 रे०ठम०रु०के०ममस०वा०मै०  
 म०त्रे०रु०म०म०मे०रु०मे०मे०मे०मे० ।  
 म०मस०वा०मे०मे०मे०मे०मे०मे०मे० ।

बहुत भाषण करने से पण्डित नहीं होता । जो क्षेमवान् अवैरी और अभय होता है, वही पण्डित कहा जाता है ।

A man is not learned simply because he talks much. He who is patient, friendly and fearless is said to be learned.

न तावता धम्मधरो, यावता बहु भासति ।  
 यो च अप्पं पि सुत्वान, धम्मं कायेन पस्सति ।  
 स वे धम्मधरो होति, यो धम्मं नप्पमज्जति ॥४१॥

जैतवन

एकूदान ( केर )

न तावता धर्मधरो यावता बहु भाषते ।  
 यश्चात्पमपि श्रुत्वा धर्मं कायेन पश्यति ।  
 स वै धर्मधरो भवति यो धर्मं न प्रमाद्यति ॥

है. ठस. षड. दु. षु. सु. वे. पा ।  
 दे. ठस. दु. के. षु. षु. वे. पा ।  
 षड. वे. पा. वे. पा. वे. पा. वे. पा ।  
 षु. वे. पा. वे. पा. वे. पा. वे. पा ।  
 षु. वे. पा. वे. पा. वे. पा. वे. पा ।  
 दे. के. षु. वे. पा. वे. पा. वे. पा ।

बहुत बोलने से धर्मधर (= धार्मिक ग्रन्थों का ज्ञाता ) नहीं होता, जो थोड़ा भी सुनकर शरीर से धर्म का आचरण करता है, और जो धर्म में असावधानी (= प्रमाद ) नहीं करता, वही धर्मधर है ।

A man is not a holder of the 'Dharma' simply because he talks much. But whoever, although of little learning, looks at the Dharma through his body ( i. e. puts in into practice ) and is not heedless towards the Dharma, is indeed a holder of the Dharma.

न तेन थेरो सो होति, येनस्स पलितं सिरो ।

परिपक्को वयो तस्स, मोघजिण्णो ति वुच्चति ॥५॥

जेतवन

लकुण्टक मद्दिय ( थेर )

न तेन स्थविरो भवति येनाऽस्य पलितं शिरः ।

परिपक्वं वयस्तस्य मोघजीर्ण इत्युच्यते ॥

गदं मीं मीं वं सुं गुरुं व । ।

दें यीं स गुरुं वदं मीं रं गुरुं दे । ।

दें यीं रं ऊं दें यीं स गुरुं वदं । ।

दें रं मीं गुरुं वं सुं वदं वदं दे । ।

शिर ( बाल के ) पकने से थेर (=स्थविर, वृद्ध) नहीं होता, उसकी आयु परिपक्व हो गई ( सही ), ( किन्तु ) वह व्यर्थ का वृद्ध कहा जाता है ।

A man is not an Elder simply because his head is grey. His age is ripe, but he is called "grown old in-vain".

P 38 ( XI. 11 )

P 137 V 260

मीं वं सुं वं सुं गुरुं वदं दे । ।

दें दें गुरुं वदं मीं रं गुरुं दे । ।

दें रं मीं गुरुं वं सुं वदं वदं दे । ।

दें रं मीं गुरुं वं सुं वदं वदं दे । ।

यम्हि सच्चं च धम्मो च, अहिंसा संयमो दमो ।  
स वे वत्तमलो धीरो, थेरो इति पवुच्चति ॥६॥

यस्मिन् सत्यं च धर्मश्चाहिंसा संयमो दमः ।  
स वै वात्तमलो धीरः स्थविर इत्युच्यते ॥

གང་ལ་བདེན་དང་ཚེས་དག་དང་།        ।  
འཚོ་མེད་སྒོམ་དང་སྦྱིས་ས་ཡོད་པ།        ।  
དྲི་མེད་བདུན་པ་དེ་ཉིད་ནི།                ।  
གནས་བདུན་ཞེས་བྱ་ར་རྗེས་སུ་བཟོད།        ।

जिसमें सत्य, धर्म, अहिंसा, संयम और दम हैं, वही विगतमल, धीर और स्थविर कहा जाता है ।

In whom there is truth, virtue, harmlessness, restraint and control, the wise man who has cast out the impurities, he is indeed called an Elder.

P 38 ( XI, 12 )

P 137 V 261

གང་གིས་དག་དང་སྦྱིས་པ་དག        ।  
སྒྲངས་ཤིང་ཚངས་པར་སྦྱོད་པ་དང་།        ।  
རྗེ་ཚེས་སྦྱིས་ས་ནས་སྦྱོར་བྱེད་པ།        ।  
དེ་ནི་གན་བདུན་ཞེས་བྱའོ།                ।

न वाक्करणमत्तेन, वर्णपोक्खरताय वा ।  
साधुरूपो नरो होति, इस्सुकी मच्छरी सठो ॥७॥

जेतवन

बहुत से भिक्षु

न वाक्करणमात्रेण वर्णपुष्कलतया वा ।  
साधुरूपो नरो भ को मत्सरी शठः ॥

।। ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ।  
।। ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ।  
।। ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ।  
।। ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ।

( यदि वह ) ईर्ष्यालु, मत्सरी और शठ है; तो वक्ता होनेमात्र से, सुन्दर रूप होने से, आदमी साधु-रूप नहीं होता है ।

The jealous, ignoble, common man, even if he has a beautiful face and great eloquence, does not there by gain a holy and inspiring presence.

यस्य चेतं समुच्छिन्नं, मूलघच्चं समूहतं ।  
स वन्तदोषो मेधावी, साधुरूपो ति वुच्यति ॥८॥

यस्य चैतत् समुच्छिन्नं मूलघातं समुद्रघतम् ।  
स वान्तदोषो मेधावी साधुरूप इत्युच्यते ॥

གང་ལ་དེ་ནམས་རབ་ཆད་ཅིང་།                     ।  
ཅ་བ་དུང་ནས་ཕྱང་བྱས་པ།                     ।  
སྒྲོན་མེད་སྒྲོ་དང་ཐུན་པ་ནི།                     ।  
ལེགས་པའི་གཟུགས་སུ་བཟོད་པ་ཡིན།                     ।

जिसके यह जड़मूल से बिलकुल उच्छिन्न हो गये हैं; जो विगतदोष, मेधावी है, वही साधु-रूप कहा जाता है ।

But in whom these bad qualities are wholly cut off, uprooted and extinct, that intelligent man who has cast out his faults, he is known to have a holy and inspiring presence.

न मुण्डकेन समणो, अब्बतो अलिकं भणं ।  
इच्छालोभसमापन्नो, समणो किं भविस्सति ॥६॥

जैतवन

हृत्थक ( मिश्र )

न मुण्डकेन श्रमणोऽव्रतोऽलीकं भणन् ।  
इच्छालाभसमापन्नः श्रमणः किं भविष्यति ॥

चट्ठमं ब्रह्मसंघेयं दमं चट्ठमं ब्रह्मसंघं ॥  
अथोपेक्ष्य चट्ठमं दमं चट्ठमं ब्रह्मसंघं ॥  
अथोपेक्ष्य चट्ठमं दमं चट्ठमं ब्रह्मसंघं ॥  
अथोपेक्ष्य चट्ठमं दमं चट्ठमं ब्रह्मसंघं ॥

जो व्रतरहित, मिथ्याभाषी है, वह मुण्डित होने मात्र से श्रमण नहीं होता । इच्छा लाभ से भरा ( पुरुष ), क्या श्रमण होगा ?

Not by a shaven head does an undisciplined man who utters lies become a saint. How will he be a saint, who is full of desire and greed ?

P 38 ( XI, 13 )

P 139 V 264

चट्ठमं ब्रह्मसंघेयं दमं चट्ठमं ब्रह्मसंघं ॥  
अथोपेक्ष्य चट्ठमं दमं चट्ठमं ब्रह्मसंघं ॥  
अथोपेक्ष्य चट्ठमं दमं चट्ठमं ब्रह्मसंघं ॥  
अथोपेक्ष्य चट्ठमं दमं चट्ठमं ब्रह्मसंघं ॥



यौ च समैति पापानि, अणुं थूलानि सब्बसो ।  
समितत्ता हि पापानं, समणो ति पवुच्चति ॥१०॥

यश्च शमयति पापानि अणूनि स्थूलानि सर्वशः ।  
शमितत्त्वाद्धि पापानां श्रमण इत्युच्यते ॥

གང་ཞིག་སྒྲིག་པ་རྣམས་པ་དང་། །  
སྤ་མོ་ཐམས་ཅད་ཞི་བྱེད་པ། །  
སྒྲིག་པ་ཞི་བ་ཉིད་ཀྱིས་ཐྱིད། །  
དག་སྦྱོང་ཞི་བ་ཞེས་བྱུང་བཟོད། །

जौ छोटे-बड़े पापों को सर्वथा शमन करनेवाला है; पाप को शमित होने के कारण वह समण (=श्रमण) कहा जाता है ।

He who wholly subdues all his sins both crude and subtle is called a saint, because he has pacified all evil.

P 38 ( XI, 15 )

P 139 V 265

བདུལ་བྱུགས་མེད་ཅིང་རྩལ་སྒྲིག་། །  
མགོ་བོ་བྲེགས་ཅམ་དག་སྦྱོང་མིན། །  
གང་དག་སྒྲིག་པ་ཆེ་སྤ་དག །  
ཀུན་ལ་བདུགས་ནས་བྱེད་པ་དང་། །  
སྒྲིག་པ་ཞི་བ་དེ་དག་ནི། །  
དག་སྦྱོང་ཉིད་ཅེས་བཟོད་པར་བྱ། །

न तेन भिक्षु सो होति, यावता भिक्षते परे ।

विस्सं घम्मं समादाय, भिक्षु होति न तावता ॥११॥

जैतवन

कोई ब्राह्मण

न तावता भिक्षुः [ स ] भवति यावता भिक्षते परान् ।

विश्वं धर्मं समादाय भिक्षुर्भवति न तावता ॥

इ·उम·मल्ल·अ·स्सो·उरे·वा । ।

दे·उम·दु·के·दमो·स्सो·मै·वा । ।

ऊँ·उम·मल्ल·अ·स्सो·मल्ल·अ·स्सो·मल्ल । ।

दमो·स्सो·मल्ल·अ·स्सो·मल्ल·अ·स्सो·मल्ल । ।

दूसरों से भिक्षा माँगने मात्र से भिक्षु नहीं होता, ( अपितु ) सारे धर्मों का ग्रहण करके भिक्षु होता है, उतने मात्र से नहीं ।

Therefore one is not a Bhikshu ( a developer of virtue ) simply because one begs. Only he who completely adopts all of the Dharma is a Bhikshu, and not any others.

योध पुञ्चं च पापं च, बाहेत्वा ब्रह्मचरियवा ।  
सङ्ख्याय लोके चरति, स वै भिक्खू ति वुच्चति ॥१२॥

जैतवन

कोई ब्राह्मण

य इह पुण्यं च पापं च बाहयित्वा ब्रह्मचर्यवान् ।  
संख्याय लोके चरित स वै भिक्षुरित्युच्यते ॥

मादं लेणं च सोदं वससं सुमां च दमा ।  
मोदं वसं मदसं च सोदं वसं लेदं ॥  
मदमां देवमादसं सु सुदं सुदं च ।  
देवमादमां सुदं लेसं सुदं मदं ॥

जो यहाँ पुण्य और पाप को छोड़ ब्रह्मचारी बन ज्ञान के साथ लोक में  
विचरता है, वह भिक्षु कहलाता है ।

He who has abandoned both merit and demerit, he who  
is chaste, he who lives with understanding in the world, he  
indeed, is called a Bhikshu.

न मोनेन मुनी होति, मूढरूपो अविदुसु ।  
यो च तुलं व पग्गय्ह, वरमादाय पण्डितो ॥१३॥

जेतवन

तीर्थिक

न मोनेन मुनिर्भवति मूढरूपोऽविद्वान् ।  
यश्च तुलामिव प्रगृह्य परमादाय पण्डितः ॥

मुक्खं पेदिदं छंयं वेणुमं व । ।  
सुं वठं वुसं वसं सुमं वं वीर । ।  
अमसं वं वणं वेणुं वणं वणं वु । ।  
अक्खं वु वु वु वु वु वु वु वु । ।

अविद्वान् और मूढसमान ( पुरुष सिर्फ ) मौन होने से मुनि नहीं होता,  
जो पण्डित तुला की भाँति पकड़कर उत्तम ( तत्त्व ) को ग्रहण कर.....

Not by silence ( alone ) does he who is dull and ignorant  
become a sage. But the wise man who, as if holding a pair of  
scales, embraces the best,

पापानि परिवर्ज्येति, स मुनि तेन सो मुनि ।  
यो मुनाति उभो लोके, मुनि तेन पवुच्चति ॥१४॥

पापानि परिवर्जयति स मुनिस्तेन स मुनिः ।  
यो मनुत उभौ लोकौ मुनिस्तेन प्रोच्यते ॥

श्रीमन्मन्त्रः श्रीमन्मन्त्रः ।  
देवैः श्रीमन्मन्त्रः ।  
मन्त्रः श्रीमन्मन्त्रः ।  
देवैः श्रीमन्मन्त्रः ।

.... पापों का परित्याग करता है, वह मुनि है, और उक्त प्रकार से मुनि होता है । चूँकि वह दोनों लोकों का मनन करता है, इसलिए वह मुनि कहा जाता है ।

And shuns evil, is a sage, he is for that very reason a sage. He that understands both worlds ( of good and bad ) is on that very account called a sage.

न तेन अरियो होति, येन पाणानि हिंसति ।  
अहिंसा सब्बपाणानं, अरियो ति पवुच्चति ॥१५॥

जैतवन

अरिय बालिसिक

न तेनाऽऽर्यो भवति येन प्राणान् हिनस्ति ।  
अहिंसया सर्वप्राणानां आर्य इति प्रोच्यते ॥

मरुणैस्सुखं विदुषां सुखं वा ।  
देसं विदुषां सुखं विदुषां सुखं ।  
सुखं विदुषां सुखं विदुषां सुखं ।  
विदुषां सुखं विदुषां सुखं विदुषां ।

प्राणियों का हिंसा करने से ( कोई ) आर्य नहीं होता, सभी प्राणियों की हिंसा न करने से ( उसे ) आर्य कहा जाता है ।

By killing living beings one does not become an Arya. By nonkillingness towards all living beings one is called an Arya.

न शीलव्रतमत्तेन, बाहुसच्चेन वा पन ।

अथ वा समाधिलाभेन, विवित्तसयनेन वा ॥१६॥

जेतवन

बहुत से शील आदि-युक्त मिश्र

न शीलव्रतमात्रेण बाहुश्रुत्येन वा पुनः ।

अथवा समाधिलाभेन विविच्य शयनेन वा ॥

हृद्यं श्रैमसं बहुश्रुतं श्रुतं स गृह्यं स ॥

सदं श्रैमं गृह्यं गृह्यं स श्रुतं स ॥

देव्यं देव्यं देव्यं देव्यं देव्यं देव्यं देव्यं ॥

देव्यं देव्यं देव्यं देव्यं देव्यं देव्यं देव्यं ॥

केवल शील और व्रत से, बहुश्रुत होने ( मात्र ) से, या ( केवल ) समाधिलाभ से, या एकान्त में शयन करने से.....

Not only by morality and firm discipline, not only by much learning, not by attainment of concentration, nor by lonely lodging,

फुसामि नेक्खम्मसुखं, अपुथुज्जनसेवितं ।  
 भिक्खु विस्सासमापादि, अप्पत्तो आसवक्खयं ॥१७॥

स्पृशामि नैकर्म्यसुखं अपृथग्जनसेवितम् ।  
 भिक्षो ! विश्वासं मा पादोः अप्राप्त आस्रवक्षयम् ॥

सो'स्सो'क्खस'ग्रेस'स'वस्से'क'वरि । १

उ'व'स'वदे'स'वद'ग'सो'स'रे'ग १

उ'ग'स'उ'द'स'स'वे'व'ह'व' १

द'ग'स'स'स'स'स'स'स'स'स'स' १

सो'स'स'स'स'स'स'स'स'स' १

सो'स'स'स'स'स'स'स'स'स' १

...पृथग्जन (= अज्ञ ) जिसे नहीं सेवन कर सकते, उस नैकर्म्य (= निर्वाण )  
 सुख को मैं अनुभव नहीं कर रहा हूँ । हे भिक्षुओ ! जब तक आस्रवों  
 (= चित्तमलों ) का क्षय न हो जाय, तब तक तुम चुप न बैठे रहो ।

Did I reach the happiness of freedom from all dualistic activity, which no worldling can attain. O mendicants, do not relax and rest until you have attained the extinction of the taints.



## २०—मगवग्गो

मगानट्ठङ्गिको सेट्ठो, सच्चानं चतुरो पदा ।

विरागो सेट्ठो धम्मानं, द्विपदानं च चक्षुमा ॥१॥

सैतवन

पांच सौ भिक्षु

मार्गाणामष्टांगिकः श्रेष्ठः सत्यानां चत्वारि पदानि ।

विरागः श्रेष्ठो धर्माणां द्विपदानां च चक्षुमान् ॥

कुयं भूयं कयं भूयं । ।

असं कससं दमं असं अकं अमं वकुं । ।

वदेकं वं कससं असं कौमसं कदं वविं । ।

कौसं कससं असं केकसं वुअं ददं । ।

कदं वाकौसं कससं असं सुकं वुअं अकौमं । ।

मार्गों में अष्टांगिक मार्ग श्रेष्ठ है, सत्यों में चार पद (=चार आर्यसत्य ) श्रेष्ठ हैं, धर्मों में वैराग्य श्रेष्ठ है, द्विपदों (=मनुष्यों ) में चक्षु मान (=ज्ञान-वैश्वधारी, बुद्ध ) श्रेष्ठ हैं ।

The best of paths is the Eightfold Path. ( The eight fold path consists of 1. Right knowledge, 2. Right thoughts, 3. Right speech, 4. Right action, 5. Right livelihood, 6. Right effort, 7. Right mindfulness, and 8. Right concentration ). The best of truths are the Four Noble Truths. ( The Four Noble Truths are the Noble Truths of Suffering, of the Cause of Suffering, of the Destruction of Suffering, and the Path leading to the Destruction of Suffering, which is the Eightfold Path ) The best of conditions is freedom from attachment. The best of bipeds ( men ) is the Seeing One ( the Buddha ).

ऐसो व मग्गो नत्थञ्जो, दस्सतस्स विमुद्धिया ।  
एतञ्चिह तुम्हे पटिपज्जथ, मारस्सेतं प्रमोहनं ॥२॥

एष वो मार्गो नाऽस्त्यन्यो दर्शनस्थ विशुद्धये ।  
एतं हि यूयं प्रतिपद्यध्वं मारस्येष प्रमोहनः ॥

अर्घेयं वं क्खं वरं दग्गं वं वा ।      ।  
असं किं अदि असां गत्थं ससं ससं ।      ।  
सुदं किं अदि अं अहुं वरं ससं ।      ।  
अदि अं वदुं किं वं वं सुं ससं ।      ।

दर्शन ( ज्ञान ) की विशुद्धि के लिए यही मार्ग है, दूसरा नहीं ( भिक्षुओं );  
इसी पर तुम आरुढ़ होओ, यही मार को मूर्छित करने वाला है ।

This is the Path; there is none other that leads to the  
completely pure vision ( understanding ). You must follow  
this Path, for that will be the confusion ( and defeat ) of Mara.

P 11 ( 274 )

P 145 V 274

अं वं क्खं वरं दग्गं सुदं वं वा ।      ।  
असं अदि ससं गत्थं ससं ससं ससं ।      ।  
सुदं किं अदि अं वं अहुं वरं ससं ।      ।  
अदि अं वदुं किं वं वं सुं ससं ।      ।

एतच्चिह तुम्हें पटिपन्ना, दुखस्सन्तं करिस्सथ ।  
अक्खातो वो मया मग्गो अञ्जाय सल्लकन्तनं ॥३॥

जैतवन

पाँच सौ भिक्षु

एतं हि यूयं प्रतिपन्ना दुःखस्यान्तं करिष्यथ ।  
आख्यातो वै मया मार्ग आञ्जाय शल्य-संस्थानम् ॥

इदं उवाच भगवान् ।

शुण्वन्त्युवाच भगवान् ।

कथं भगवन् ।

अथ भगवन् ।

इस ( मार्ग ) पर आरुढ़ हो तुम दुःख का अन्त कर सकोगे, ( स्वयं )  
जानकर ( राग आदि के विनाश में ) शल्य समान मार्ग को मैंने उपदेश  
कर दिया ।

By staying on this Path you will make an end of your  
sorrows. I teach this path after having removed all the thorns  
( of the troublesome passions ).

तुम्हेहि किञ्चमातप्यं अक्खातारो तथागता ।  
पटिपन्ना पमोक्खन्ति, ज्ञायिनो मारबन्धना ॥४॥

पुणमाभिः कार्यं आतप्यं आख्यातारस्तथागताः ।  
प्रतिपन्नाः प्रमोक्ष्यन्ते ध्यायिनो मारबन्धनात् ॥

देवैकं न ज्ञेयं न ज्ञेयं न ज्ञेयं न ज्ञेयं न ज्ञेयं ॥  
सुदं उमा न ज्ञेयं न ज्ञेयं न ज्ञेयं न ज्ञेयं न ज्ञेयं ।  
वज्रं न ज्ञेयं न ज्ञेयं न ज्ञेयं न ज्ञेयं न ज्ञेयं ।  
वज्रं न ज्ञेयं न ज्ञेयं न ज्ञेयं न ज्ञेयं न ज्ञेयं ।

कार्य के लिए तुम्हें उद्योग करना है, तथागतों (=बुद्धों) का कार्य उपदेश कर देना है, ( तदनुसार मार्ग पर ) आरुढ़ हो ध्यान में रत पुरुष मार के बन्धन से मुक्त हो जायेंगे ।

You yourselves must strive. The Tathagatas ( Buddhas, those who have gone from samsara ) only teach ( it is you who must put it into practice ). Those who by meditation enter deep awareness ( samadhi ) are freed from the bonds of Mara.

सब्बे सङ्खारा अनित्ता ति, यदा पञ्जाय पस्सति ।  
अथ निब्बिन्दति दुक्खे, एस मग्गो विमुद्धिया ॥५॥

जैतवन

पांच सौ मिश्र

[ अनित्य-लक्षणम् ]

सर्वे संस्कारा अनित्या इति यदा प्रज्ञया पश्यति ।  
अथ निर्विन्दति दुःखानि, एष मार्गो विशुद्धये ॥

अनुसुसंस्मृतं उद्वेगं नृणां ।  
मदं केषं नृणां नृणां नृणां ।  
नृणां नृणां नृणां नृणां ।  
नृणां नृणां नृणां नृणां ।

सभी संस्कृत (=कृत, निर्मित, बनी) चीजें अनित्य हैं; यह जब प्रज्ञा से देखता है, तब सभी दुःखों से निर्वेद (=विराग) को प्राप्त होता है, यही मार्ग (चित्त) शुद्धि का है।

“All compounded things are impermanent”. When through wisdom this is realised, one cannot then be harmed by suffering. This is the Path of purity.

P 5 ( 277 )

P 146 V 277

अनुसुसंस्मृतं उद्वेगं नृणां ।  
मदं केषं नृणां नृणां नृणां ।  
नृणां नृणां नृणां नृणां ।  
नृणां नृणां नृणां नृणां ।

सब्बे सङ्खारा दुक्खा ति, यदा पञ्चाय पस्सति ।  
अथ निब्बिन्दति दुक्खे, एस मग्गो विसुद्धिया ॥६॥

[ दुःख-लक्षणम् ]

सर्व संस्कारा दुःखा इति यदा प्रज्ञया पश्यति ।  
अथ निर्विन्दति दुःखानि, एष मार्गो विशुद्धये ॥

अनुसुखसमसं उदुसुखं वसुखं वेस ।  
मादं कं मेसं रवं ग्रेसं मसुदं व ।  
सुखं वसुखं दमा मीसं कुमासं मीं अनुद ।  
अदं कं कसं दमा मसं मीं कं क ।

सभी संस्कृत ( चीजे ) दुःखमय हैं । यह सब जब प्रज्ञा से देखता है, तब सभी दुःखों से निर्वेद (=विराग) को प्राप्त होता है, यही मार्ग (चित्त-) शुद्धि का है ।

“All compounded things are sorrowful.” When through wisdom this is realised, one cannot then be harmed by suffering. This is the Path of purity.

P 9 ( 278 )

P 147 V 278

अनुसुखसमसं उदुसुखं वसुखं वस ।  
मादं कं मेसं रवं ग्रेसं मसुदं व ।  
दे कं सुखं वसुखं मसं मीं अनुद ।  
मसं अदं कं कसं वसं दमा वसं अनुद ।

सब्बे धम्मा अनत्ता ति, यदा पञ्चाय पस्सति ।

अथ निर्विन्दति दुक्खे, एस मग्गो विमुद्धिया ॥७॥

[ अनात्म-लक्षणम् ]

सर्वे धर्मा अनात्मान इति यदा प्रज्ञया पश्यति ।

अथ निर्विन्दति दुःखानि एष मार्गो विशुद्धये ।

कॅसं क्खसं प्रससं उदं वदमां सेदं ठेसा ।

मादं कॅं पेसं रवं गुसं मसॅदं व ।

हुमां वसुअं दमां मीसं कुमां मीं अगुम ।

अदं कै क्खं दमां अमं अदं कै ।

सभी धर्म (=पदार्थ) बिना आत्मा के हैं, यह जब प्रज्ञा से देखता है, तब सभी दुःखों से निर्वेद (=विराग) को प्राप्त होता है, यही मार्ग (चित्त-) शुद्धि का है ।

“All phenomena are without inherent self-nature.” When through wisdom this is realised, one cannot then be harmed by suffering. This is the Path of purity.

P 8 ( 279 )

P 147 V 279

अदुं हेदं प्रससं उदं वदमां सेदं वसां ।

मादं कॅं पेसं रवं गुसं मसॅदं व ।

दे कॅं हुमां वसुअं अमं अदं अगुम ।

अमं अदं क्खं दमां अमं अदं अगुम ।

उठानकालम्हि अनुद्वहानो,  
 युवा बली आलसियं उपेतो ।  
 संसन्नसङ्कल्पमनो कुसीतो,  
 प्रज्जाय मगं अलसो न विन्दति ॥८॥

जितवन

( योगी ) तिस्स ( थेर )

उत्थानकालेऽनुत्तिष्ठान् युवा बली आलस्यमुपेतः ।  
 संसन्न-संकल्प-मनः कुसीदः प्रज्जाय मार्गं अलसो न विन्दति ॥

कुपंसेनं कथं सुते । ।

इदं वरं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।

मत्तेनं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।

सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।

सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।

जो उठान (=उद्योग) के समय उठान न करनेवाला, युवा और बली होकर ( भी ) आलस्य से युक्त होता है, मन के संकल्पों को जिसने गिरा दिया है, और जो कुसीदी (=दीर्घसूत्री) है, वह आलसी (पुरुष) प्रज्ञा के मार्ग को नहीं प्राप्त कर सकता ।

One who does not rouse himself when it is time to rise, who though young and strong, is slothful and weak in his understanding of pure thoughts, that lazy, idle man will not find the Path of Wisdom.

P 126 ( XXXI, 33 )

P 148 V 280

इदं वरं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।

सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।

सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।

सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।



वाचानुरक्खी मनसा सुसंवुत्तो,  
 कायेन च अकुसलं न कयिरा ।  
 एते तयो कम्मपथे विसोधये,  
 आराधये मग्गमिसिप्पवेदितं ॥६॥

राजशृङ्ग ( वेणुवन )

( शूकर-प्रेत )

वाचाऽनुरक्षी मनसा सुसंकृतः  
 कायेन चाऽकुशलं न कुर्यात् ।  
 एतान् त्रीन् कर्मपथान् विशोधयेत्,  
 आराधयेत् मार्गं ऋषिप्रवेदितम् ॥६॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥  
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥  
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥  
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥

जो वाणी की रक्षा करनेवाला, मन से संयमी रहे, तथा काया से पाप न करे; इन ( मन, वचन, काय ) तीनों कर्मपथों की शुद्धि करे, और ऋषि ( = बुद्ध ) के जतलाये धर्म का सेवन करे ।

Watchful of speech and well restrained in mind, let him do nothing unvirtuous with his body. Let him purify these three ways of action, and win the Path realised by the Sages.

योगा वे जायती भूरि, अयोगा भूरिसङ्ख्यो ।  
 एतं द्वेधापथं ज्ञत्वा, भवाय विभवाय च ।  
 तथात्मानं निवेशयेद् यथा भूरि पवङ्गति ॥१०॥

जैतवन

पोठिल ( येर )

योगाद् वै जायते भूरि अयोगाद् भूरिसंख्यः ।  
 एतं द्वेधापथं ज्ञत्वा भवाय विभवाय च ।  
 तथाऽऽत्मानं निवेशयेद् यथा भूरि प्रवङ्गति ॥

सुखं सुखं सुखं । ।

कृष्णं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।

कृष्णं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।

सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।

सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।

सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।

सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं । ।

( मन के ) योग (=संयोग) से भूरि (=ज्ञान) उत्पन्न होता है, अयोग से भूरि का क्षय होता है। लाभ और विनाश के इन दो प्रकार के मार्गों को जानकर, अपने को इस प्रकार रखें, जिससे कि भूरि की वृद्धि होवे।

From meditation wisdom rises, without meditation wisdom wanes. Knowing this twofold path of gain and loss, let a man so conduct himself that wisdom may increase.

वनं छिन्दथ मा रुक्खं, वनतो जायते भयं ।  
छित्त्वा वनं च वनथं च, निब्बन्ना होथ भिक्खवो ॥११॥

जैतवन

कोई वृद्ध भिक्षु

वनं छिन्धि मा वृक्षं वनतो जायते भयम् ।  
छित्त्वा वनं च वनथं च निर्वाणा भवत भिक्षवः ॥

सुखं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं ।  
पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं ।  
पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं ।  
पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं ।

वन को काटो, वृक्ष को मत; वन से भय उत्पन्न होता है, भिक्षुओ ! वन  
और झाड़ी को काटकर निर्वाण को प्राप्त हो जाओ ।

Cut down the forest ( of troublesome defilements ), not  
just a single tree. From the forest springs fear. Cutting the  
forest and its undergrowth, O Bhikshus, you will gain Nirvana.

P 58 ( XVIII, 3 )

P 149 V 283

पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं ।  
पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं ।  
पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं ।  
पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं पत्तं ।

याव हि वनथो न छिज्जति,  
अणुमत्तो पि नरस्स नारिसु ।  
पटिबद्धमनो व ताव सो,  
वच्छो खीरपको व मातरि ॥१२॥

यावद्धि वनथो न छिद्यतेऽणुमात्रोऽपि नरस्य नारीषु ।  
प्रतिबद्धमनाः तु तावत् स वत्सःक्षीरप इव मातरि ॥

ॐ श्रैरुं श्रीं वै सुतुं मेरुं वा । ।  
ॐ रुरुं वं हुरुं उरुं मं ऊरुं गुरुं । ।  
श्रुगं शु ॐ रुरुं मं वा वलैव । ।  
दे श्रैरुं दे वै सुतुं वैरुं रुरुं । ।

जब तक अणुमात्र भी स्त्री में पुरुष की कामना अखण्डित रहती है, तब तक दूध पीनेवाला बछड़ा जैसे माता में आवद्ध रहता है, वैसे ही वह पुरुष बँधा रहता है ।

For as long as a man's desire for women, however slight, is not destroyed, then for just so long is his mind attached to phenomenal existence, like a sucking calf to its mother.

P 58 ( XVIII, 4 )

P 150 V 284

मय दे वमसं सुते मं वरुं वा । ।  
मं मं गुरुं गुरुं मं वरुं सु । ।  
मं सुतुं वं वै ॐ रुरुं वेरुं वरुं । ।  
दे मं मं मं मं मं मं मं मं । ।

उच्छिन्न स्नेहमत्तनो, कुमुदं सारदिकं व पाणिना ।  
 सन्तिमगमेव ब्रूह्य, निब्बानं सुगतेन देसितं ॥१३॥

जैतवन

सुवण्णकार ( थेर )

उच्छिन्धि स्नेहमात्मनः कुमुदं शारदिकमिव पाणिना ।  
 शान्तिमार्गमेव ब्रूह्यं निर्वाणं सुगतेन देशितम् ॥

झुँकं गदिं गुकं दं ममां मसं मविं ।  
 मरं मं द्रिं मतेसं मद्रिं मतेरं मरं मद्रिं ।  
 मदे मरं ममेमसं मसुमसं सु मरं मरं ।  
 वि मरिं मसं द्रिं मद्रिं मद्रिं मरं मद्रिं ।

हाथ से शरद् ( ऋतु ) के कुमुद की भाँति आत्मस्नेह को उच्छिन्न कर  
 डालो, सुगत (= बुद्ध ) द्वारा उपदिष्ट ( इस ) शान्तिमार्ग का आश्रय लो ।

Cut off the love of self as you would pluck an autumn  
 lily with the hand. Cultivate that very Path to the peace of  
 Nirvana that has been taught by the Sugata ( Buddha ).

P 58 ( XVIII, 5 )

P 150 V 285

ममां मसं झुँकं गदिं मद्रिं मद्रिं ।  
 मरं मं मरं मरं मरं मरं मरं मरं ।  
 मदे मरं ममेमसं मसुमसं सु मरं मरं मरं मरं ।  
 वि मरिं मसं द्रिं मद्रिं मद्रिं मरं मद्रिं मरं मद्रिं ।

इध वस्सं वसिस्सामि, इध हेमन्तगिम्हिसु ।  
इति बालो विचिन्तेति, अन्तरायं न बुज्जति ॥१४॥

जेतवन

( महावती वणिक )

इह वर्षासु वसिष्यामि इह हेमन्तग्रीष्मयोः ।  
इति बालो विचिन्तयति, अन्तरायं न बुध्यते ॥

མཉམ་ཡོད་ཏུ་ཆོང་བ་ཡོད། །

འདྲིང་ནི་དབྱར་དང་འདྲི་ཉིད་ཏུ། །

དགུན་དང་དབྱིང་ཏུས་ང་ཚོར་ཅེས། །

ལྷན་པོ་དག་ནི་སེམས་བྱེད་དེ། །

བར་ཏུ་གཅོད་བ་རིག་སྒྲིབ་ཏུ། །

यहाँ वर्षा में बसूंगा, यहाँ हेमन्त और ग्रीष्म में ( बसूंगा )—मूढ़ इस प्रकार सोचता है, ( और ) अन्तराय (=विघ्न ) को नहीं बूझता ।

“Here will I live in the ( monsoon ) rains, here in autumn and summer.” Thus the fool muses, thinking not of the obstacle ( of death ).

P.7 ( I, 37 )

P 151 V 286

དགུན་ལ་དང་ནི་དབྱིང་ལ་དང། །

དབྱར་ལ་འདྲི་དག་བྱེད་ཞེས། །

བྱིས་བ་ནས་བར་སེམས་བྱེད་བས། །

བར་ཆད་སྤོང་བར་ས་གྲུང་དྲི། །

तं पुत्रपशुसम्मतं, व्यासक्तमनसं नरं ।  
सुप्तं ग्रामं महोद्यो व, मच्चु आदाय गच्छति ॥१५॥

जैतवन

किसा गोतमी ( थेरी )

तं पुत्र-पशु-सम्मतं व्यासक्तमनसं नरम् ।  
सुप्तं ग्रामं महोद्यो इव मृत्युरादाय गच्छति ॥

ཡོངས་སུ་ཆགས་པའི་ཡིད་ལྷན་སྟེ།  
བྱ་དང་ཕྱུགས་ནས་སྤྲོད་ཅིག་དུ། །  
ཡུ་འོད་ཆེན་པོས་གཉིད་ཡོག་པའི།  
གྲོང་པའི་ན་འཆི་བས་འཁྲུང་དེ་འགྲོ། ॥

सोये गाँव को जैसे बड़ी बाढ़ ( बहा ले जाये ), वैसे ही पुत्र और पशु में  
लिप्त आसक्त ( -चित्त ) पुरुष को मौत ले जाती है ।

As a great flood carries off a sleeping village, death  
carries off the man whose mind is set on children and cattle.

P 7 ( I, 38 )

P 151, V 287

བྱ་དང་ཞོར་ཕྱུགས་འཁྲུང་བ་ལ། །  
སྟེ་ཡི་ཡིད་ནི་རྣམ་ཆགས་པ། །  
འཆི་བདག་གིས་ནི་གྲོང་ས་ནས་འགྲོ།  
ཉལ་གྲོང་ཆུ་བོས་བདས་པ་པའི་ན། །

न सन्ति पुत्रा ताणाय, न पिता ना पि बन्धवा ।

अन्तकेनाधिपन्नस्स, नत्थि जातीसु ताणता ॥१६॥

जितवत्त

पटाचार ( शेरी )

न सन्ति पुत्रास्त्राणाय न पिता नाऽपि बान्धवाः ।

अन्तकेनाऽधिपन्नस्य नाऽस्ति जातिषु त्राणता ॥

सु'असि'सु'व'प'स'अ'र'ने । 1

स'असि'स'अ'र'प'र'ने'सु'अ'सि'स' । 1

अ'र'स'अ'र'प'र'ने'सु'अ'सि'स' । 1

स'अ'स'अ'र'प'र'ने'सु'अ'सि'स' । 1

पुत्र रक्षा नहीं कर सकते, न पिता, न बन्धुलोग ही । जब मृत्यु पकड़ती है तो जातिवाले रक्षक नहीं हो सकते ।

Sons provide no protection, nor does father nor relations. For him who is overcome by death there is no protection in kinsmen.

P 7 ( I, 39 )

P 152 V 288

अ'र'स'अ'र'प'र'ने'सु'अ'सि'स' । 1

स'अ'स'अ'र'प'र'ने'सु'अ'सि'स' । 1

स'अ'स'अ'र'प'र'ने'सु'अ'सि'स' । 1

स'अ'स'अ'र'प'र'ने'सु'अ'सि'स' । 1



एतमर्थवशं ज्ञात्वा, पण्डितो शीलसंवृतः ।  
निर्वाणगमनं मार्गं, क्षिप्रमेव विशोधये ॥१७॥

एतमर्थवशं ज्ञात्वा पण्डितः शीलसंवृतः ।  
निर्वाणगमनं मार्गं क्षिप्रमेव विशोधयेत् ॥

देवः श्रुत्वा दण्डं नरेण शेषं पुनः कथा ।  
तदा श्रुत्वा शेषं दण्डं नरेण कथा श्रुत्वा ।  
श्रुत्वा दण्डं नरेण शेषं दण्डं नरेण कथा ।  
श्रुत्वा दण्डं नरेण शेषं दण्डं नरेण कथा ।

दण्डं श्रुत्वा शेषं दण्डं नरेण

शेषं दण्डं नरेण कथा ।

इस बात को जानकर पण्डित ( नर ) शीलवान् हो, निर्वाण की ओर  
ले जानेवाले मार्ग को शीघ्र ही साफ करे ।

Understanding this fact, let the wise man, restrained by  
morality, quickly clear the way that leads to freedom from  
suffering ( Nirvana ).

## २१—अकिण्णकवग्गो

मत्तासुखपरिच्चागा, पस्से चे विपुलं सुखं ।  
चजे मत्तासुखं धीरो, सम्पस्सं विपुलं सुखं ॥१॥

राजगृह ( वेणुवन )

गङ्गावरोहण

मात्रासुखपरित्यागात् पश्येच्चेत् विपुलं सुखं ।  
त्यजे नमात्रासुखं धीरः संपश्यन् विपुलं सुखम् ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

सदेव भवति विपुलं सुखं ॥

सुखं सदेव भवति विपुलं सुखं ॥

सदेव भवति विपुलं सुखं ॥

सुखं सदेव भवति विपुलं सुखं ॥

थोड़े से सुख के परित्याग से यदि बुद्धिमान विपुल सुख ( का लाभ )  
देखे, तो विपुल सुख का ख्याल करके थोड़े से सुख को छोड़ दे ।

If, by renouncing some slight happiness, one beholds a  
larger one, the wise man will renounce the smaller ( happiness )  
in consideration of the greater happiness.

P 117 ( XXX, 31 )

P 153 V 290

सदेव भवति विपुलं सुखं ॥

सुखं सदेव भवति विपुलं सुखं ॥

सदेव भवति विपुलं सुखं ॥

सुखं सदेव भवति विपुलं सुखं ॥

परदुःखोपादानेन, अत्तनो सुखमिच्छति ।  
वेरसंसर्गसंसृष्टो, वेरा सो न परिमुच्चति ॥२॥

जैतवनः

कोई पुरुष

परदुःखोपादानेन य आत्मनः सुखमिच्छति ।  
वेरसंसर्गसंसृष्टो वैरात् स न प्रमुच्यते ॥

ཡུལ་བྱེད་ཆ་པ་ཏུ་ཤོ། །

གཞན་ལ་སྐྱུག་བསྐྱུལ་བསྐྱེད་བྱས་ནས། །  
རང་ཉིད་བདེ་བར་འདོད་པ་དེ། །  
དགྲ་ཡི་ཚྲིགས་ནི་འབྱིན་པ་སྟེ། །  
དེ་ནི་དགྲ་ལས་ཐར་མི་འགྱུར། །

दूसरें को दुःख देकर जो अपने लिए सुख चाहता है, वैर के संसर्ग में पड़कर वह वैर से नहीं छूटता ।

By inflicting pain on others, he who wishes his own happiness creates enemies for himself. He does not become free from enemies.

P 113 ( XXX, 2 )

P 153 V291

གཞན་ལ་སྐྱུག་བསྐྱུལ་བསྐྱེད་པ་ཡིས། །  
མང་ཞིག་བདག་གི་བདེ་འདོད་པ། །  
དགྲ་དང་མི་འབྲུལ་འབྲེགས་པ་དང་། །  
དེ་ནི་སྐྱུག་བསྐྱུལ་ལས་མི་འགྱུར། །

यं हि किञ्चं अपविद्धं, अकिञ्चं पन कयिरति ।  
उन्नतानं पमत्तानं, तेषां वड्डन्ति आसवा ॥३॥

भद्रियनगर ( जातियावन )

भद्रिय ( भिक्षु )

यद्धि कृत्यं तद् अपविद्धं, अकृत्यं पुनः कुर्युः ।

उन्नतानां प्रमत्तानां तेषां वर्द्धन्ते आसवा ॥

व३०० ख० ग० ५०० ५०० । ।

ग० ग० ग० ग० ग० ग० ग० ग० । ।

ग० ग० ग० ग० ग० ग० ग० ग० । ।

ग० ग० ग० ग० ग० ग० ग० ग० । ।

ग० ग० ग० ग० ग० ग० ग० ग० । ।

जो कर्त्तव्य है, उसे ( तो वह ) छोड़ता है, जो अकर्त्तव्य है उसे करता है,  
ऐसे बड़े मलवाले प्रमादियों के आसव (= चित्तमल ) बढ़ते हैं ।

Giving up whatever should be done and encouraging what  
should not be done, thus do unrestrained and heedless people  
increase their taints.

1 ग० ग० ग० ग० ग० ग० ग० ग० । ।

येसं च सुसमारब्धा, निच्चं कायगता सति ।  
 अकिच्चं ते न सेवन्ति, किच्चे, सातच्चकारिनो ।  
 सतानं सम्प्रजानानं, अत्थं गच्छन्ति आसवा ॥४॥

येषाञ्च सुसमारब्धा तित्थं कायगता स्मृतिः ।  
 अकृत्यं ते न सेवन्ते कृत्ये सातत्यकारिणः ।  
 स्मरतां सम्प्रजानानां अस्तं गच्छन्त्यास्त्रवाः ॥

गमं विमं नमं नुं नमं नमं नमं । ।  
 सुसं नमं नमं नमं नमं नमं । ।  
 नमं नमं नमं नमं नमं नमं । ।  
 नमं नमं नमं नमं नमं नमं । ।  
 नमं नमं नमं नमं नमं नमं । ।  
 नमं नमं नमं नमं नमं नमं । ।

जिन्हें काया में ( क्षणभंगुरता, मलिनता आदि दोष सम्बन्धी ) स्मृति तैयार रहती है, वह अकर्तव्य को नहीं करते, और कर्तव्य के निरन्तर करनेवाले होते हैं। जो स्मृति, और सम्प्रजन्य (=सचेतपन) को रखनेवाले होते हैं, उनके आस्रव अस्त हो जाते हैं।

They who always earnestly practise the "awareness of body" ( Vipashana meditation ) and who, not relying on what should not be done, always do what should be done, the taints of those mindful and reflective ones come to an end.

मातरं पितरं हन्त्वा, राजानो द्वे च खत्तिये ।  
रष्ट्रं सानुचरं हन्त्वा, अनीघो याति ब्राह्मणो ॥५॥

जेतवन

लकुण्ठक भद्रिय ( थेर )

माता (= वृष्णा ), पिता (= अहंकार )

मातरं पितरं हत्वा राजानौ द्वौ च क्षत्रियौ ।

राष्ट्रं सानुचरं हत्वाऽनघो याति ब्राह्मणः ॥

ཀླུ་པ་ཅེན་ཚལ་དུ་ཡག་ཤུག་པ་ལོ།།

མ་དང་པ་ནི་བསད་བྱས་ཤིང་། ।

ཀླུ་པ་པོ་ཀླུ་པ་རིགས་གཉིས་པ་དང་། ।

ལྷུ་ཡ་འཁོར་འབངས་བཅས་བསད་བྱས་ན། ।

འ་ཉེས་མེད་བྲམ་ཟེ་ཉིད་དུ་འགྱུར། ।

माता (= वृष्णा), पिता (= अहंकार), दो क्षत्रिय राजाओं [= (१) आत्मा, ब्रह्म प्रकृति आदि की नित्यता का सिद्धान्त, (२) मरणान्त जीवन मानना या जड़वाद ], अनुचर (= राग ) सहित राष्ट्र (= रूप, विज्ञान आदि संसार के उपादान पदार्थ ) को मार कर ब्राह्मण (= ज्ञानी ) निष्पाप होता है ।

Having slain mother ( desire ), father ( anger ), two warrior kings ( the extreme views of eternalism and nullity ), and having destroyed a country ( all sense objects ) together with its revenue officer ( attachment ) the Brahman becomes free of faults.

( Note : In this book the word "Bahman" always denotes the following three qualities; 1. Pure, without any sin or obscuration, 2. Possessed of wisdom, 3. Being a yogi of the tenth Bodhisattva Bhumi ).

མ་དང་པ་ནི་བསད་བྱས་ཤིང་། ।

ཀླུ་པ་པོ་གཙང་སྒྲུ་ཅན་གཉིས་དང་། ।

ལྷུ་ཡ་འཁོར་འཁོར་དང་བཅས་བཅོས་པ།།

ཉིག་མེད་གང་ཡིན་བྲམ་ཟེ་ཡིན། ।

- 1 ཉེས་མེད་ཤེས་རབ་ཅན་དུ་འགྱུར། །བྲམ་ཟེ་བྱ་བ་ནི། སྐབས་འདིར་  
དག་པ་དང་། ཤེས་རབ་ཅན་དང་ས་བཅུ་བའི་ནལ་འབྱོར་ཞེས་སྒྲ་  
ཤེས་དགོས།

मातरं पितरं हत्वा, राजानो द्वे च सोत्थिये ।

वेयम्बपञ्चमं हत्वा, अतीघो याति ब्राह्मणो ॥६॥

मातरं पितरं हत्वा राजानो द्वौ च श्रोत्रियो ।

व्याघ्रपञ्चमं हत्वाऽनघो याति ब्राह्मणः ॥

མ་དང་པ་ནི་བསད་བྱ་ཞིང་། ।

རྒྱལ་པོ་གྲོས་པ་ཅན་གཉིས་དང་། ।

སྐྱལ་ནི་ཕྱ་པོ་བསད་བྱས་ན། ।

ཉེས་མེད་བྱས་ཟེ་ཉིད་དུ་འགྱུར། ।<sup>1</sup>

माता, पिता, दो श्रोत्रिय राजाओं [= (१) नित्यतावाद, (२) जड़वाद ] और पाँचवें व्याघ्र (= पाँच ज्ञान के आवरणों) को मारकर, ब्राह्मण निष्पाप हो जाता है ।

Having killed mother ( desire ) and father ( anger ) and two holy kings ( ego and jealousy ), and destroying the tiger, the fifth one ( ignorance ), the Brahman becomes free of faults.

P 152 ( XXXII. 73 )

P 155 V 295

མ་དང་མ་ནི་བསད་བྱས་ཤིང་། ।

རྒྱལ་པོ་གཅང་སྐྱ་ཅན་གཉིས་དང་། ।

མི་བཟད་པ་ཡི་སྐྱལ་བསད་པ། ।

སྐྱལ་མེད་གང་ཡིན་བྱས་ཟེ་ཡིན། ।

1 ཚོག་འདི་དགག་ཏེ་འཆད་པ་ན་མདོ་སྤེ་ལང་ཀར་གཤེར་བ་ལས།

तृष्णा हि माता इत्युक्ता अविद्या च तथा पिता ।

विषयावबोधाद्विज्ञानं बुद्ध इत्युपदिश्यते ॥

སྤོང་པ་མ་ཞེས་བརྗོད་པ་སྤྱི། । རི་བཞིན་མ་རིག་པ་ནི་པ། རྒྱལ་

ནམས་ཤེས་སྤྱིར་ནམ་ཤེས་ནི། །སངས་རྒྱས་ཞེས་བྱས་ཉི་བར་བརྟན། མེགས་

གསུངས་སོ། ॥

सुप्पबुद्धं पबुज्जन्ति, सदा गोतमसावका ।  
 येसं दिवा च रत्तो च, निच्चं बुद्धगता सति ॥७॥

राजगृह ( वेणुवन )

( दाहसाकटिकपुत्त )

सुप्रबुद्धं प्रबुध्यन्ते सदा गोतमश्रावकाः ।  
 येषां दिवा च रात्रौ च नित्यं बुद्धगता स्मृतिः ॥

येनं सदे कयं दुते । ।

गोतुं न सदे उरु वेसं कससा । ।

वेसासं वरं वरं सदे द्वागं दु सदा । ।

दे कससा उरु ददं सदे कं सदे । ।

सदसं सुसं सुसं दु ददं वरं वेदे । ।

जिनको दिन-रात बुद्ध-विषयक स्मृति बनी रहती है, वह गोतम बुद्ध के शिष्य खूब जागरूक रहते हैं ।

Well awake, the disciples of Gotama are ever vigilant.  
 By day and by night they constantly remember the Buddha.

P 50 ( XV, 12 )

P 156 V 296

गदं वेसा उरु ददं सदे कं कससा सु । ।

सदसं सुसं वेसा सु ददं वेदे व । ।

गो न स दे उरु वेसा दे । ।

वेसासं वरं सदे वसा सदे वरं वेदे । ।



सुप्पबुद्धं पबुज्झन्ति, सदा गोतमसावका ।  
 येसं दिवा च रत्तो च, निच्चं धम्मगता सति ॥५॥

सुप्रबुद्धं प्रबुध्यन्ते सदा गोतमश्रावकाः ।  
 येषां दिवा च रात्रौ च नित्यं धर्मगता स्मृतिः ॥

सोत्तुं ण मदीं उव्वं षोसं कम्मसा ।  
 येणसं वरं वरं सदां दण्णं सुं सदा ।  
 दे कम्मसां उव्वं ददं मज्झं मीं पदं ।  
 कम्मसां पदं सुं सुव्वं वरं पदं पदं ।

जिनकी दिन-रात धर्म-विषयक स्मृति बनी रहती है, वह गौतम ( बुद्ध ) के शिष्य खूब जागरुक रहते हैं ।

Well awake, the disciples of Gotama are ever vigilant.  
 By day and by night they constantly remember the Dharma.

P 50 ( XV, 13 )

P 156 V 297

सदां विण्णं उव्वं ददं मज्झं कम्मसां सु ।  
 कम्मसां कम्मसां कम्मसां सुं सुं सुं सुं ।  
 सोत्तुं ण मदीं उव्वं षोसं दे ।  
 येणसं वरं सदां वरं सदां वरं पदं पदं ।

सुप्पबुद्धं पबुज्जन्ति, सदा गौतमसावका ।  
येसं दिवा च रत्तो च, निच्चं सङ्खगता सति ॥६॥

सुप्रबुद्धं प्रबुध्यन्ते सदा गौतमश्रावकाः ।  
येषां दिवा च रात्रौ च नित्यं संघगता स्मृतिः ॥

सोत्तुं णमिदं भूयस्संस्स । ।  
येणसं वरं वरं सणं हणं हणं । ।  
देवस्स भूयस्सं वरं वरं वरं । ।  
हणं हणं वरं हणं वरं वरं । ।

जिनको दिन-रात संघ-विषयक स्मृति बनी रहती है, वे गौतम ( बुद्ध ) के शिष्य खूब जागरूक रहते हैं ।

Well awake, the disciples of Gotama are ever vigilant.  
By day and by night they constantly remember the Sangha.

P 51 ( XV, 14 )

P 157, V 298

णमं वरं भूयस्सं वरं वरं वरं । ।  
हणं हणं वरं हणं वरं वरं । ।  
सोत्तुं णमिदं भूयस्सं । ।  
येणसं वरं वरं वरं वरं वरं वरं । ।

सुप्रबुद्धं प्रबुध्यन्ते सदा गौतमश्रावकाः ।  
येषां दिवा च रात्रौ च नित्यं कायगता स्मृतिः ॥

[illegible]

जिनको रात-दिन काय विषयक स्मृति बनी रहती है, वे गौतम बुद्ध के शिष्य सदा जागरूक रहते हैं।

Well awake, the disciples of Gotama are ever vigilant. By day and by night they constantly remember the Body (practice Vipassana meditation of constant heedfulness of the body's movement).

P 51 (XV, 18)

P 157 V 299

གང་ཞིག་ཉིན་དང་མཚན་ལྔམས་སྟེ།  
 ཉག་དུ་ལྔམ་ཉིགས་ལྔ་ཁྱེད་ལ།  
 གོ་དེ་མ་ཡི་ཉན་ཐོས་དེ།  
 ལྔགས་ལྔ་སྟ་ལྔས་སྟ་ལྔ་ལྔུར།

सुप्पबुद्धं पबुज्जन्ति, सदा गीतमसावका ।  
येसं दिवा च रत्तो च, अहिंसाय रतो मनो ॥११॥

सुप्रबुद्धं प्रबुध्यन्ते सदा गीतमश्रावकाः ।  
येषां दिवा च रात्रौ च अहिंसायां रतं मनः ॥

चोत्तुं सत्तं भूयस्संस्स । ।  
अस्सं सत्तं सत्तं सत्तं सत्तं सत्तं । ।  
देवस्सं भूयस्सं सत्तं सत्तं सत्तं । ।  
अस्सं सत्तं सत्तं सत्तं सत्तं सत्तं । ।

जिनका मन रात-दिन अहिंसा में रत रहता है, वह गीतम ( बुद्ध ) के शिष्य सदा जागरूक रहते हैं ।

Well awake, the disciples of Gotama are ever vigilant.  
By day and by night their minds delight in harmlessness.

P 52 ( XX, 21 )

P 158 V 309

चत्तं चत्तं भूयस्संस्स । ।  
चत्तं चत्तं सत्तं सत्तं सत्तं सत्तं । ।  
चत्तं चत्तं भूयस्संस्स । ।  
अस्सं सत्तं सत्तं सत्तं सत्तं सत्तं । ।

सुप्पबुद्धं पवुज्जन्ति, सदा गोतमसावका ।  
 येसं दिवा च रत्तो च, भावनाय रतो मनो ॥१२॥

सुप्रबुद्धं प्रबुध्यन्ते सदा गौतमश्रावकाः ।  
 येषां दिवा च रात्रौ च नित्यं भावनायां रतं मनः ॥

॥ ममं पौण्ड्रिणं ॥

मौदुःसंदिग्धं पौण्ड्रिणं ॥  
 मेषां ममं ममं ममं ममं ॥  
 मेषां ममं ममं ममं ममं ॥  
 मेषां ममं ममं ममं ममं ॥

जिनका मन रात-दिन भावना (= चिन्ता ) में रत रहता है वे गौतम के शिष्य खूब जागरुक होते हैं ।

Well awake, the disciples of Gotama are ever vigilant.  
 By day and by night their minds delight in meditation.

P 52 ( XV, 22 )

P 158 V 301

ममं पौण्ड्रिणं ममं ममं ममं ॥  
 मेषां ममं ममं ममं ममं ॥  
 मेषां ममं ममं ममं ममं ॥  
 मेषां ममं ममं ममं ममं ॥

दुष्पण्डजं दुरभिरमं, दुरावासा घरा दुखा ।  
 दुःखोऽसमानसंवासो, दुःखानुपतितद्वगू ।  
 तस्मा न चद्वगू सिया, न च दुःखानुपतितो सिया ॥१३॥

वैशाली ( महावन )

वज्जिपुत्तक ( भिक्षु )

दुष्प्रव्रज्यां दुरभिरामं दुरावासं गृहं दुःखम् ।  
 दुःखोऽसमानसंवासो दुःखानुपतितोऽध्वगः ।  
 तस्मान्न चाऽध्वगः स्यान्न च दुःखानुपतितः स्यात् ॥

अस्स व उक्खुत्तं । ।

सव वृत्तं दग्गं वैत्तं मत्तं वरं दग्गं व दग्गं । ।  
 वत्तं मत्तं दग्गं वैत्तं मत्तं वरं दग्गं व दग्गं । ।  
 वत्तं मत्तं दग्गं वैत्तं मत्तं वरं दग्गं व दग्गं । ।  
 वत्तं मत्तं दग्गं वैत्तं मत्तं वरं दग्गं व दग्गं । ।  
 वत्तं मत्तं दग्गं वैत्तं मत्तं वरं दग्गं व दग्गं । ।  
 वत्तं मत्तं दग्गं वैत्तं मत्तं वरं दग्गं व दग्गं । ।

कष्टपूर्णं प्रव्रज्या (=संन्यास) में रत होना दुष्कर है, न रहने योग्य घर दुःखद है, असमान के साथ बसना दुःखद है, मार्ग का बटोही होना दुःखद है, इसलिए मार्ग का बटोही न बने, न दुःख में पतित होवे ।

Difficult is the renunciation for ordination (of a Tirthika, non-Buddhist), difficult is to delight therein. Difficult is it to live with unequals. The wandering life is also painful. Therefore do not be a wanderer, do not be a pursuer of pain.

सद्धो सीलेन सम्पन्नो, यसोभोगसमप्पितो ।

यं यं पदेसं भजति, तत्थ तत्थेव पूजितो ॥१४॥

जेतवन

चित्त ( गृहपति )

श्रद्धः शीलेन सम्पन्नो यशोभोगसमर्पितः ।

यं यं प्रदेशं भजते तत्र तत्रैव पूजितः॥

ལྷ་མོ་ལྷ་མོ་ལྷ་མོ་ ། །

དད་པ་ཚུལ་བྱིས་ས་ལུ་ཆོག་ས་ཤིང་།

གཤམ་དང་ཡོངས་སྤྱོད་ལྟ་བུ་ཡིན་པ་རྒྱུ་ལ།

ཡུལ་ནི་གང་དང་གང་གནས་བ།

ནི་དང་དང་ནི་མཆོད་པར་བྱེད།

श्रद्धावान्, शीलवान् यश और भोग से युक्त (पुरुष) जिस जिस स्थान में जाता है, वहीं पूजित होता है।

Those who are possessed of faith and morality, wealth and renown, are respected wherever they may stay.

दूरे सन्तो प्रकासेन्ति, हिमवन्तो व पब्बतो ।  
असन्तेत्य न दिस्सन्ति, रत्तिं खित्ता यथा सरा ॥१५॥

जैतवन

( चुल्ल ) सुमद्दा

दूरे सन्तः प्रकाशन्ते हिमवन्त इव पर्वताः ।  
असन्तोऽत्र न दृश्यन्ते रात्रिक्षिप्ता यथा शराः ॥

दसं वं गदसं उक्कं रै वल्लेक्कं तु ।      ।  
सुत्तं कं रं वं तु गदसं वं रं ।      ।  
रै वल्लेक्कं म्मं म्मं रं रं वल्लेक्कं ।      ।  
दसं वं म्मं कं रं रं रं रं म्मं म्मं रं ।      ।

सन्त ( जन ) दूर होने पर भी हिमालय पर्वत ( की ) धवल चोटियों की भाँति प्रकाशते हैं, और असन्त यहीं ( पास में भी ) होने पर, रात में फँके बाण की भाँति नहीं दिखलाई देते ।

The good shine even from a far like the Himalaya mountain, but the wicked are though near, not seen, like an arrow thrown at night.

P 107 ( XXIX, 19 )

P 160 V 304

दसं वं रै वल्लेक्कं म्मं म्मं रं रं वल्लेक्कं ।      ।  
गदसं उक्कं सुत्तं कं रं वं रं वल्लेक्कं ।      ।  
रं वं रं रं रं रं रं रं रं रं रं रं ।      ।  
सुत्तं म्मं म्मं रं रं रं रं रं रं रं रं रं रं ।      ।



एकासनं एकसेय्यं, एको चरमतन्द्रितो ।

एको दमयमत्तानं, वनन्ते रमितो सिया ॥१६॥

व्रतवस

अकेले विहरनेवाले ( धेर )

एकासन एकशय्य एकचरन्नतन्द्रितः ।

एको दमयन्नात्मानं वनान्ते रतः स्यात् ॥

एकैवाऽसुप्तः एकैवाऽसौम्यः एकैवाऽसुखः ।

एकैवाऽसुखः सुखेनैवाऽसौम्यः ।

एकैवाऽसुखः सुखेनैवाऽसौम्यः ।

एकैवाऽसुखः सुखेनैवाऽसौम्यः ।

एकैवाऽसुखः सुखेनैवाऽसौम्यः ।

एकैवाऽसुखः सुखेनैवाऽसौम्यः ।

एक ही आसन रखनेवाला, एक शय्या रखनेवाला, अकेला विचरनेवाला,  
(वन), आलस्य रहित हो, अपने को दमन कर अकेला ही वनान्त में रमण करे ।

He who sits alone, he who rests alone, he who walks alone, he who is strenuous, he who subdues himself alone, should seek delight in the extinction of desires ( literally, the end of the forest ).

२२—निरयवग्गो

अभूतवादी निरयं उपेति,  
यो वा पि क्त्वा न करोमि चाह ।  
उभो पि ते पेच्च समा भवन्ति,  
निहोनकम्मा मनुजा परत्थ ॥१॥

खुन्दरी ( परिव्राजिका )

अभूतवादी निरयमुपेति, योवाऽपि कृत्वा 'न करोमी' ति चाह ।  
उभावपि तो प्रेत्य समा भवतो निहीतकर्माणौ मनुजौः परत्र ॥

ཕྱི་ལོ་ཕྱེད་ཅེས་ཀྱི་མཛེས་མ་ལ་གསུངས་པ།

མི་བདེན་སྒྲོག་པ་རྒྱུ་ཡང་ལང་འགྲོ་བ་ཏུ།

གད་གེས་བྱས་ནས་མ་བྱས་སྒྲིབ་པ་ཡང་།

གཞིས་པོ་འདི་དག་གི་ན་མཉམ་པར་འགྱུར། །

གཞན་དུ་དམན་པའི་ལས་བྱེད་མི་དག་ཡིན། །

असत्यवादी नरक में जाते हैं, और वह भी जो कि करके 'नहीं किया'—  
कहते हैं। दोनों ही प्रकार के नीचकर्म करनेवाले मनुष्य सरकर समान होते हैं।

The liar goes to hell, and also he who, having done a thing says—"I did not do it." Both on departing become equal as men of base actions in the other world.

P 161 V 306

གང་དག་ལྱུང་བ་ཞིན་མ་ལྱུང་ཟེང་བ་ཏེས།

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

མེ་རེ་གཉི་ག་མུ་པ་པ་ལོ་མ་ཏུ།

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

कासावकण्ठा बहवो, पापधम्मा असञ्जता ।  
पापा पापेहि कम्मेहि, निरयं ते उपपज्जरे ॥२॥

राजगृह ( वेणुवन )

( पाप फलानुभवी प्राणी )

काषायकंठा बहवः पापधर्मा असंयताः ।  
पापाः पापैः कर्म भिर्निरयं त उत्पद्यन्ते ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥  
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

कण्ठ में काषाय ( = वस्त्र ) डाले कितने ही पापी असंयमी हैं, जो पापी पाप के कर्मों से नरक में उत्पन्न होते हैं ।

Many of those who wear the yellow robe are ill-natured and uncontrolled and these sinners, on account of their bad deeds will be born in hell.

सेय्यो अयोगुळो भुत्तो, तत्तो अग्निशिखूपमो ।  
यच्चे भुञ्जेय्य दुस्सीलो, रट्टपिण्डमसञ्जतो ॥३॥

वैशाली

( वग्गुमुदातीरवासी भिक्षु )

श्रेयान् अयोगोलो भुक्तस्तप्तोऽग्निशिखोपमः ।  
यच्चेद् भुञ्जीत दुःशीलो राष्ट्रपिण्डं असंयतः ॥

अदसं व उरुं ॥ ।

ऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व ॥ ।

अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व ॥ ।

ऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व ॥ ।

अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व ॥ ।

असंयमी दुराचारो हो राष्ट्र का पिंड [=देश का अन्न] खाने से  
अग्नि-शिखा के समान तप्त लोहे का गोला खाना उत्तम है ।

It is better for an immoral, uncontrolled person to  
swallow a ball of red-hot iron than to eat alms gathered from  
the country.

P 162 V 308

अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व ॥ ।

अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व ॥ ।

अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व ॥ ।

अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व अऊँ व ॥ ।

चत्वारि ठानानि नरो प्रमत्तो,  
 आपज्जति परदारूपसेवी ।  
 अपुञ्जलाभं न निकामसेय्यं,  
 निन्दं ततीयं निरयं चतुत्थं ॥४॥

जेटवन

खेम ( श्रेष्ठीपुत्र )

चत्वारि स्थानानि नरः प्रमत्त आपद्यते परदारोपसेवी ।  
 अपुञ्जलाभं न निकामसेय्यां  
 निन्दां तृतीयां निरयं चतुर्थम् ॥

शुभं भवेत्कथं नृपे । ।

मल्लकं भुंजिष्ये मन्त्रं मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं । ।  
 मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं । ।  
 मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं । ।  
 मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं । ।

प्रमादी परस्त्रीगामी मनुष्य की चार गतियाँ हैं— अपुण्य का लाभ,  
 सुख से न निन्दा, तीसरा निन्दा और चौथा नरक ।

Four misfortunes befall a heedless man who commits  
 adultery-acquisition of demerit, disturbed sleep, blame and hell.

P 16 ( IV, 13 )

P 162 V 309

मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं । ।  
 मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं । ।  
 मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं । ।  
 मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं मन्त्रं भुंजिष्ये मन्त्रं । ।

अपुञ्जलाभो च गतो च पापिका,  
भीतस्स भीताय रतो च थोकिका ।  
राजा च दण्डं गरुक्कं पण्येति,  
तस्मा नरो परदारं न सेवे ॥५॥

अपुञ्जलाभश्च गतिश्च पापिका, भीतस्य भीताय रतिश्च स्तोक्रिका ।  
राजा च दण्डं गुरुकं प्रणयति, तस्मात् नरो परदारान् न सेवेत् ॥

ससिद्धं कससं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ।  
ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ।  
ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ।  
ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ।

“( अथवा ) अपुण्य लाभ, बुरी गति, भयभीत ( पुरुष ) की, भयभीत ( स्त्री ) से अत्यल्प रति और राजा का भारी दण्ड देना; इसलिए मनुष्य को परस्त्रीगमन न करना चाहिए ।

Acquisition of demerit leads to being a sinner in later lives. Brief is the joy of the frightened man and the woman, and the king imposes heavy punishment, Hence no man should frequent another's wife.

P 16 ( IV, 9 )

P 163 V 310

ससिद्धं कससं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ।  
ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ।  
ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ।  
ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ससिद्धं ।

कुशो यथा दुग्गहितो, हत्थमेवानुकन्तति ।  
सामञ्जं दुप्परामट्ठं, निरयायुपकडुत्ति ॥६॥

जैतवन

( कटुभाषी भिक्षु )

कुशो यथा दुग्ग हीतो हस्तमेवाऽनुकन्तति ।  
श्रामण्यं दुप्परामट्ठं निरयायोपकर्षति ॥

शुभं भवेत्तु ॥

दमेरुं कृत्वा मन्त्रं कृतं कृतं ।  
अथ मन्त्रं कृतं मन्त्रं कृतं ।  
दमेरुं कृतं कृतं कृतं कृतं ।  
दमेरुं कृतं कृतं कृतं कृतं ।

जैसे ठीक से न पकड़ने से कुश हाथ को ही छेदता है, ( इसी प्रकार )  
श्रमणपन (= संन्यास ) ठीक से ग्रहण न करने पर नरक में ले जाता है ।

Just as Kusa grass cuts the hand when wrongly caught.  
even so the saint life when wrongly handled, drags one  
to hell.

P 37 ( X, 4 )

P 163 V 311

दमेरुं कृतं कृतं कृतं कृतं ।  
अथ मन्त्रं कृतं मन्त्रं कृतं ।  
दमेरुं कृतं कृतं कृतं कृतं ।  
दमेरुं कृतं कृतं कृतं कृतं ।

यं किञ्चि सिथिलं कम्मं, सङ्किलिष्टं च यं वतं ।  
सङ्कस्सरं ब्रह्मचरियं, न तं होति महप्फलं ॥७॥

यत् किञ्चित् शिथिलं कर्म संक्लिष्टं च यद् व्रतम् ।  
संकुच्छं ब्रह्मचर्यं न तद् भवति महत्फलम् ॥

ལྷོ་པའི་བྱ་བ་གང་ཡིན་དང་།

ཀུན་ཉིད་བརྒྱལ་བྱུངས་གང་ཡིན་དང་།

འོ་མ་པར་ལྷོ་པ་རལ་བ་དེ།

འབྲས་ལྷ་མོ་པོ་འབྲས་ལྷ་མོ།

जो कर्म शिथिल है, जो व्रत क्लेश (=मल)-युक्त है, और जो ब्रह्मचर्य अशुद्ध है, वह महाफल (-दायक) नहीं होता ।

Any loose act, any corrupt observance, a false Holy Life,  
none of these are of much fruit.

P 37 ( X, 3 )

P 164 V 312

ཞུ་བའི་ལས་ནི་རྩིང་གི།

ཀུན་ནས་ཉན་མེས་དཀར་ཕྱབ་དང་།

ཕྱི་ལོ་ ༡༩༩༩ ལོའི་ ༩ ཁུངས་ ༡༩ རེའི་

རྟོན་ཅིན་འགྲུས་སྒྲུབ་མི་ཡི་རྟོན་།





अकृतं दुष्कृतं श्रेयो, पश्चात् तप्पति दुष्कृतं ।  
कृतं च सुकृतं श्रेयो, यं कृत्वा नानुत्पत्ति ॥६॥

जितवन

( कोई ईर्ष्यालु स्त्री )

अकृतं दुष्कृतं श्रेयः पश्चात् तपति दुष्कृतम् ।  
कृतं च सुकृतं श्रेयो यत् कृत्वा नानुत्पत्ति ॥

दुष्कृत (= पाप ) का न करना श्रेष्ठ है, दुष्कृत करनेवाला पीछे अनुताप करता है; सुकृत का करना श्रेष्ठ है, जिसको करके (मनुष्य) अनुताप नहीं करता ।

कुम'प्रे'क'पु'प्रे'मे'प' । ।

प्रे'प'प'प'प'प'प'प' । ।

प्रे'प'प'प'प'प'प'प' । ।

प्रे'प'प'प'प'प'p'p' । ।

प्रे'प'प'p'p'p'p'p'p' । ।

An evil deed is better left undone, for a misdeed torments One hereafter. A good deed is better done, since one does not suffer later for having done it.

नगरं यथा पचन्तं, गुप्तं सन्तरबाहिरं ।  
 एवं गोपेथ अत्तानं, खणो वो मा उपचमा ।  
 खणातीता हि सोचन्ति, निरयम्हि समप्पिता ॥१०॥

जैतवन

बहुत से मिश्र

नगरं यथा प्रत्यन्तं गुप्तं सान्तर्बाह्यम् ।  
 एवं गोपयेदात्मानं क्षणं वै मा उपातिगाः ।  
 क्षणातीता हि शोचन्ति निरये समर्पिताः ॥

ཡུལ་ཁྱེད་ཚལ་དུ་དགོས་པའོ། །

དཔེར་ན་ཡམ་མཐའི་གྲོང་དག་ནི། །

ཕྱི་ནང་ནང་ནས་བསྐྱེད་ལུས་པ། །

དེ་ལྟར་བདག་ནི་བསྐྱེད་བྱ་སྟེ། །

སྒྲིབ་ཅིག་ཙམ་ཡང་མ་འདྲེན་ཞིག། །

སྒྲིབ་ཅིག་དག་ལ་གཡེལ་བ་རྣམས། །

དཔུལ་བར་ཆུད་དེ་འགྲོད་པར་འགྱུར། །

जैसे सीमान्त का नगर भीतर बाहर से खूब रक्षित होता है, उसी प्रकार अपने को रक्षित रखे, क्षण भर भी न छोड़े, क्षण चूक जाने पर नरक में पड़कर शोक करना पड़ता है ।

Just as a border city is guarded within and without, you should similarly guard yourself. Do not let even a moment pass by ( unused ), for those who are careless with the ( passing ) moments regret it when they are consigned to hell.

P 22 ( V, 17 )

P 165 V 315

དཔེར་ན་དགོན་པའི་གྲོང་ཁྱེད་དག། །

ཕྱི་ནང་སྐྱེད་པར་བྱེད་པ་ལྟར། །

དཔུལ་འགྲོད་ཆུད་ནི་མི་ཚེས་པ། །

དེ་ལྟར་བདག་ནི་བསྐྱེད་པར་བྱ། །

སེམས་ཅན་དཔུལ་བར་སྐྱེ་ན་ཡང་། །

དཔུལ་འགྲོད་ཐལ་བས་འགྲོད་པར་འོང་། །

अलज्जिताये लज्जन्ति, लज्जिताये न लज्जरे ।

मिच्छादिद्विसमादाना, सत्ता गच्छन्ति दुग्गतिं ॥११॥

जेतवन

( जैन साधु )

अलज्जिता ये लज्जन्ते लज्जिता ये न लज्जन्ते ।

मिथ्यादृष्टि समादानाः सत्त्वागच्छन्ति दुर्गतिम् ॥

एतेन सुवचने । ।

एतेन सुवचने । ।

एतेन सुवचने । ।

एतेन सुवचने । ।

एतेन सुवचने । ।

अलज्जा ( के काम ) में जो लज्जा करते हैं और लज्जा ( के काम ) में जो लज्जा नहीं करते, वह झूठी धारणा वाले प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं ।

Beings who are ashamed at what is not shameful, and who are unashamed at the shameful, embrace false views and go to a woeful state ( the three lower realms of rebirth ).

P 53 ( XVI, 4 )

P 166 V 316

एतेन सुवचने । ।

एतेन सुवचने । ।

[ एतेन सुवचने । ।

एतेन सुवचने । ।

एतेन सुवचने । ।

एतेन सुवचने । ।

अभये भयदस्सिनो, भये चाभयदस्सिनो ।  
मिच्छादिद्विसमादाना, सत्ता गच्छन्ति दुग्गतिं ॥ १२ ॥

अभये च भयदर्शिनो भये चाऽभयदर्शिनः ।  
मिथ्यादृष्टिसमादानाः सत्त्वा गच्छन्ति दुर्गतिम् ॥

འཛིགས་པ་མེད་ལ་འཛིགས་པར་བརྟེ། །  
 འཛིགས་པ་འཛིགས་པ་མེད་པར་བརྟེ། །  
 བརྟེ་གྱི་ལྟ་བུར་བསྐྱེད་སྤྱོད། །  
 མེས་པ་ཅན་ལྟམ་མ་ནི་རྣམས་ལོང་འགྲོ། །

भयरहित ( काम ) में जो भय देखते हैं, और भय ( के काम ) में भय को नहीं देखते, वही झूठी धारणा वाले प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं ।

Beings who are afraid at what is not fearful, and who are without fear for what is fearful, embrace false views and go to a woeful state.

P 53 ( XVI, 5 )

P 166 V 317

[ རྩོམ་མིན་ལ་རྩོམ་ཞིང་། །  
 རྩོམ་བ་ལ་རྩོམ་ཅ། ། ]  
 མི་འཛིགས་བ་ལ་འཛིགས་ལྟ་དང་། །  
 འཛིགས་ལ་མི་འཛིགས་ལྟ་བ་ཡི། །  
 ཡོག་བར་ལྟ་བ་ལྟངས་བ་ཡིས། །  
 མེས་ས་ཅན་ངན་འགྱུར་འགྱུར་བར་འགྱུར། །

अवज्जे वज्जमतिनो, वज्जे चावज्जदस्सिनो ।

मिच्छादिद्विसमादाना, सत्ता गच्छन्ति दुर्गतिं ॥१३॥

वेत्तवन्

( तीर्थिक-शिष्य )

अवक्षे वक्षमतयो वक्षे चाऽवक्षदर्शिनः ।

स्थिरादृष्टिसमादानः सत्त्वा गच्छन्ति दुर्यतिम् ॥

ཁ་ན་མ་མཐོ་ཏུ་བར་སེམས།

ཅུང་བ་ཁ་ན་མ་མཐོང་བཟ།

ཡུལ་ཀྱི་ལྷ་མོ་ལ་རབ་ཐུང་སྲ་བའི།

སེམས་ཅན་རྣམས་ཀྱི་འཇ་སྒོ་འགྲོ། །

जो अदोष में दोषबुद्धि रखने वाले हैं, ( और ) दोष में अदोष दृष्टि रखने वाले, वह झूठी धारणा वाले प्राणी दुर्गति को प्राप्त होते हैं ।

Beings who imagine wrong in what is not wrong, and who view as not wrong what is wrong, embrace false views and go to a woeful state.

वज्जं च वज्जतो अत्वा, अवज्जं च अवज्जतो ।  
सम्मादिट्ठिसमादाना, सत्ता गच्छन्ति सुगतिं ॥१४॥

वद्यं ( वज्यम् ) च वद्यतो ज्ञात्वाऽवद्यं चावद्यतः ।  
सम्यग्दृष्टिसमादानाः सत्त्वा गच्छन्ति सुगतिम् ॥

उद्वं वद्वं वै उद्वं वद्वं । ।

वै उद्वं वद्वं वद्वं वद्वं । ।

उद्वं वद्वं वद्वं वद्वं वद्वं । ।

वै उद्वं वद्वं वद्वं वद्वं । ।

उद्वं वद्वं वद्वं वद्वं ।

वै उद्वं वद्वं वद्वं । ।

दोष को दोष जानकर और अदोष को अदोष जानकर, ठीक धारणा वाले प्राणी सुगति को प्राप्त होते हैं ।

Beings who know what is wrong to be wrong, and what is right to be right, embrace right views and go to a happy state.

अहं नागो व सङ्ग्रामे, चापतो पतितं सरं ।  
अतिवाक्यं तितिविखस्सं, दुस्सीलो हि बहुज्जनो ॥१॥

जेतवन

आनन्द ( धेर )

अहं नाग इव संग्रामे चापतः पतितं शरम् ।  
अतिवाक्यं तितिक्षिष्ये, दुःशीला हि बहुजनाः ॥

ཀྱུལ་བྱིན་ཚལ་རུ་ཀྱན་དགའ་བོ་ལ་གསུངས་པ།  
བདག་ནི་སྤྱལ་རུ་གྲང་བོ་ཀེ། །  
གཞུ་ཡིས་འཕང་བའི་མདའ་ལ་བཞིན། །  
ཆོག་རྩལ་རྣམས་ལ་བཟོད་བྱ་ཏེ། །  
སྤྱི་བོ་པལ་ཆར་རྩལ་འན་ཉིད། །

जैसे युद्ध में हाथी धनुष के गिरे शर को सहन करता है वैसे ही मैं  
कटुवाक्यों को सहन करूँगा, ( संसार में तो ) दुःशील आदमी ही अधिक हैं ।

I shall be patient towards abuse even as an elephant in  
the battlefield withstands the arrows shot from a bow. Truly  
most people are illnatured.

P 107 ( XXIX, 21 )

P 168 V 320

གཞུ་ཡིས་མདའ་འཕངས་བསྐྱོན་བ་ཡི། །  
གསུལ་ངོའི་གྲང་ཆོན་ཇི་བཞིན་དུ། །  
རྩལ་འཆལ་སྤྱི་བོ་མང་བོ་ཡིས། །  
སྤྱི་སྐྱོན་སྐྱོས་བ་བཟོད་བར་བྱ། །

1 ལྷ་ནན་ ( ཀྱན་དགའ་བོ ) ནི་ རྩོན་བའི་སྐྱོན་ཡིན་ཞིང་ལོ་ནི་  
བྱིན་པོ་རྩོན་བར་ཡོན་དན་བརྒྱུད་ཐུན་གྱིས་བསྐྱོན་བཀྱར་བྱས་ཤིང་།  
རྩོན་བ་འདས་ཆེས་མདོ་སྤྱི་བོ་མང་བོ་ཡིན་ནོ།



दान्तं नयन्ति समितिं, दान्तं राजाऽभिरुहति ।  
दान्तो सेट्ठो मनुस्सेसु, योऽतिवाक्यं तितिक्षति ॥२॥

दान्तं नयन्ति समितिं दान्तं राजाऽभिरुहति ।  
दान्तः श्रेष्ठो मनुष्येषु योऽतिवाक्यं तितिक्षते ॥

दुव्वं वः क्खेय्यं सुअस्सिदं वः सुअ ॥  
दुव्वं वः सुव्वं वः सुअ वः सुअ ॥  
सुअ वः सुअ वः सुअ वः सुअ वः सुअ ॥  
दुव्वं वः सुअ वः सुअ वः सुअ वः सुअ ॥

दान्त (=शिक्षित) ( हाथी ) को युद्ध में ले जाते हैं तो दान्त पर राजा चढ़ता है, मनुष्य में भी दान्त (=सहनशील) श्रेष्ठ है, जो कि कटुवाक्यों को सहन करता है ।

They lead the trained elephant into the crowd. The king mounts the trained elephant. Best among men are the trained who are patient towards abuse.

P 63 ( XIX, 6 )

P 168 V 321

दुव्वं वः सुअ वः सुअ वः सुअ वः सुअ ॥  
दुव्वं वः सुव्वं वः सुअ वः सुअ ॥  
सुअ वः सुअ वः सुअ वः सुअ वः सुअ ॥  
दुव्वं वः सुअ वः सुअ वः सुअ वः सुअ ॥

वरमस्सतरा दन्ता, आजानीया च सिन्धवा ।  
कुञ्जरा च महानागा, अत्तदन्तो ततो वरं ॥३॥

वरमश्वतरा दान्ता आजानीयाश्च सिन्धवः ।  
कुंजराश्च महानागा आत्मदान्तस्ततो वरम् ॥

दुयं वरं देवुं क्खसं किं सत्तं ॥  
सिक्खं देवुं उच्चं प्लेसं सत्तं ॥  
सुत्तं केवुं सुत्तं प्लेसं सत्तं ॥  
वरं देवुं देवुं वरं देवुं सत्तं ॥

खच्चर, उत्तम खेत के सिन्धी घोड़े, और महानाग हाथी दान्त=(शिक्षित)  
होने पर श्रेष्ठ हैं और अपने को दमन किया ( पुरुष ) उनसे भी श्रेष्ठ है ।

Excellent are trained mules, so are thorough-breds of  
Sindh and the leaders of the elephant herds, but better still is  
one who trains himself,

P 63 ( XIX, 7 )

P 169 V 322

सुत्तं वरं देवुं क्खसं किं सत्तं ॥  
सिक्खं देवुं उच्चं प्लेसं सत्तं ॥  
देवुं देवुं देवुं प्लेसं सत्तं ॥  
देवुं वरं देवुं देवुं वरं सत्तं ॥

न हि एतेहि यानेहि, गच्छेद्य अगर्तं दिशं ।  
यथात्तना सुदन्तेन, दन्तो दन्तेन गच्छति ॥४॥

जेतवन

भूतपूर्व महावत मिद्धु

नहि एतैर्यानिः गच्छेदगतां दिशम् ।  
यथाऽऽस्मना सुदान्तेन दान्तो दान्तेन गच्छति ॥

ब॒र॒ण॒ऽ॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒ऽ॒यि॒स॒ ।

सु॒य॒व॒ऽ॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒ऽ॒यि॒स॒ ।

स॒ऽ॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒ऽ॒यि॒स॒ ।

ब॒र॒ण॒ऽ॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒ऽ॒यि॒स॒ ।

इन ( हाथी, घोड़े आदि ) यानो से, बिना गई दिशा वाले ( निर्वाण की ओर ) नहीं जाया जा सकता, संयमी पुरुष अपने को संयम कर संयत ( इन्द्रियों ) के साथ ( वहाँ ) जाता है ।

For with these animals one cannot go to the untrodden land ( Nirvana ) where goes a disciplined person due to the discipline of self-control.

P. 64 ( XIX, 8 )

P 169 V 323

ब॒र॒ण॒ऽ॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒ऽ॒यि॒स॒ ।

स॒ऽ॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒ऽ॒यि॒स॒ ।

ब॒र॒ण॒ऽ॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒ऽ॒यि॒स॒ ।

स॒ऽ॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒ऽ॒यि॒स॒ ।

1 ब॒र॒ण॒ऽ॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒ऽ॒यि॒स॒ । स॒ऽ॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒रि॒न्॒सु॒य॒व॒ऽ॒यि॒स॒ ।

धनपालो नाम कुञ्जरो,  
कटुकभेदनो दुन्तिवारयो ।  
बद्धो कवळं न भुञ्जति,  
सुमरति नागवनस्स कुञ्जरो ॥५॥

जैतवन

( परिजिण्ण ब्राह्मणपुत्त )

धनपालको नाम कुंजरो कटक प्रभेदनो दुन्तिवार्यः ।  
बद्धः कवलं न भुक्ते, स्मरति नागवनं कुंजरः ॥

कुपुं सुदे कळं सुदे ॥

वेरुं सुदे वेसं सुदे सुदे वेरुं ॥

गदेरुं वेरुं वेसं वेरुं वेरुं वेरुं ॥

वेरुं वेरुं वेसं वेरुं वेरुं वेरुं ॥

वेरुं वेरुं वेसं वेरुं वेरुं वेरुं ॥

सेना को तितर-वितर करने वाला, दुर्घर्ष धनपालक नामक हाथी,  
( आज ) बन्धन में पड़ जाने पर कवल नहीं खाता, और ( अपने ) हाथियों के  
जंगल को स्मरण करता है ।

The elephant called Dhanapalak is uncontrollable at the  
time of rut. When tied up, he eats not a morsel, for he is  
remembering the elephant forest.

वेरुं सुदे वेसं सुदे सुदे वेरुं ॥

वेरुं वेरुं वेसं वेरुं वेरुं वेरुं ॥

वेरुं वेरुं वेसं वेरुं वेरुं वेरुं ॥

वेरुं वेरुं वेसं वेरुं वेरुं वेरुं ॥

मिद्धी यदा होति महग्वसो च,  
निद्रायिता सम्परिवत्तसायी ।  
महावराहो व निवापपुटो,  
पुनःपुनं गर्भमुपेति मन्दो ॥६॥

जितवन

पसेनदी ( कोसलराज )

मृद्धो यदा भवति महाघसश्च निद्रावितः सपरिवर्तसायी ।  
महावराह इव निवापपुष्टः पुनः पुनः गर्भमुपेति मन्दः ॥

गो'स'अर'ग'स'अ'कु'अ'अ' ।

अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ' ।

अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ' ।

अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ' ।

अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ' ।

जो ( पुरुष ) आलसी, बहुत खाने वाला, निद्रालु, करवट बदल-बदल सोने वाला, तथा दाना देकर पले मोटे सुअर की भाँति होता है; वह मन्द बार-बार गर्भ में पड़ता है ।

He who is torpid and gluttonous, always asleep whether sleeping or walking, like a great hog nourished on pig swill, that stupid one is born again and again.

P 106 ( XXIX, 13 )

P 170 V 325

अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ' ।

अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ' ।

अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ' ।

अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ' ।

इदं पुरे चित्तमचारि चारिकं,  
येतिच्छकं यत्थकामं यथासुखं ।  
तदज्जहं निग्गहेस्सामि योनिसो,  
हत्थिप्पभिन्नं विय अङ्कुसग्गहो ॥७॥

जैतवन

( सामणेर )

इदं पुरा चित्तमचरत् चारिकां  
यथेच्छं यथाकामं यथासुखम् ।  
तदद्याहं निग्रहीष्यामि योनिसो  
हस्तिनं प्रभिन्नमिवाङ्कुशग्राहः ॥

सुखं सुदं कं च नु न सो हं च नु च । ॥

सोमस नरे सुखं कं च नु न सो हं च नु च । ॥

नरे नरे सुखं कं च नु न सो हं च नु च । ॥

सुखं सुदं कं च नु न सो हं च नु च । ॥

नरे नरे सुखं कं च नु न सो हं च नु च । ॥

यह ( मेरा ) चित्त पहले यथेच्छा = यथाकाम, जैसे सुख मालूम होता है  
वैसे विवरने वाला था; सो आज महावत जैसे मतवाले हाथी को ( पकड़ता है,  
वैसे ) मैं उसे जड़ से पकड़ूँगा ।

Formerly this mind went wandering as it liked, where it  
wished, as it pleased. Now from today I will fully control it,  
as the rider, holding a goad, controls an elephant which is in a  
state of rut.

P 121 ( XXXI, 5 )

P 171 V 326

सोमस नरे सुखं कं च नु न सो हं च नु च । ॥

नरे नरे सुखं कं च नु न सो हं च नु च । ॥

सुखं सुदं कं च नु न सो हं च नु च । ॥

नरे नरे सुखं कं च नु न सो हं च नु च । ॥

अप्रमादरता होथ, सचित्तमनुरक्खथ ।  
दुग्गा उद्धरथत्तानं, पङ्के सन्नो व कुञ्जरो ॥८॥

जेतवन

कोसलराज का पावेय्यक नामक हाथी

अप्रमादरता भवत स्वचित्तमनुरक्षत ।  
दुर्गादुद्धरताऽऽत्मानं पङ्के सक्त इव कुंजरः ॥

गो.स.८.३३ । ।

सग.प्ये.स.के.द.ग.स.स. । ।

स.स.मी.सो.स.के.हे.स.सु.स.सु. । ।

स.स.स.स.स.के.सु.स.के.स.स. । ।

स.स.स.स.स.के.सु.स.के.स.स. । ।

अप्रमाद ( सावधानता ) में रत होओ, अपने मन ही रक्षा करो, पंक में  
फँसे हाथी की तरह ( राग आदि में अपने को फँसे ) ऊपर निकालो ।

Delight in heedfulness. Guard your mind well. Draw  
yourself out of the evil way as does an elephant who is sunk in  
the mire.

सचे लभेथ निपकं सहायं,  
सद्धिं चरं साधुविहारिधीरं ।  
अभिभूय्य सब्बानि परिस्सयानि,  
चरेय्य तेनत्तमनो सतीमा ॥६॥

परिलेख्यक

बहुत से मिश्र

सचेत् लभेत निपक्वं सहायं  
साद्धं चरन्तं साधुविहारिणं धीरम् ।  
अभिभूय सर्वान् परिश्रयान्  
चरेत् तेनाऽऽत्तमनाः स्मृतिमान् ॥

दे के छेत् तेन लेख्यसंस्तुतं चरं चरं चरं चरं ।  
सवसं चरं चरं चरं चरं चरं चरं चरं ।  
१ अस्मिन् चरं चरं चरं चरं चरं चरं चरं ।  
अस्मिन् चरं चरं चरं चरं चरं चरं चरं ।

यदि परिपक्व ( बुद्धि ) बुद्धिमान साथ में विहरनेवाला (= शिष्य )  
सहचर मित्र मिले तो सभी परिश्रयों (= विघ्नों ) को हटाकर सचेत प्रसन्नचित्त  
हो उसके साथ विहार करे ।

If you find a good companion to live with you, who is of  
similar practice, who behaves well, and is wise, then you should  
live with him joyfully and mindfully, overcoming all difficulties.

P 48 ( XIV, 13 )

P 172 V 328

चरं चरं चरं चरं चरं चरं चरं ।  
चरं चरं चरं चरं चरं चरं चरं ।  
१ अस्मिन् चरं चरं चरं चरं चरं चरं चरं ।  
अस्मिन् चरं चरं चरं चरं चरं चरं चरं ।



नो चे लभेथ निपकं सहाय,  
 सद्धिं चरं साधुविहारिधीरं ।  
 राजा व रट्टं विजितं पहाय,  
 एको चरे मातङ्गरञ्जे व नागो ॥१०॥

न चेत् लभेत निपक्वं सहायं सार्द्धचरन्तं साधुविहारिणं धीरम् ।  
 राजेव राष्ट्रं विजितं प्रहाय, एकश्चेत् मातंगोऽरण्य इव नागः ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।

यदि परिपक्व, बुद्धिवान् साथ में विहरनेवाला सहचर मित्र न मिले, तो  
 राजा की भाँति पराजित राष्ट्र को छोड़ गजराज की तरह अकेला विचरे ।

If you do not get a good companion who is of similar  
 practice to live with you, one who behaves well and is wise,  
 then you should live alone like a king who leaves his conquered  
 kingdom, or as an elephant in the forest.

P 48 ( XIV, 14 )

P 172 V 329

नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।  
 नमो भगवते वासुदेवाय ।

एकस्स चरितं सेव्यो, नत्थि बाले सहायता ।  
 एको चरे न च पापानि कयिरा,  
 अप्पोत्सुक्को मातङ्गरज्जे व नागो ॥११॥

एकस्य चरितं श्रेयो नास्ति बाले सहायता ।  
 एकश्चरेत न च पापानि कुर्याद्  
 अल्पोत्सुको मातङ्गोऽरण्य इव नागः ॥

एतन्नाम सुत्तं सुत्तं वत्तं वत्तं वत्तं ।  
 एतन्नाम सुत्तं सुत्तं वत्तं वत्तं वत्तं ।  
 एतन्नाम सुत्तं सुत्तं वत्तं वत्तं वत्तं ।  
 एतन्नाम सुत्तं सुत्तं वत्तं वत्तं वत्तं ।

अकेला विचरना उत्तम है, किन्तु मूढ़ की मित्रता अच्छी नहीं, मातंगराज हाथी की भाँति अनासक्त हो अकेला विचरे और पाप न करे ।

Better is to live alone. There is no fellowship with the foolish. You should live alone, doing no evil and with few desires, like an elephant in the forest.

P 48 ( XIV, 16 )

P 173 V 330

एतन्नाम सुत्तं सुत्तं वत्तं वत्तं वत्तं ।  
 एतन्नाम सुत्तं सुत्तं वत्तं वत्तं वत्तं ।  
 एतन्नाम सुत्तं सुत्तं वत्तं वत्तं वत्तं ।  
 एतन्नाम सुत्तं सुत्तं वत्तं वत्तं वत्तं ।

अत्थमिह जातमिह सुखा सहाया,  
तुष्टी सुखा या इतरीतरेन ।  
पुञ्जं सुखं जीवितसङ्ख्यमिह,  
सब्बस्स दुक्खस्स सुखं पहानं ॥१२॥

### हिमवतु-प्रदेश

माह

अर्थे जाते सुखाः सहायाः, तुष्टिः सुखायेतरेतरेण ।  
पुण्यं सुखं जीवितसंक्षये  
सर्वस्य दुःखस्य सुखं प्रहाणम् ॥

ཁ་པ་ཅན་ཀྱི་པུད་ལ་ཁ་པ་ཅན་པ།

ཉིང་ཡང་པ་ན་གྲོགས་རྒྱལ་པོ།

ཆོག་གེས་པ་ལ་ཅི་ཡང་བདེ།

མེ་ཟར་པ་ན་བསོད་ནམས་པར།

<sup>1</sup> אֵלֶּיךָ יְיָ אֱלֹהֵינוּ וְלֹא לְאִישׁ אֶחָד מֵאֲנָשֵׁינוּ.

काम पड़ने पर मित्र सुखद ( लगते हैं ), परस्पर सन्तोष हो ( यह भी सुखद ( वस्तु ) है, जीवन के अन्त्य होने पर ( किया हुआ ) पुण्य सुखद ( होता है ), सारे दुःखों का विनाश ( = अर्हत् होना ) ( यह सबसे अधिक ) सुखद है ।

It is a joy to have friends when need arises. It is a joy to have contentment with just whatever there is. It is a joy to have merit when life is at an end. It is a joy to abandon all sorrow.

יְהוָה יִשְׁמַר אֶת צְדָקָתְךָ יְהוָה יִשְׁמַר אֶת צְדָקָתְךָ

सुखा मत्तेय्यता लोके, अथो पेत्तेय्यता सुखा ।

सुखा सामञ्जता लोके, अथो ब्रह्मञ्जता सुखा ॥१३॥

सुखा मात्रीयता लोकेऽथ पित्रीयता सुखा ।

सुखा श्रमणता लोकेऽथ ब्राह्मणता सुखा ॥

<sup>1</sup> ॐ ऋं ऐं कं मं नमः ॐ नमः कं मं नमः ।

<sup>2</sup> ॐ ऋं ऐं कं मं नमः ॐ नमः कं मं नमः ।

ॐ ऋं ऐं कं मं नमः ॐ नमः कं मं नमः ।

<sup>3</sup> ॐ ऋं ऐं कं मं नमः ॐ नमः कं मं नमः ।

लोक में माता की सेवा सुखकर है, और पिता की सेवा ( भी ) सुखकर है, श्रमणभाव (= संन्यास ) लोक में सुखकर है, और ब्राह्मणपत (= निष्पाप होता ) सुखकर है ।

It is a joy in this world to serve one's mother, it is also a joy to serve one's father. Joyful in this world are the practicers of virtue ( renunciation ), joyful also are the sages.

P 116 ( XXX, 22 )

P 174 V 332

ॐ ऋं ऐं कं मं नमः ॐ नमः कं मं नमः ।

ॐ ऋं ऐं कं मं नमः ॐ नमः कं मं नमः ।

ॐ ऋं ऐं कं मं नमः ॐ नमः कं मं नमः ।

ॐ ऋं ऐं कं मं नमः ॐ नमः कं मं नमः ।

1 ॐ ऋं ऐं कं मं नमः ॐ नमः कं मं नमः ।

2 ॐ ऋं ऐं कं मं नमः ॐ नमः कं मं नमः ।

3 ॐ ऋं ऐं कं मं नमः ॐ नमः कं मं नमः ।

सुखं याव जरा शीलं, सुखा सद्धा पतिष्ठिता ।  
सुखो पञ्चाय पटिलाभो, पापानां अकरणं सुखं ॥१॥

सुखं यावद् जरा शीलं सुखा श्रद्धा प्रतिष्ठिता ।  
सुखः प्रज्ञायाः प्रतिलाभः पापानां अकरणं सुखम् ॥

གས་པའི་བར་དུ་ཚུལ་ཁྲིམས་པ་དེ། ।

དད་པ་བདུན་པར་གྱུར་པ་བདེ། ।

ཤེས་རབ་རབ་དུ་ཐོབ་པ་བདེ། ।

ཤིག་པ་ནམས་ནི་མ་བྱས་པ་དེ། ।

ཁྲིམས་པའི་ཤེ་ཚན་དེ།

མེད་ཅེས་གསུམ་པ་དེ།

बुढ़ापे तक आचार का पालन करना सुखकर है, और स्थिर श्रद्धा ( सत्य में विश्वास ) सुखकर है, प्रज्ञा का लाभ सुखकर है, और पापों का न करना सुखकर है ।

Joyful is virtue practiced till old age. Joyful is steadfast faith. Joyful is the acquisition of wisdom. Joyful is abstinence from evil.

P 116 ( XXX, 21 )

P 174 V 353

གས་པར་ཚུལ་ཁྲིམས་ལྷན་པ་བདེ། ।

དད་ལ་རབ་དུ་གནས་པ་བདེ། ।

དོན་ལྷན་ཆོག་ལ་དགའ་པ་བདེ། ।

ཤིག་པ་དག་མི་བྱེད་པ་བདེ། ।

२४—तण्हावगगो

मनुजस्स पमत्तचारिनो,  
तण्हा वड्ढति मालुवा विय ।  
सो प्लवती हुरा हुरं,  
फलमिच्छं व वनस्मि वान्तरो ॥१॥

क्षेत्रफल

कपिलमच्छु

मनुजस्स प्रमत्तचारिणः तृष्णा बद्धते मालुवेव ।  
स प्लवतेऽहरहः फलमिच्छन् इव वने वानरः ॥

ཁྱེད་ཀྱི་ཆེད་དུ་། །

འག་མེད་ལྟོད་པར་མི་རྣམས་ལ།

འཁྲི་ཤིང་བཞིན་དུ་སྤྱོད་པ་འཕྲུལ། །

ནགས་ན་སྒྲུ་འབྲས་འཛམ་བཞིན། །

ཕྱི་མ་རེ་བློང་། རེ་མི་སྤྲུག་ལས།

प्रमत्त होकर आचरण करनेवाले मनुष्य की तृष्णा मालुवी ( लता ) की भाँति बढ़ती है, वन में बानर की भाँति फल की इच्छा करते दिनों दिन वह भटकता रहता है।

The craving of those who live carelessly grows like a creeper. They rush from day to day like a monkey searching for fruit in the forest.

1. ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

यं एसा सहते जम्मी, तण्हा लोके विसत्तिका ।  
सोका तस्स पवडुन्ति, अभिवट्ठं व वीरणं ॥२॥

यं एसा साहयति जन्मिनी तृष्णा लोके विषात्मिका ।  
शोकास्तस्य प्रबद्धन्तेऽभिवर्द्धमाना इव वीरणम् ॥

तुणां नीचदणां त्रिदंशेन च रक्षिणा ।  
रक्षिणां त्रिदंशेन च रक्षिणां च रक्षिणा ।  
रक्षिणां त्रिदंशेन च रक्षिणां च रक्षिणा ।  
रक्षिणां त्रिदंशेन च रक्षिणां च रक्षिणा ।

यह ( बराबर ) जनमते रहनेवालो विषलुपी तृष्णा जिसको पकड़ती है,  
बर्द्धनशील वीरण (= चटाई बनाने का एक तृण) की भाँति उसके शोक बढ़ते हैं ।

Due to craving the chief of poisons one is oppressed by  
the varied afflictions of this world. Due to it one's sorrows  
increase like the abounding birana grass.

P 13 ( II, 10 )

P 175 V 335

राजं विषां रक्षिणां त्रिदंशेन च रक्षिणा ।  
रक्षिणां त्रिदंशेन च रक्षिणां च रक्षिणा ।  
रक्षिणां त्रिदंशेन च रक्षिणां च रक्षिणा ।  
रक्षिणां त्रिदंशेन च रक्षिणां च रक्षिणा ।

यो चेत्तं सहते जन्मिन्, तर्ह्यं लोके दुरच्चयं ।  
शोका तस्मा पपतन्ति, उदबिन्दु व पोक्खरा ॥३॥

यश्चैतां साहयति जन्मिन् तृष्णा लोके दुरत्ययाम् ।  
शोकाः तस्मात् प्रपतन्त्युदबिन्दुरिव पुष्करात् ॥

यत्तं चैतां साहयति जन्मिन् तृष्णा लोके दुरत्ययाम् ।  
शोकाः तस्मात् प्रपतन्त्युदबिन्दुरिव पुष्करात् ॥  
यत्तं चैतां साहयति जन्मिन् तृष्णा लोके दुरत्ययाम् ।  
शोकाः तस्मात् प्रपतन्त्युदबिन्दुरिव पुष्करात् ॥

इस बराबर जनमते रहनेवाली, दुस्तयाज्य तृष्णा को जो लोक में परास्त करता है, उससे शोक (वैसे ही) गिर जाते हैं, जैसे कमल (-पत्र) से जल का बिन्दु ।

Whoever in the world overcomes this unruly vicious craving, sorrows fall away from him, like water-drops from a lotus-leaf.

P 13 ( III, 11 )

P 176 V 336

यत्तं चैतां साहयति जन्मिन् तृष्णा लोके दुरत्ययाम् ।  
शोकाः तस्मात् प्रपतन्त्युदबिन्दुरिव पुष्करात् ॥  
यत्तं चैतां साहयति जन्मिन् तृष्णा लोके दुरत्ययाम् ।  
शोकाः तस्मात् प्रपतन्त्युदबिन्दुरिव पुष्करात् ॥



तं वो वदामि भद्रं वो, यावन्तैत्य समागताः ।  
 तण्हाय मूलं खणथ, उसीरत्थो व बीरणं ।  
 मा वो नलं व सोतो व, मारोभञ्जि पुनप्पुनं ॥४॥

तद् वो वदामि भद्रं वो यावन्त इह समागताः ।  
 तृष्णाया मूलं खनतोशीरार्थो व बीरणम् ॥

वदामि वीर्यं पुनः पुनः पुनः पुनः ॥  
 वदामि पुनः पुनः पुनः पुनः ॥  
 पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः ॥  
 पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः ॥

इसलिए तुम्हें कहता हूँ, जितने यहाँ आये हो, तुम्हारा सबका मंगल हो,  
 जैसे खस के लिए उषीर को खोदते हैं, वैसे ही तुम तृष्णा की जड़ को खोदो ।

I give you this good advice. All of you should dig up  
 the root of craving as one digs up the birana grass to find the  
 usira root. Do not let Mara crush you again and again, like  
 the flood which crushes the reeds on the river bank.

P 13 ( III, 12 )

P 176 V 337

देवैः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः ॥  
 पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः ॥  
 पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः ॥  
 पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः पुनः ॥

यथा पि मूले अनुपद्दवे दृढे,  
छिन्नो पि रुक्खो पुनरेव रुहति ।  
एवं पि तण्हानुसये अनूहते,  
निब्बत्तती दुक्खमिदं पुनप्पुनं ॥५॥

जैतवन

गूथ सूकर-पौतिक

तथाऽपि मूलेऽनुपद्रवे दृढे छिन्नोऽपि वृक्षः पुनरेव रोहति ।  
एवमपि तृष्णाऽनशयेऽनिहते निर्वर्तते दुःखमिदं पुनः पुनः ॥

दधेः कं झुं कं वा वउदं वरं गुदं कं यदं । ॥  
उं वा वउदं वरं वउदं कं झुं कं यदं ॥  
देः वउदं झुं कं वउदं वरं वउदं कं यदं ॥  
वउदं कं झुं कं वउदं वरं वउदं कं यदं ॥

जैसे जड़ के दृढ़ और न कटी होने पर कटा हुआ वृक्ष भी फिर उग आता है, इसी प्रकार तृष्णारूपी अनुशय (=मल) के न नष्ट होने पर, यह दुःख फिर-फिर पैदा होता है ।

As a tree, even though it has been cut down, grows again, if its root is firm and uninjured, even so, if the latent propensities of craving are not destroyed, then this suffering recommences again and again.

P 14 ( III, 18 )

P 177 V 338

दधेः कं झुं कं वा वउदं वरं गुदं कं यदं । ॥  
वउदं कं झुं कं वउदं वरं वउदं कं यदं ॥  
देः वउदं झुं कं वउदं वरं वउदं कं यदं ॥  
वउदं कं झुं कं वउदं वरं वउदं कं यदं ॥

यस्स छत्तिंसति स्रोता, मनापसवना भुसा ।

बाहा वहन्ति दुद्दिट्ठिं सङ्कप्पा रागनिस्सिता ॥६॥

यस्य षट्त्रिंशत् स्रोतांसि मनापश्चवणानि भूयासुः ।

बाहा वहन्ति दुदृष्टिं संकल्पा रागनिःसृता ॥

माद'मैस'कु'कु'सो'दु'मा'मैसा । ।

१'अ'द'कै'अ'द'द'व'अ'अ'द'द'द'व'द' । ।

दु'अ'द'कु'कु'दु'द'द'व'अ'द' । ।

अ'मा'स'व'कु'स'व'कु'स'मैस'अ'द'द' । ।

जिसके, छत्तीस स्रोत ( आँख, कान, नाक, जीभ, काया, मन, रूप, गन्ध, शब्द, रस, स्पर्श, धर्म, आँख का विज्ञान आदि ) मन को अच्छी लगनेवाली ( चीजों ) को ही लानेवाले हों, ( उसके लिए ) रागलस संकल्प रूपी बाहन बुरी धारणाओं को वहन करते हैं ।

Whoever's mind is unsettled by desire due to the thirty-six streams will be carried off by the torrent of bad thoughts and great attachment. ( The thirty-six streams are the six organs of sense and the six objects of sense in relation to a desire for sensual pleasures, a desire for existence, and a desire for prosperity ).

P 125 ( XXXI, 30 )

P 177 V 339

कु'कु'द'द'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ' । ।

दु'अ'द'कु'कु'दु'द'द'व'अ'द' । ।

कु'व'द'कु'कु'द'द'अ'अ'अ'अ' । ।

अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ' । ।

1 अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ'अ' ।

सवन्ति सब्बधि सोता, लता उन्निज्ज तिष्ठति ।  
तं च दिस्वा लतं जातं, मूलं पञ्जाय छिन्दथ ॥७॥

स्रवन्ति स्रवतः स्रोतांसि लता उद्भिद्य तिष्ठति ।  
तद्वदृष्ट्वा लतं जातां, मूलं प्रज्ञया छिन्दत ॥

कुर्वन्ति स्रवन्ति सोता, लता उन्निज्ज तिष्ठति ।  
तं च दिस्वा लतं जातं, मूलं पञ्जाय छिन्दथ ॥७॥  
स्रवन्ति स्रवतः स्रोतांसि लता उद्भिद्य तिष्ठति ।  
तद्वदृष्ट्वा लतं जातां, मूलं प्रज्ञया छिन्दत ॥

( यह ) स्रोत चारों ओर बहते हैं, ( जिनके कारण ) ( तृष्णा रूपी ) लता  
अंकुरित रहती है; उस उत्पन्न हुई लता को जानकर, प्रज्ञा से ( उसकी )  
जड़ को काटो ।

The streams flow everywhere; the creeper ( of desire )  
keeps on springing up. If you see that the creeper has sprung  
up, cut its root by means of wisdom.



तसिणाय पुरक्खता पजा,  
परिसप्पन्ति ससो व बन्धितो ।  
संयोजनसङ्गसत्तका  
दुक्खमुपेन्ति पुनप्पुनं चिराय । ६॥

तृष्णया पुरस्कृताः प्रजाः रिसर्पन्ति शश इव बद्धः ।  
संयोजनसंगसक्तका दुःखमुपयन्ति पुनः पुनः चिराय ॥

མེད་པས་འཁྲིད་པའི་སྒྲེ་བོ་ནམས།  
 རི་བོང་ཉི་ཡིས་ཟིན་བཞིན་འཁོར།  
 ཀུན་དུ་སྒྲོར་ལ་ཆགས་ཐོགས་ཅན།  
 ཡང་ཡང་སྒྲག་བསྐྱེད་ཕྱན་རིང་ཕྱོད།

तृष्णा के पीछे, पड़े प्राणी, बंधे खरगोश की भाँति चक्कर काटते हैं, संयोजनों ( मन के बन्धनों ) में फँसे ( जन ) पुनः पुनः चिरकाल तक दुःख को पाते हैं ।

Being entwined in craving revolve like harestied in a trap. Held fast by worldly attachments, they experience protracted sorrow again and again.

P 12 ( III, 6 )

P 179 V 342

མེ་གང་དྲག་དུ་བདེ་བ་འདོད་ཟེང་ག།  
 ཟེ་དང་ག་དང་ཉི་བར་འགོ་འགྱུར་ཞིང་།  
 ཟེ་དགུ་ཟེང་བ་རྣམས་ཀྱིས་མདུན་དུ་བདར།  
 རྒྱ་ནང་རི་བོང་ཡོངས་སྤྱ་རྒྱུ་བ་བཞིན།

तसिणाय पुरक्खता पजा,  
परिसप्पन्ति ससो व बन्धितो ।  
तस्मा तसिणं विनोदये,  
आकङ्खन्त विरागमत्तनो ॥१०॥

तृष्णया पुरष्कृताः प्रजाः  
परिसर्पन्ति शश इव बद्धः ।  
तस्मात् तृष्णां विनोदयेद् ।  
भिक्षुराकाङ्क्षी विरागमात्मनः ॥

श्लेऽयं च भवति च भवति च भवति च भवति ।  
संभवे च भवति च भवति च भवति च भवति ।  
संभवे च भवति च भवति च भवति च भवति ।  
संभवे च भवति च भवति च भवति च भवति ।

तृष्णा के पीछे पड़े प्राणी बंधे खरगोश की भाँति चक्कर काटते हैं इसलिए भिक्षु को चाहिए कि वह अपने वैराग्य की इच्छा रखे, तृष्णा को दूर करे ।

Beings entwined in craving revolve like harestied in a trap.  
Therefore a Bhikshu who wishes himself to be free from desire  
( Nirvana ), should discard craving.

1 संभवे च भवति च भवति च भवति च भवति ।

यो निब्वनथो वनाधिमुत्तो,  
 वनमुत्तो वनमेव धावति ।  
 तं पुग्गलमेथ पस्सथ,  
 मुत्तो बन्धनमेव धावति ॥११॥

वेणुवन

विमन्तक ( मिष्टु )

यो निर्वाणार्थी वनाऽधिमुत्तो  
 वनमुत्तो वनमेव धावति ।  
 तं पुद्गलमेव पश्यत मुत्तो  
 बन्धनमेव धावति ॥

ॐ ऋत्विज्यः ॥

सुन्दरः कश्चिन्मन्त्रः ॥ १ ॥  
 सुन्दरः कश्चिन्मन्त्रः ॥ २ ॥  
 सुन्दरः कश्चिन्मन्त्रः ॥ ३ ॥  
 सुन्दरः कश्चिन्मन्त्रः ॥ ४ ॥

जो निर्वाण की इच्छा वाला ( पुरुष ) वन ( तृष्णा ) से मुक्त हो, वन से सुमुक्त हो, फिर वन ( = तृष्णा ) ही की ओर दौड़ता है, उस व्यक्ति को (वैसे ही) जानो जैसे कोई ( बन्धन से ) मुक्त ( पुरुष ) फिर बन्धन ही की ओर दौड़े ।

Whoever desiring to pass from sorrow ( to gain Nirvana ) leaves the forest ( of the afflictions like craving ) and then runs back to that same forest was freed only to rush back to bondage. Look at that man !

P 95 ( XXVII, 26 )

P 180 V 344

सुन्दरः कश्चिन्मन्त्रः ॥ १ ॥  
 सुन्दरः कश्चिन्मन्त्रः ॥ २ ॥  
 सुन्दरः कश्चिन्मन्त्रः ॥ ३ ॥  
 सुन्दरः कश्चिन्मन्त्रः ॥ ४ ॥

1 सुन्दरः कश्चिन्मन्त्रः ॥ १ ॥



न तं द०हं बन्धनमाहु धीरा,  
यदायसं दारुजं बब्वजं च ।  
सारत्तरत्ता मणिकुण्डलेषु,  
पुत्तेसु दारेसु च या अपेक्खा ॥१२॥

जैतवन

बन्धनागार

न तद् दृढं बन्धनमाहुर्धीरा यद् आयसं दारुजं पर्वजं च ।  
सारवद्-रक्ता मणिकुण्डलेषु पुत्रेषु दारेषु च याऽपेक्षा ॥

कु० सु० ऋ० सु० ॥

वे० सु० म० सु० गे० सु० द० सु० म० ॥  
हृ० सु० म० सु० म० सु० म० सु० म० ॥  
हृ० सु० म० सु० म० सु० म० सु० म० ॥  
म० सु० म० सु० म० सु० म० सु० म० ॥

( यह ) जो लोहे लकड़ी या रस्सी का बन्धन है, उसे बुद्धिमान (जन) दृढ़ बन्धन नहीं कहते, ( वस्तुतः दृढ़ बन्धन है जो वह ) धन (=सारवत् ) में रक्त होना, या मणि, कुण्डल, पुत्र स्त्री में इच्छा का होना है ।

It is not a strong fetter, say the wise, that is made of iron, wood or hemp. Far greater a bond is the longing for jewels and ornaments, children and wives.

P 8 ( II, 5 )

P 180 V 345

वे० सु० म० सु० म० सु० म० ॥  
म० सु० म० सु० म० सु० म० ॥  
हृ० सु० म० सु० म० सु० म० ॥  
म० सु० म० सु० म० सु० म० ॥

एतं दृढं बन्धनमाहु धीरा,  
 ओहारितं सिथिलं दुष्प्रमुखं ।  
 एतं पि छेत्वा न परिव्वजन्ति,  
 अनपेक्षितो कामसुखं पहाय ॥१३॥

एतद् दृढं बन्धनमाहुर्धीरा  
 अपहारि सिथिलं दुष्प्रमोचम् ।  
 एतदपि छित्त्वा परिव्रजन्त्यन-  
 पेक्षितः कामसुखं प्रहाय ॥

ॐ नमः शिवाय नमः शिवाय नमः शिवाय नमः ।  
 नमः शिवाय नमः शिवाय नमः शिवाय नमः ।  
 नमः शिवाय नमः शिवाय नमः शिवाय नमः ।  
 नमः शिवाय नमः शिवाय नमः शिवाय नमः ।

धीर पुरुष इसी को दृढ़ बन्धन, अपहारक, सिथिल और दुस्त्याज्य कहते हैं। ( वह ) अपेक्षा रहित हो, तथा काम-सुखों को छोड़, इस ( दृढ़ ) बन्धन को छिन्नकर, प्रव्रजित होते हैं ।

That fetter is strong, say the wise for it binds easily and is hard to loosen. This too they cut off, and, renouncing the world, they abandon without regret the pleasures of worldly desires.

P 8 ( II, 6 )

P 181 V 346

ॐ नमः शिवाय नमः शिवाय नमः शिवाय नमः ।  
 नमः शिवाय नमः शिवाय नमः शिवाय नमः ।  
 नमः शिवाय नमः शिवाय नमः शिवाय नमः ।  
 नमः शिवाय नमः शिवाय नमः शिवाय नमः ।

ये रागरक्तानुपतन्ति स्रोत,  
 सयंकृतं मक्कटको व जालं ।  
 एतं पि छेत्त्वान व्रजन्ति धीरा,  
 अनपेक्षिनो सब्बदुक्खं पहाय ॥ १४॥

राजगृह ( वेणुवन )

सैमा ( बिम्बिसार-महिषी )

ये रागरक्ता अनुपतन्ति स्रोतः  
 स्वयंकृतं मर्कटक इव जालम् ।  
 एतदपि छित्त्वा व्रजन्ति धीरा  
 अनपेक्षिणः सर्वदुःखं प्रहाय ॥

मरुद्वारं कृत्वा सन्देहं त्यक्त्वा सवेदसंवा ।  
 श्रुत्वा श्रुत्वा मन्त्रिणं सन्देहं त्यक्त्वा सवेदं ।  
 देवदत्तं सत्तं वसन्त्युत्तमं सत्तं सत्तं ।  
 श्रुत्वा सत्तं सत्तं सत्तं सत्तं सत्तं सत्तं ।

जो राग में रक्त हैं, वह जैसे मकड़ी अपने बनाये जाल में पड़ती है,  
 ( वैसे ही ) अपने बनाए, स्रोत में पड़ते हैं, धीर ( पुरुष ) इस ( स्रोत ) को भी  
 छेदकर सारे दुःखों को छोड़ आकांक्षा-रहित हो चल देते हैं ।

Those who fall into the streams of attachment and craving  
 are bound like spiders in the nets they have made for themselves.  
 The wise cut off this craving and renouncing the world, they  
 abandon all sorrows without regret.

मुञ्च पुरे मुञ्च पच्छतो,  
मज्झे मुञ्च भवस्स पारगू ।  
सब्बत्थ विमुत्तमानसो,  
न पुनं जातिजरं उपेहिसि ॥१५॥

राजगृह ( वेणुवन )

उग्रसेन ( श्रेष्ठी )

मुंच पुरो मुंच पश्चात् मध्ये मुंच भवस्य पारगः ।  
सर्वत्र विमुक्तमानसो न पुनः जातिजरे उपैषि ॥

अमुञ्जं कसं वग्गेयं जितं मुञ्चं कसं वग्गेयं ।  
दमुञ्जं कसं वग्गेयं ते श्रेयं वं वक्केयं ।  
गुणं कसं कसं वरं मुञ्चं वदिं यिदं ।  
मुञ्चं कसं मुञ्चं कसं कसं वग्गेयं ।

आगे पीछे और मध्य की (सभी वस्तुओं को) त्याग दो, (और उन्हें छोड़)  
भव (सागर) के पार हो जाओ, जिसका मन चारों ओर से मुक्त हो गया,  
( वह ) फिर जन्म और जरा को प्राप्त नहीं होता ।

Let go the future, let go the past, let go the present  
( literally front, back and middle ) and cross over the realm of  
conditioned existence. With your mind totally freed you will  
not again undergo birth and decay.

P 112 ( XXIX. 60 )

P 182 V 348

अमुञ्जं कसं वग्गेयं जितं मुञ्चं कसं वग्गेयं ।  
दमुञ्जं कसं वग्गेयं ते श्रेयं वं वक्केयं ।  
गुणं कसं कसं वरं मुञ्चं वदिं यिदं ।  
मुञ्चं कसं मुञ्चं कसं कसं वग्गेयं ।

वितक्कपमथितस्स जन्तुनो,  
 तिब्बरागस्स सुभानुपस्सिनो ।  
 भिद्यो तण्हा पवड्ढति,  
 एस खो दढ्हं करोति बन्धनं ॥१६॥

जैतवन

( चुल्ल ) धनुग्गह पण्डित

वितर्क-प्रमथितस्य जन्तोः  
 तीव्ररागस्य शुभाऽनुदर्शिनः ।  
 मूयः तृष्णः प्रवर्द्धते एषखलु दृढं करोति बन्धनम् ॥

सुखं सुखं चरं सुखं चरं सुखं चरं सुखं च ।  
 सुखं चरं सुखं चरं सुखं चरं सुखं चरं सुखं च ।  
 सुखं चरं सुखं चरं सुखं चरं सुखं चरं सुखं च ।  
 सुखं चरं सुखं चरं सुखं चरं सुखं चरं सुखं च ।

जो प्राणी सन्देह से मथित, तीव्र राग से युक्त, सुन्दर ही सुन्दर को देखने-  
 वाला है, उसकी तृष्णा और भी अधिक बढ़ती है, वह ( अपने लिए ) और भी  
 दृढ़ बन्धन तैयार करता है ।

For the person who is agitated by thoughts, who is of  
 strong passions and who seeks after the pleasurable, craving  
 steadily grows. Indeed, he makes the fetters strong.

वितक्कूपसमे च यो रतो,  
 असुभं भावयते सदा सतो ।  
 एस खो व्यन्ति काहिति,  
 एस छेच्छति मारबन्धनं ॥१७

वितर्कौपशमे च यो रतोऽशुभं भावयते सदा स्मृतः ।  
 एष खलु व्यन्तीकरिष्यति एष छेत्स्यति मारबन्धनम् ॥

यमं वैमं क्खं णं उं मरं वैमं वं नम ।      ।  
 अं हं मं पं णं वैमं णं उं मरं वं नम ।      ।  
 णं क्खं मं पं णं मरं उं मरं वं नम वैमं णं ।      ।  
 णं क्खं मं पं णं मरं उं मरं वं नम उं मरं ।      ।

सन्देह के शान्त करने में जो रत है, सचेत रह ( जो ) अशुभ ( दुनिया के अन्धेरे पहलू ) की भी सदा भावना करता है । वह मार के बन्धन को छिन्न करेगा, विनाश करेगा ।

He who delights in quieting his thoughts, who meditates on what is unpleasant, and who is ever mindful, will make an end of craving. He cut the fetters of Mara.

निवृज्जतो असन्तासी, वीततण्हो अनङ्गणो ।  
अच्छिन्दि भवसल्लानि, अन्तिमोयं समुत्सयो ॥ १८ ॥

जैतवन

मार

निष्ठांगतोऽसंत्रासी वीततृष्णोऽनंगणः ।  
उत्सृज्य भवशल्यानि, अन्तिमोऽयं समुद्ययः ॥

सुदुःखमश्रुत्वा

देसं वरं सोऽपि क्षणं च मे ।  
श्रेयं च श्रुत्वा मेऽपि न मे ।  
श्रेयं च मेऽपि न मेऽपि न मे ।  
अपि न मेऽपि न मेऽपि न मे ।

जिसके ( पाप-पुण्य ) समाप्त हो गये; जो त्रास-उत्पादक नहीं है, जो तृष्णारहित और मलरहित है, वह भव के श्लथों को उखाड़ेगा, यह उसका अन्तिम देह है ।

He who has fully gone ( from all limitation ), he who is fearless, devoid of craving, without faults, and who has cast out the thorns of conditioned existence, is in his final birth.

वीततण्हो अनादानो, निरुत्तिपदकोविदो ।

अक्खराणं सन्निपातं, जञ्जा पुब्बापरानि च ।

स वे अन्तिमसारोरो, महापञ्जो महापुरिसो ति वुच्चति ॥१६॥

वीततृणोऽनादानो निरुक्तिपदकोविदो ।

अक्षराणां सन्निपातं जानाति पूर्वापरानि च ।

स वै अन्तिमशारीरो महाप्राज्ञ इत्युच्यते ॥

सुदेवः सः सुदसः सुदेवः सुदेवः सुदेवः ।

देवः सः सुदेवः सुदेवः सुदेवः सुदेवः ।

सुदेवः सुदेवः सुदेवः सुदेवः सुदेवः ।

सुदेवः सुदेवः सुदेवः सुदेवः सुदेवः ।

सुदेवः सुदेवः सुदेवः सुदेवः सुदेवः ।

सुदेवः सुदेवः सुदेवः सुदेवः सुदेवः ।

जो तृणारहित, परिग्रहरहित, भाषा और काव्य का जानकार है, और ( जो ) अक्षरों के पहिले पीछे रखने को जानता है, वह निश्चय ही अन्तिम शरीर वाला तथा महाप्राज्ञ कहा जाता है ।

He who is devoid of craving and is free from grasping, who is skilled in understanding words and their meanings, and who knows the grouping of letters and their sequence, he is known as having his last body, and as being one great in wisdom.



सब्बाभिभू सब्बविदूहमस्मि,  
 सब्बेसु धम्मेषु अनूपलित्तो ।  
 सब्बज्झहो तण्हक्खये विमुत्तो,  
 सयं अभिञ्जाय कमुद्दिसेय्यं ॥२०॥

गया से वाराणसी के रास्ते में

उपक ( आजीवक )

सर्वाभिभूः सर्वविदहमस्मि सर्वेषु धर्मेष्वनूपलिप्तः ।  
 सर्वजहः तृष्णाक्षये विमुक्तः  
 सायं अभिज्ञाय कमुद्दिशेयम् ॥

गंअं कसं गंअं गसं वं कं ॥

सससं उदं जैअं गंअं सससं उदं रीअं वं वदं ॥  
 कंअं कससं गुअं अं उं वं अं अं वं ॥  
 गुअं अं अं अं वं अं उं कं वं अं अं ॥  
 अं गीअं अं अं वं अं अं अं अं अं ॥

मैं (राग आदि) सभी को परास्त करनेवाला हूँ, (दुःख से मुक्ति पाने की)  
 सभी (बातों) का जानकार हूँ, सभी धर्मों (=पदार्थों) में अलिप्त हूँ,  
 सर्वत्यागी, तृष्णा के नाश से मुक्त हूँ, (विमल ज्ञान को) अपने ही जानकर  
 (मैं जब) किसको अपना (गुरु) बतलाऊँ ?

I have conquered all, I know all, I am free of desire  
 towards all phenomena (dharmas). I have renounced all and  
 with the destruction of craving I am freed. Having learnt by  
 myself, whom shall I call my teacher ?

सब्बदानं धम्मदानं जिनाति,  
 सब्बरसं धम्मरसो जिनाति ।  
 सब्बरतिं धम्मरति जिनाति,  
 तण्हक्खयो सब्बदुक्खं जिनाति ॥२१॥

जेतवन

सक देवराज

सर्वदानं धर्मदानं जयति सर्वरसं धर्मरसो जयति ।  
 सर्वा रतिं धर्मरतिर्जयति तृष्णाक्षय सर्वदुःखं जयति ॥

शुभं भूतं कथं भूतं । ।

कैसं गुं सुं वं सुं वं गुं वं सुं । ।

कैसं गुं रं रं रं सुं वं गुं वं सुं । ।

कैसं गुं नं नं वं नं नं वं गुं वं सुं । ।

सुं वं वं वं सुं वं सुं वं सुं । ।

धर्म का दान सारे दानों से बढ़कर है, धर्मरस सारे रसों से प्रबल है, धर्म में रति सब रतियों से बढ़कर है, तृष्णा का विनाश सारे दुःखों को जीत लेता है ।

The gift of the Dharma excels all gifts. The flavour of the Dharma excels all flavours. The delight of the Dharma excels all delights. The destruction of craving conquers all sorrows.

P 91 ( XXVI, 29 )

P 185 V 354

सुं वं गुं सुं वं सुं वं सुं । ।

नं नं गुं सुं वं नं नं वं सुं । ।

सुं वं गुं सुं वं सुं वं सुं । ।

सुं वं सुं वं सुं वं सुं । ।

हनन्ति भोगा दुम्मेधं, नो च पारगवेसिनो ।  
भोगतृणाय दुम्मेधो, हन्ति अञ्जेव अत्तनं ॥२२॥

जेतवन

( अपुत्रक श्रेष्ठी )

हनन्ति भोगा दुर्मेधसं न चेत् परागवेषिणः ।  
भोगतृणया दुर्मेधा हन्त्यन्य इवात्मनः ॥

कुलं सुदं कलं सुदं । ।

सुखं दुःखं वदं सुदं वदं । ।

सुखं सुखं वदं वदं सुखं वदं । ।

वदं वदं सुदं वदं सुदं वदं । ।

वदं वदं वदं वदं वदं वदं । ।

( संसार को ) पार करने की कोशिश न करनेवाले दुर्बुद्धि ( पुरुष ) को भोग नष्ट करते हैं, भोगों की तृष्णा में पड़कर ( वह ) दुर्बुद्धि पराये की भाँति अपने ही को हनन करता है ।

Not searching for a way out of Samsara those of poor intelligence are destroyed by riches. By their craving for riches those of poor intellect are killed as if by another.

तिणदोसानि खेत्तानि, रागदोसा अयं प्रजा ।

तस्मा हि वीतरागेषु, दिन्नं होति महप्फलं ॥२३॥

पाण्डुकम्बलशिला ( देवलोक )

अङ्कुर

तृणदोषाणि क्षेत्राणि रागदोषेयं प्रजा ।

तस्माद्धि वीतरागेषु दत्तं भवति महाफलम् ॥

ལ་བ་དཀར་པོ་ལྟ་བུ་གྱི་དོ་ཕྱིན་དུ་འགྱུར། །

རྩ་རྒྱུ་ལྟ་བུ་གྱི་སྒྲིན་ཡིན་ཏེ། །

འདོད་ཆགས་སྒྲི་བོ་འདི་ཡི་སྒྲིན། །

དེ་སྒྲིན་འདོད་ཆགས་བྲལ་བ་ལ། །

སྒྲིན་བ་འབྲས་སུ་ཆེན་པོ་འགྱུར། །

खेतों का दोष तृण है, इस प्रजा (= मनुष्यों ) का दोष राग है, इसलिये  
( दान ) वीतराग ( पुरुष ) को देने में महाफलप्रद होता है ।

Weeds are the blemish of the fields, and desire is the blemish  
of mankind. Hence what is given to those freed from desire  
yields abundant fruit,

P 55 ( XVI, 15 )

P 186 V 356

ཞིང་གི་སྒྲིན་ནི་རྩ་ཡིན་ཏེ། །

སྒྲི་བྱུ་འདི་ལ་འདོད་ཆགས་སྒྲིན། །

དེ་བས་འདོད་ཆགས་བྲལ་རྒྱལ་ལ། །

སྒྲིན་ནི་འབྲས་སུ་ཆེན་པོ་འགྱུར། །

तिणदोसानि खेतानि, दोसदोसा अयं पजा ।  
तस्मा हि बीतदोसेषु, दिन्नं होति महप्फलं ॥२४॥

तृणदोषाणि क्षेत्राणि द्वेषदोषेयं प्रजा ।  
तस्माद्धि बीतद्वेषु दत्तं भवति महाफलम् ॥

कुं कस्य वेदं पी सुक् पी क र्हे ।      ।  
वे क्षन् सु मे र्हे पी सुक् ।      ।  
ने क्षेत् वे क्षन् प्र म म म ।      ।  
सुक् म र्प्र म सु के म र्हे र्प्र म ।      ।

खेतों का दोष तृण है, इस प्रजा का दोष द्वेष है; इसलिए बीतद्वेष =  
( द्वेषरहित ) को दान देने में महाफल होता है ।

Weeds are the blemish of the fields, and hatred is the blemish of mankind. Hence what is given to those freed from hatred yields abundant fruit.

P 55 ( XVI, 16 )

P 186 V 357

वेदं पी सुक् पी कुं पी क र्हे ।      ।  
सुक् र्प्र म र्हे म वे क्षन् सुक् ।      ।  
ने म म वे क्षन् प्र म कस्य म ।      ।  
सुक् म र्प्र म सु के म र्हे र्प्र म ।      ।

तिणदोसानि खेत्तानि, मोहदोसा अयं पजा ।  
तस्मा हि बीतमोहेषु, दिन्नं होति महप्फलं ॥२५॥

तृणदोषाणि क्षेत्राणि मोहदोषेयं प्रजा ।  
तस्माद्धि बीतमोहेषु दत्तं भवति महाफलम् ॥

तृ०क्षस०क्षे०त्त०नि०मो०ह०दो०षे०यं०प्र०जा० ।  
तस्मा०द्धि०बी०त०मो०हे०षु०दत्तं०भव०ति०महा०फ०ल०म्०॥  
तृ०क्ष०स०क्षे०त्त०नि०मो०ह०दो०षे०यं०प्र०जा० ।  
तस्मा०द्धि०बी०त०मो०हे०षु०दत्तं०भव०ति०महा०फ०ल०म्०॥

खेतों का दोष तृण है, इस प्रजा का दोष मोह है इसलिए बीतमोह  
(=मोहरहित) को दान देने में महाफल होता है ।

Weeds are the blemish of the fields and delusion is the blemish of mankind. Hence what is given to those freed from delusion yields abundant fruit.

P 55 ( XVI, 17 )

P 187 V 358

तृ०क्ष०स०क्षे०त्त०नि०मो०ह०दो०षे०यं०प्र०जा० ।  
तस्मा०द्धि०बी०त०मो०हे०षु०दत्तं०भव०ति०महा०फ०ल०म्०॥  
तृ०क्ष०स०क्षे०त्त०नि०मो०ह०दो०षे०यं०प्र०जा० ।  
तस्मा०द्धि०बी०त०मो०हे०षु०दत्तं०भव०ति०महा०फ०ल०म्०॥

तिणदोसानि खेत्तानि, इच्छादोसा अयं पजा ।  
तस्मा हि विगतिच्छेसु, दिन्नं होति महप्फलं ॥२६॥

तिणदोसानि खेत्तानि, तण्हादोसा अयं पजा ।  
तस्मा हि वीततण्हेसु, दिन्नं होति महप्फलं ॥

तृणदोषाणि क्षेत्राणि, इच्छादोषेयं प्रजा ।  
तस्माद्धि विगतेच्छेषु दत्तं भवति महाफलम् ॥

हुं क्खसंखेदं मी सुक्खं यी कंहे । ।

सुहेतुं च सुहेतुं चोदयेत्तं सुक्खं । ।

देहे सुहेतुं च सुहेतुं चोदयेत्तं । ।

सुक्खं च सुहेतुं चोदयेत्तं सुहेतुं चोदयेत्तं । ।

सुहेतुं च सुहेतुं चोदयेत्तं ।

सुहेतुं च सुहेतुं चोदयेत्तं । ।

खेतों का दोष तृण है, इस प्रजा का दोष इच्छा है, इसलिए विगतेच्छा  
(=इच्छारहित) को दान देने में महाफल होता है ।

Weeds are the blemish of the fields, and craving is the blemish of mankind. Hence what is given to those freed from craving yields abundant fruit.

P 55 ( XVI, 20 )

P 187 V 359

खेदं मी सुक्खं कंहुं यी कंहे । ।

सुहेतुं च सुहेतुं चोदयेत्तं सुक्खं । ।

देहे सुहेतुं च सुहेतुं चोदयेत्तं सुक्खं । ।

सुक्खं च सुहेतुं चोदयेत्तं सुहेतुं चोदयेत्तं । ।

## २५—भिक्षुवर्गो

वक्खुना संवरो साधु, साधु सोतेन संवरो ।  
घानेन संवरो साधु, साधु जिह्वाय संवरो ॥१॥

जैतवन

पाँच भिक्षु

चक्षुषा संवरः साधुः, साधुः श्रोत्रेण संवरः ।  
घ्राणेन संवरः साधुः, साधुः जिह्वाय संवरः ॥

शुभं भवेत्तु ॥

सिमा के सुखं वं विमलं वं सु ।  
कं वं सुखं वं विमलं वं वि ।  
सु के सुखं वं विमलं वं सु ।  
सु के सुखं वं विमलं वं वि ।

आँख का संवर (=संयम) ठीक है, ठीक है कान का संवर, घ्राण  
(=नाक) संवर ठीक है, ठीक है जीभ का संवर ।

Good is restraint of the eye, good is restraint of the ear,  
good is restraint of the nose, and good is restraint of the tongue.



कायेन संवरो साधु, साधु वाचाय संवरो ।  
 मनसा संवरो साधु, साधु सब्बत्थ संवरो ।  
 सब्बत्थ संवृतो भिक्खु, सब्बदुक्खा पमुच्चति ॥२॥

कायेन संवरः साधुः साधुः वाचा संवरः ।  
 मनसा संवरः साधुः साधुः सर्वत्र संवरः ।  
 सर्वत्र संवृतो भिक्षुः सर्वदुःखात् प्रमुच्यते ॥

सुखं कैः श्लोमं वं येन स वं श्लो ।  
 मणं कैः श्लोमं वं येन स वं श्लो ।  
 यीनं कैः श्लोमं वं येन स वं श्लो ।  
 सखसं च नं नुं कैः श्लोमं वं येन स ।  
 सखसं च नं श्लोमं वं नं नं नं नं नं ।  
 सुखं वं नं नं नं नं नं नं नं नं नं ।

काया का संवर (=संयम) ठीक है, ठीक है वचन का संवर; मन का संवर ठीक है, ठीक है सर्वत्र ( इन्द्रियों ) का संवर, सर्वत्र संवर-युक्त भिक्षु सारे दुःखों से छूट जाता है ।

Good is restraint in body, good is restraint in speech, good is restraint in mind, good is restraint in all things. The monk restrained in all things is freed from all sorrow.

हृत्थसंयतो पादसंयतो,  
 वाचासंयतो संयतुत्तमो ।  
 अज्जत्तरतो समाहितो,  
 एको सन्तुसितो तमाहु भिक्खुं ॥३॥

जेतवन

हंसघातक ( भिक्षु )

हस्तसंयतः पादसंयतो वाचा संयतः संयतोत्तमः ।  
 अध्यात्मरतः समाहित एकः संतुष्टस्तमाहुर्भिक्षुम् ॥

अणं वं अणं अणं अणं अणं अणं अणं ।  
 अणं अणं अणं अणं अणं अणं अणं ।  
 अणं अणं अणं अणं अणं अणं अणं ।  
 अणं अणं अणं अणं अणं अणं अणं ।

जिसके हाथ, पैर और वचन में संयम है ( जो ) उत्तम संयमी है, जो घट के भीतर (= अध्यात्म ) रत, समाधियुक्त, अकेला ( और ) सन्तुष्ट है, उसे भिक्षु कहते हैं ।

He who is controlled in foot, in speech, and in the most important to control ( mind ) he who delights in meditation and is composed, who is solitary and contented, that man is called a Bhikshu.

P 132 ( XXXII, 8 )

P 189 V 362

अणं वं अणं अणं अणं अणं अणं अणं ।  
 अणं अणं अणं अणं अणं अणं अणं ।  
 अणं अणं अणं अणं अणं अणं अणं ।  
 अणं अणं अणं अणं अणं अणं अणं ।

यो मुखसंयतो भिक्षु, मन्तभाणी अनुद्धतो ।  
अर्थं धम्मं च दीपेति, मधुरं तस्स भासितं ॥४॥

जैतवन

कोकालिय

यो मुखसंयतो भिक्षुर्मन्त्रभाणी अनुद्धतः ।  
अर्थं धर्मं च दीपयति मधुरं तस्य भाषितम् ॥

मादं जैमा मं वि ह्येव सुदं ठेदं । ।

मदं वरं सुजं जैमा मं वं मं । ।

देवं दं ठेवं वि मं मं सुदं मा । ।

दमं सुदं दे वं ठेवं सुवं मं सुदं । ।

जो मुख में संयम रखता है, मनन करके बोलता है, उद्धत नहीं है, अर्थ और धर्म को प्रगट करता है, उसका भाषण मधुर होता है ।

The Bhikshu who keeps control of his tongue, says only what is needed without pride and makes both the meaning and the Dharma clear, his words are sweet.

धम्मारामो धम्मरतो, धम्मं अनुविचिन्तयं ।

धम्मं अनुस्सरं भिक्खु, सद्धम्मा न परिहायति ॥५॥

जेतवन

धम्माराम ( धेर )

धम्मारामो धम्मरतो धम्मं अनुविचिन्तयन् ।

धम्ममनुस्मरन् भिक्षुः सद्धर्मान् परिहीयते ॥

कॅसं'ळ'ण'क'स'णै'ळ'कॅस'ळ'द'ण'द' ।

कॅस'ळ'हॅस'सु'सॅस'स'सु'द'व' ।

द'ण'सु'ळ'कॅस'कॅ'हॅस'द'क'व' ।

द'स'व'द'कॅस'ळ'स'क'स'स'स'द'ण'द' ।

धर्म में रमण करनेवाला, धर्म में रत, धर्म का चिन्तन करते, धर्म का अनुस्मरण करते भिक्षु सच्चे धर्म से च्युत नहीं होता ।

The Bhikshu who dwells in the Dharma, who delights in the Dharma, who meditates on the Dharma, and who attunes his mind to the Dharma, goes not fall away from the Holy Dharma.

P 132 ( XXXII, 9 )

P 190 V 364

द'ण'सु'ळ'कॅस'ळ'ण'क'द'ण'द'व' ।

कॅस'द'ण'द'कॅस'ळ'सॅस'स'व'द'ण' ।

कॅस'ळ'हॅस'सु'द'क'व'द'ण' ।

कॅस'ळ'स'हॅस'सु'क'स'स'स'द'ण'द' ।

सलाभं नातिमञ्जयेत्, नाञ्जयेत् पिहयं चरे ।

अञ्जयेत् पिहयं भिक्षुः समाधिं नाधिगच्छति ॥६॥

राजगृह ( वेणुवन )

विपक्ख-सेवक ( भिक्षु )

स्वलाभं नातिमन्येत्, नाऽन्येषां स्पृहयन् चरेत् ।

अन्येषां स्पृहयन् भिक्षुः समाधिं नाधि गच्छति ॥

२८० गो० छेत् २८० गो० छेत् २८० गो० छेत् । ।

गो० छेत् २८० गो० छेत् २८० गो० छेत् । ।

गो० छेत् २८० गो० छेत् २८० गो० छेत् । ।

२८० गो० छेत् २८० गो० छेत् २८० गो० छेत् । ।

अपने लाभ की अवहेलना नहीं करनी चाहिए । दूसरों के ( लाभ ) की स्पृहा न करनी चाहिए । दूसरों के ( लाभ की ) स्पृहा करने वाला भिक्षु समाधि ( -चित्त की एकाग्रता ) को नहीं प्राप्त करता ।

He should not be proud of what he has received nor should he envy the gains of others. The Bhikshu who envies the gains of others does not attain concentration.

P 44 ( XIII, 7 )

P 190 V 365

२८० गो० छेत् २८० गो० छेत् २८० गो० छेत् । ।

गो० छेत् २८० गो० छेत् २८० गो० छेत् । ।

२८० गो० छेत् २८० गो० छेत् २८० गो० छेत् । ।

२८० गो० छेत् २८० गो० छेत् २८० गो० छेत् । ।

अल्पलाभोऽपि चेद् भिक्षुः स्वलाभं नाऽतिमञ्जति ।  
तं वै देवाः प्रशंसन्ति, शुद्धाजोविं अतन्द्रितम् ॥७॥

अल्पलाभोऽपि चेद् भिक्षुः स्वलाभं नाऽतिमन्यते ।  
तं वै देवाः प्रशंसन्ति शुद्धाऽजोविं अतन्द्रितम् ॥

छेन् वत्तुन् अन् दमोऽस्सोऽन् ।      ।  
मन् गोऽन् वत्तुन् वत्तुन् वत्तुन् वत्तुन् ।      ।  
मन् गोऽन् वत्तुन् वत्तुन् वत्तुन् वत्तुन् ।      ।  
मन् गोऽन् वत्तुन् वत्तुन् वत्तुन् वत्तुन् ।      ।

चाहे अल्प ही हो, भिक्षु अपने लाभ की अवहेलना न करे। उसी की देवता प्रशंसा करते हैं, ( जो ) शुद्ध जोविकावाला और आलस्य रहित है।

Though a recipient of little, if a Bhikshu is contented with what he has received, and is free of laziness in his way of life he will be praised by the gods,

1 मन् गोऽन् वत्तुन् वत्तुन् वत्तुन् वत्तुन् ।

सर्वसो नामरूपस्मिं, यस्स नत्थि ममायितं ।  
असता च न सोचति, से वे भिक्खू ति वुच्चति ॥८॥

जेतवन

( पाँच अग्रदायक भिक्षु )

सर्वशो नामरूपे यस्य नास्ति ममायितम् ।  
असति च न शोचति सर्वे भिक्षु रित्युच्यते ॥

सिद्धं दमं च तृणं च केशं च शरीरं च ।  
नामं रूपां च संज्ञां च तेषां न भवेत् ।  
असत्तां च न शोचति सर्वे भिक्षु ।  
इति जेतवने भगवत्पादेषु ॥

नाम-रूप (= जगत ) में जिसकी बिल्कुल ही ममता नहीं, न होने पर  
( जो ) शोक नहीं करता, वही भिक्षु कहा जाता है ।

He indeed is called a Bhikhu who does not attach the notion of self to any name ( nama ) and form ( rupa ) ( here name and form stands for the 5 Skandhas, aggregates of form, feelings, conceptions, associations and consciousness ), and who does not grieve at the absence of self nature.

मेताविहारी यो भिक्खु, पसन्नो बुद्धसासने ।

अधिगच्छे पदं सन्तं, सङ्खारूपसमं सुखं ॥६॥

जेतवन

बहुत से भिक्षु

मैत्री विहारी यो भिक्षुः प्रसन्नो बुद्धशासने ।

अधिगच्छेत् पदं शान्तं संस्कारोपशमं सुखम् ॥

ॐ नमो भगवते बुद्धाय ।

सर्वत्र भगवत्पदं शान्तं सुखं ।

ॐ नमो भगवते बुद्धाय ।

ॐ नमो भगवते बुद्धाय ।

मैत्री ( -भावना ) से विहार करता जो भिक्षु बुद्ध के उपदेश में प्रसन्न ( श्रद्धावान ) रहता है । ( वह ) सभी संस्कारों को शमन करने वाले शान्त और सुखमय पद को प्राप्त करता है ।

The Bhikshu who dwells in loving, kindness and has clear faith and understanding of the Buddha's Teaching, attains to the stage of peace and happiness which is the stilling of associating activity ( sanskara the constructing of phenomena by association ).



सिञ्च भिक्षु इमं नावं, सिक्ता ते लघुमेस्सति ।  
छेत्वा रागं च दोसं च, ततो निब्बानमेहिसि ॥१०॥

सिञ्च भिक्षो ! इमां नावं सिक्ता ते लघुत्वं एष्याति ।  
छित्त्वा रागं च द्वेषं च ततो निर्वाणमेष्यसि ॥

नमोऽस्मिन् भुवनेऽस्मिन् भुवनेऽस्मिन् ।  
अस्मिन् भुवनेऽस्मिन् भुवनेऽस्मिन् ।  
अस्मिन् भुवनेऽस्मिन् भुवनेऽस्मिन् ।  
अस्मिन् भुवनेऽस्मिन् भुवनेऽस्मिन् ।

हे भिक्षु ! इस नाव को उलीचो, उलीचने पर यह तुम्हारे लिए हल्की हो जायेगी । राग और द्वेष को छेदन कर, फिर तुम निर्वाण को प्राप्त होगे ।

Empty this boat, O Bhikshu. By emptying it you will move swiftly. Cutting out lust and hatred you will attain the end of sorrow ( Nirvana ).

P. 97 ( XXVI, 12 )

P 192 V 369

अस्मिन् भुवनेऽस्मिन् भुवनेऽस्मिन् ।  
अस्मिन् भुवनेऽस्मिन् भुवनेऽस्मिन् ।  
अस्मिन् भुवनेऽस्मिन् भुवनेऽस्मिन् ।  
अस्मिन् भुवनेऽस्मिन् भुवनेऽस्मिन् ।

पञ्च छिन्दे पञ्च जहे, पञ्च चुत्तरि भावये ।

पञ्च सङ्गातिगो भिक्खु, ओघतिण्णो ति वुच्चति ॥११॥

पञ्च छिन्धि पञ्च जहीहि पञ्चोत्तरं भावये ।

पञ्च संगोऽतिगो भिक्षुः 'ओघतीर्ण' इत्युच्यते ॥

अ'वि'म'य'स' उ'द'अ'वि'स'स' ।

अ'वि'म'य'स' उ'द'अ'वि'स'स' ।

अ'वि'म'य'स' उ'द'अ'वि'स'स' ।

अ'वि'म'य'स' उ'द'अ'वि'स'स' ।

( जो रूप, राग, मान, उद्धतपना और अविद्या इन ) पाँच को छेदन करे;  
( जो नित्य आत्मा की कल्पना, सन्देह, शील-व्रत पर अधिक जोर, भोगों में राग,  
और प्रतिहिंसा इन ) पाँच को त्याग करे; उपरान्त ( जो श्रद्धा, वीर्य, स्मृति,  
समाधि और प्रज्ञा ) इन पाँच की भावना करे; ( जो राग, द्वेष, मोह, मान और  
झूठी धारणा इन ) पाँच के संसर्ग को अतिक्रमण कर चुका हो; ( वह काम, भव  
दृष्टि अविद्यारूपी ) ओघों (=बाढ़ों) से उत्तीर्ण हुआ कहा जाता है ।

Cutting off five\*, getting rid of five\*\*, meditate on the five\*\*\*. A Bhikshu who has freed himself from the five constraints is called "one who has crossed the flood".

\* self illusion; doubt; false ascetism; or indulgence in wrongful rites; sensual desire; hatred.

\*\* longing for the realm of form; longing for formless realms; conceit or self-will; vanity; and ignorance.

\*\*\* faith; manliness; mind-fulness; concentration or meditation; and wisdom.

ज्ञाय भिक्षु मा प्रमादो,  
 मा ते कामगुणे रमेस्सु चित्तं ।  
 मा लोहगुलं गिली पमत्तो,  
 मा कन्दि दुक्खमिदं ति डय्हमानो ॥१२॥

ध्याय भिक्षो ! मा च प्रमादः, मा ते कामगुणे भ्रमतु चित्तम् ।  
 मा लोहगोलं गिल प्रमत्तः, मा क्रन्दीः दुःखमिदमिति दह्यमानः ॥

णोऽस्सोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो ।  
 सोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो ।  
 णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो ।  
 सोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो ।

हे भिक्षु ! ध्यान में लगे, मत गफलत करो, तुम्हारा चित्त मत भोगों के चक्कर में पड़े, प्रमत्त होकर मत लोहे के गोले को निगलो '( हाय ) यह दुःख' कहकर दग्ध होते ( पीछे ) मत तुम्हें क्रन्दन करना पड़े ।

Meditate, O Bhikshu ! Do not be heedless. Do not let your mind whirl on sensual pleasures. Do not allow the red-hot iron ball of heedlessness, and cry not as you burn "This is sorrow !"

P 125 ( XXXI, 32 )

P 193 V 371

सोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो ।  
 सोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो ।  
 सोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो ।  
 सोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो णोऽस्सो ।

नत्थि ज्ञानं अपञ्जस्स, पञ्जा नत्थि अज्ञायतो ।  
यम्हि ज्ञानं च पञ्जा च, स वे निब्बानसन्तिके ॥१३॥

नास्ति ध्यानमप्रज्ञस्य प्रज्ञा नास्त्यध्यायतः ।  
यस्मिन् ध्यानं च प्रज्ञा च सवै निर्वानासन्तिके ॥

ऐसं रव षेदं णं वसव णं णं णं णं णं ।  
वसव णं णं णं णं णं णं णं णं णं ।  
णं णं णं णं णं णं णं णं णं णं ।  
देवै सुं णं णं णं णं णं णं णं णं ।

प्रज्ञाविहीन ( पुरुष ) को ध्यान नहीं ( होता ) है, ध्यान ( एकाग्रता ) न करनेवाले को प्रज्ञा नहीं हो सकती । जिसमें ध्यान और प्रज्ञा ( दोनों ) हैं, वही निर्वान के समीप है ।

There is no concentration for him who lacks wisdom, nor is there wisdom for him who lacks concentration. The one who has both concentration and wisdom is indeed close to Nirvana.

P 135 ( XXXII, १ )

P 194 V 372

देवै सुं णं णं णं णं णं णं णं णं ।  
ऐसं रव षेदं णं देवै सुं णं णं णं ।  
ऐसं रव देवै सुं णं णं णं णं णं ।  
सुं णं णं णं णं णं णं णं णं ।

सुञ्जागारं प्रविष्टस्य, शान्तचित्तस्य भिक्षुनो ।  
अमानुषी रतिरिति, सम्प्रा धम्मं विवस्सतो ॥१४॥

शून्यागारं प्रविष्टस्य शान्तचित्तस्य भिक्षोः ।  
अमानुषी रतिर्मवति सम्यग् धर्मं विशयतः ॥

झुँदं पदे हिँसं कं र वं च क स पदे । ।  
द गे झुँदं जे पदे से स स ह क व । ।  
१ अ रं द ग क स र वं स झुँदं वं व । ।  
से प स र द स पदे द ग र वं र द र । ।

शून्य (= एकान्त) गृह में प्रविष्ट, शान्तचित्त भिक्षु को भली प्रकार धर्म का साक्षात्कार करते, अमानुषी रति (= आनन्द) होती है ।

The Bhikshu who with a peaceful mind has retired to a lonely abode, and who clearly perceives the really pure Dharma (gaining the first Bodhisattva Bhumi on the Path of Seeing), experiences a joy transcending that of man.

P 132 (XXXII, 10)

P 194 V 373

द गे झुँदं म रं झुँदं तु ग स क स सु । ।  
क रं वं क रं व रं तु रं वं रं । ।  
क स क स रं ग स व रं स झुँदं वं रं । ।  
क रं अ रं द ग रं रं क रं व रं रं । ।

१ अ रं द ग रं रं क रं व रं रं क रं व रं रं । ।

यतो यतो सम्मसति, खन्धानं उदयव्ययम् ।

लभती प्रीतिप्रामोद्यं, अमृतं तं विजानतं ॥१५॥

यतो यतः समृशति स्कन्धानां उदयव्ययम् ।

लभते प्रीतिप्रामोद्यं अमृतं तद् विजानताम् ॥

१ गद० दद० गद० यस० सुद० यो० कसस० ।

सुस० यीद० यद० य० य० य० य० य० ।

दगद० यसु० यी० य० सुद० य० य० ।

दे० यी० यसस० य० य० य० य० य० ।

( पुरुष ) जैसे-जैसे ( रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार विज्ञान इन ) पाँच स्कन्धों की उत्पत्ति और विनाश पर विचार करता है, ( वैसे ही वैसे, वह ) ज्ञानियों की प्रीति और प्रमोद ( रूपी ) अमृत को प्राप्त करता है ।

When one examines and understands the origin and destruction of the Aggregates ( the five skandhas ) in detail then one obtains joy and happiness. For the wise that is ambrosia itself ( giving eternal life ).

P 132 ( XXXII, 11 )

P 195 V 374

दे० य० दे० य० सुद० यो० य० ।

सुद० य० य० य० य० य० य० य० ।

दे० य० दे० य० दे० य० य० य० ।

दगद० य० य० य० य० य० य० ।

दगद० य० य० य० य० य० य० ।

सुद० य० य० य० य० य० य० ।

1 दे० य० दे० य० सुद० यो० य० ।

तत्रायमादि भवति, इध पञ्चस्स भिक्खुनो ।  
इन्द्रियगुप्ति सन्तुट्ठि, प्रातिमोक्खे च संवरो ॥१६॥  
मित्ते भजस्सु कल्याणे, सुद्धाजीवे अतन्दिते ।

तत्राऽयमादिर्मवतीह प्राज्ञस्य भिक्षोः ।  
इन्द्रियगुप्तिः सन्तुष्टिः प्रातिमोक्षे च संवरः ।  
मित्राणि भजस्व कल्याणानि शुद्धाजीवान्यतन्द्रितानि ॥

दे० अ० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥  
२० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥  
२० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥  
२० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥  
२० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥  
२० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥

यहाँ प्राज्ञ भिक्षु को आदी ( में करना ) है—इन्द्रिय संयम, सन्तोष और प्रतिमोक्ष (=भिक्षुओं के आचार ) को रक्षा । ( वह, इसके लिए ) निरालस, शुद्ध जीविकावाले, अच्छे मित्रों का सेवन करे ।

There are necessary at the beginning for a wise Bhikshu :—  
self-control, contentment, restraint with regard to the  
Fundamental Precepts ( Pratimoksha\* ) and association with  
noble and energetic friends whose lives are pure.

\* See note on verse 247.

P 132 ( XXXII, 7 )

P 196 V 375-376

२० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥  
२० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥  
२० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥  
२० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥  
२० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥  
२० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥ २० ॥

पटिसन्धारवृत्तस्स, आचारकुसलो सिया ।

ततो पामोज्जबहुलो, दुक्खस्सन्तं करिस्सति ॥१७॥

प्रतिसंस्तारवृत्तस्याऽऽचारकुशलः स्यात् ।

ततः प्रामोद्यबहुलो दुःखस्याऽन्तं करिष्यति ॥

སྟོ་སྟོར་རྒྱས་པ་ཞུགས་པ་ཡི།

ཀུན་ཏུ་སྤྱོད་པ་དགེ་པར་བྱིས།

དགེ་ལྷན་དགའ་བ་མང་པོ་ལ།

ལྷ་ག་པུལ་མཐུར་མར་ཤེད་པར་བྱུར། །

जो सेवा सत्कार स्वभाववाला तथा आचार (पालन) में निपुण है, सानन्द दुःख का अन्त करेगा ।

By being open and friendly to all and virtuous in his conduct, the Bhikshu will have much joy and will make an end of suffering.



वस्सिका विय पुप्फानि, मद्वानि पमुञ्चति ।  
एवं रागं च दोसं च, विप्पमुञ्चेथ भिक्खवो ॥१८॥

जैतवन

पाँचसौ भिक्षु

वर्षिका इव पुष्पाणि मदितानि प्रमुञ्चति ।  
एवं रागं च द्वेषं च विप्रमुञ्चत भिक्षवः ॥

सुत्तं सुत्तं सुत्तं । ।

सुत्तं सुत्तं सुत्तं सुत्तं सुत्तं । ।

सुत्तं सुत्तं सुत्तं सुत्तं सुत्तं । ।

सुत्तं सुत्तं सुत्तं सुत्तं सुत्तं । ।

सुत्तं सुत्तं सुत्तं सुत्तं सुत्तं । ।

जैसे जूही कुम्हलाये फूलों को छोड़ देती है, वैसे ही हे भिक्षुओं ! ( तुम )  
राग और द्वेष छोड़ दो ।

As the Jasmine creeper sheds its withered flowers, even  
so, O Bhikshu, should you discard desire and hatred.

सन्तकायो सन्तवाचो, सन्तवा सुसमाहितो ।  
वन्तलोकामिसो भिक्षु, उपसन्तो ति वुच्चति ॥१६॥

जितवन

( शान्तकाय धेर )

शान्तकायो शान्तवाक् शान्तिमान् सुसमाहितः ।  
वान्तलोकाऽमिषो भिक्षु 'उपशान्त' इत्युच्यते ॥

लै.वदे.सुस.वा.लै.वदे.मा ।  
लै.वदे.अदे.के.सुस.वले.मा ।  
अदे.दे.अदे.अदे.वदे.वदे. ।  
अदे.अदे.अदे.वदे.लै.वदे.वदे. ।

काया ( और ) वचन से शान्त, भली प्रकार समाधियुक्त शान्ति सहित  
( तथा ) लोक के आमिष को वमन कर दिये हुए भिक्षु को 'उपशान्त' कहा  
जाता है ।

That Bhikshu is said to be calm, who is calm in body,  
calm in speech, calm in mind, who is well-composed, and who  
has abandoned worldly things.

P 135 ( XXXII, 33 )

P 197 V 378

अदे.वदे.सुस.अदे.अदे.वदे. ।  
अदे.अदे.अदे.सुस.अदे.अदे. ।  
अदे.अदे.अदे.अदे.अदे.अदे. ।  
अदे.अदे.अदे.अदे.अदे.अदे. ।



अत्ता हि अत्तनो नाथो, अत्ता हि अत्तनो गति ।  
तस्मा संयमयत्तानं, अस्सं भद्रं व वाणिजो । २१॥

आत्मो ह्यात्मनो नाथ आत्मा ह्यात्मनो गतिः ।  
तस्मात् संयमयात्मानं अश्वं भद्रमिव वणिक् ॥

རང་ཉིད་རང་གི་མགོན་ཡིན་ཞིང་།  
 རང་གི་སྐབས་ནི་རང་ཉིད་ཡིན།  
 དེས་ན་ཆོང་བས་དྲ་བཟང་བཞིན།  
 རང་གིས་རང་ཉིད་སྟོམ་བར་བྱ།

( मनुष्य ) अपने ही अपना स्वामी है, अपने ही अपनी गति है; इसलिए अपने को संयमी बनावे, जैसे कि सुन्दर घोड़े को बनिया ( संयत करता है ) ।

I am my own lord, my protector is myself. Therefore  
I must control myself by self as does a merchant a noble steed.

पामोज्जवटुलो भिक्खु, पसन्नो बुद्धसासने ।  
अधिगच्छे पदं सन्तं, सङ्खारूपसमं सुखं ॥२२॥

राजगृह ( वेणुवन )

वफ्फल ( थेर )

प्रामोच्चवटुलो भिक्षुः प्रसन्नो बुद्धशासने ।  
अधिगच्छेत् पदं शान्तं संस्कारोपशमं सुखम् ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

बुद्ध के उपदेश में प्रसन्न बहुत प्रमोदयुक्त भिक्षु संस्कारों को उपशमन करनेवाला सुखमय शान्त पद को प्राप्त करता है ।

Full of joy and clearly understanding and believing in the Teaching of the Buddha, the Bhikshu will attain the happiness of the calm stage, the stilling of the dualistic associating activity of mind.

यो हवे दहरो भिक्खु, युञ्जति बुद्धसासने ।  
सो इमं लोकं पभासेति, अग्भा मुत्तो व चन्दिमा ॥२३॥

श्रावस्ती ( पूर्वाराम )

सुमन ( सामणेर )

यो ह वै दहरो भिक्षुर्युक्ते बुद्धशासने ।  
स इमं लोकं प्रभासयत्यभ्रात् मुक्त इव चन्द्रमा ॥

ཤར་གྱི་ནགས་སུ་འོ།།

དག་པོ་མཉམ་པ་ཞིག་གཞིན་ན་ཡང་། །

མངས་ཀྱིས་བརྟན་པ་བཅོམ་པ་རེ།

ཡེ་ཤིན་པ་མ་གྱི་པ་པའི་རྒྱ་པ་པའི་ཤིན།

འཛིག་རྟེན་འདི་ན་རབ་གསལ་འགྲུར།

ཏེ་ཤེད་པའི་ཏེ་ཚེ་ཏེ།

ཡེ་ཤུ་ཅེར་ལྷ་པའོ། །

जो भिक्षु यौवन में बुद्ध-शासन (= बुद्धोपदेश, बुद्ध-धर्म ) में संलग्न होता है, वह मेघ से मुक्त चन्द्रमा की भाँति इस लोक को प्रकाशित करता है ।

That Bhikshu who, though young, devotes himself to the Buddha's Teaching, illuminates this world as does the moon freed from clouds.

P 54 ( XVI, 7 )

P 199 V 382

གང་ཞིག་གཞིན་ནུ་རབ་ཡུང་ནས།

སངས་ཀྱིས་བཟུང་ལ་འཇུག་པ་དེ། །

॥ १०० ॥

འཛིན་ཏེ་ཀ་འདི་ན་ཀྱན་ནས་གསལ།

१. ग. म. म. म. म. म.

सङ्खारानं खयं जत्वा, अकतञ्जूसि ब्राह्मण ॥१॥

( एक बहुत श्रद्धालु ब्राह्मण )

संस्काराणां क्षयं ज्ञात्वाऽकृतज्ञोऽसि ब्राह्मण ! ॥

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

O Brahman, cut off the stream ( of craving ) and overcome the objects of desire by your inner strength. Knowing the destruction of all that is made, O Brahman, be a knower of the unmade ( Nirvana ).

[illegible]

यदा द्वयेषु धम्मेसु, पारगू होति ब्राह्मणो ।  
अथस्स सब्बे संयोगा, अत्थं गच्छन्ति जानतो ॥२॥

जेतवन

( बहुत से भिक्षु )

यदा द्वयोर्धर्मयोः पारगो भवति ब्राह्मणः ।  
अथाऽस्य सर्वे संयोगा अस्तं गच्छन्ति जानतः ॥

सुखं वे क्खं कै महेसं पोरम ।  
मदं के प र्खं सोक्कं गुदं वा ।  
दे कसं पेसं ह्वक्कं र्दे यै कै ।  
गुक्कं सुक्कं प्रससं उदं कुवं वरं र्दगुदं ।

जब ब्राह्मण दो धर्मों ( =चित्त-संयम और भावना ) में पारंगत हो जाता है, तब उस जानकार के सभी संयोग ( =बन्धन ) अस्त हो जाते हैं ।

When a Brahman fully develops the two practices (samatha and vipassana, calming and insight, meditation ) then all the fetters of that knowing one fall away.



यस्स पारं अपारं वा, पारापारं न विज्जति ।  
वीतदरं विसंयुतं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥३॥

जैतवन

मार

यस्य पारं अपारं वा पारापारं न विद्यते ।  
वीतदरं विसंयुक्तं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

གང་ལ་ཕ་རོལ་ཚུ་རོལ་དམ།      ।  
ཕན་ཚུན་དག་ནི་མ་མཆིས་པ།      ।  
འཇིགས་པ་བྲལ་ཞིང་ཀུན་སྦྱོར་མེད།      ।  
དེ་ལ་བདག་ནི་བྲམ་ཟེར་བཟོད།      ।

जिसके पार (= आँख, कान, नाक, जीभ, काया, मन ), अपार (= रूप, शब्द, गन्ध, रस, स्पर्श, धर्म ) और पारपार (= मैं और मेरा ) नहीं हैं, ( जो ) निर्भय और अनासक्त हैं, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

For whom there exists neither this shore nor that shore, nor both this shore and that shore, and who is fearless and unfettered, I call that man a Brahman.

P 146 ( XXXII, 27 )

P 201 V 385

གང་ཞིག་ཕ་རོལ་ཚུ་རོལ་དང་།      ।  
ཕ་རོལ་ཚུ་རོལ་གཉིས་མེད་ཅིང་།      ।  
ཆོས་རྣམས་ཀུན་གྱི་མཐར་ཕྱིན་དེ།      ।  
བྲམ་ཟེ་ཡིན་པར་ངས་གསུངས་སོ།།

ज्ञायिं विराजमासीनं, कतकिच्चमनासवं ।  
उत्तमत्थमनुप्पत्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥४॥

जेतवन

( कोई ब्राह्मण )

ध्यायिनं विरजसमासीनं कृतकृत्यं अनास्रवम् ।  
उत्तमार्थमनुप्राप्तं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

वसन्तं गच्छन्तु मया यत्तु यत्तु यत्तु यत्तु ।  
गुणं गुणं यत्तु यत्तु यत्तु यत्तु ।  
सत्त्वं यत्तु यत्तु यत्तु यत्तु ।  
देव्यं यत्तु यत्तु यत्तु यत्तु ।

(जो) ध्यानी, निर्मल आसनबद्ध (=स्थिर), कृतकृत्य आस्रव (=चित्तमल)  
रहित है, जिसने उत्तम अर्थ (=सत्य) को पा लिया है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who is meditative, stainless, and settled, whose work  
is done and who is free from taints, he who has attained the  
highest goal ( Nirvana ), I call that man a Brahman.

दिवा तपति आदिच्चो, रत्तिमाभाति चन्दिमा ।

सन्नद्धो खत्तियो तपति, ज्ञायो तपति ब्राह्मणो ॥

अथ सव्वमहोरत्तिं, बृद्धोत्पत्ति तेजसा ॥५॥

श्रावस्ती ( पूर्वाराम )

## आनन्द ( थेर )

दिवा तपत्यादित्यो रात्रावाभाति चन्द्रमा ।

सन्नद्धः क्षत्रियस्तपति ध्यायी तपति ब्राह्मणः ।

अथ सर्वमहोरात्रं बुद्धस्तपति तेजसा ॥

ཀུན་དབང་པོ་ལ་གསུངས་པ།

ཉིན་མོ་ཉི་མ་གཟུང་ལྷན་ཞིང་།

མཆོག་མོ་ཡུལ་པ་འོད་ཟེར་འཕྲོ་།

ཀྱུ་རིགས་ཁབ་ཕྱོད་གཞི་ལྔ་ཏེ།

མཁའ་ཉི་ཤམ་ལ་གཤམ་པའི་པུ་མེ་དང་ལྷན།

འོན་ཀྱང་རྫོགས་པའི་སངས་སྐུ་ནི།

ཉིན་མཚན་གྲན་ཏུ་གཟི་བཞིན་འབར། །

दिन में सूर्य तपता है, रात को चन्द्रमा प्रकाशता है, कवचबद्ध (होने पर) क्षत्रिय तपता है, ध्यानी (होने पर) ब्राह्मण तपता है, और बुद्ध रात-दिन (अपने) तेज से (सब से अधिक तपता है)।

The sun is bright by day, the moon shines by night. Armoured shines the warrior, and while meditating the Brahman shines, but the Buddha shines in his glory all the day and night.

P 154 ( XXXII, 85 )

P 202 V 387

ཉིན་མོ་ཉི་མ་གསལ་བར་ཅུང་། །

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

ཀྱལ་རིགས་གོ་ཆས་ཆས་ལ་གསལ། །

ཡམ་ཟིང་ལྷན་དུས་ཀྱི་རྒྱ་གར།

ཉིན་མོ་ཉི་མ་གསལ་བར་བྱེད།

མཆན་པོ་ལྟ་བུར་བྱས་ཏེ།

ཏྲུག་རྩ་མཐུན་གྱིས་གཟི་བརྟེན་ཅན།

ཉིན་དང་མཚན་དུ་གསལ་བར་བྱེད། །

वाहितपापो ति ब्राह्मणो,  
 समचरिया समणो ति वुच्चति ।  
 पब्बाजयमत्तनो मलं,  
 तस्मा पब्बजितो ति वुच्चति ॥६॥

जेतवन

( कोई प्रब्रजित )

वाहितपाप इति ब्राह्मणः समचर्यः श्रमण इत्युच्यते ।  
 प्राब्रजयन्ताऽऽत्मनो मलं तस्मात् प्रब्रजित इत्युच्यते ॥

ཀྱུ་ཤེད་ཚལ་དུ་འོ།།

མྱེག་པ་སྤངས་པར་བྱས་ན་བྲམ་ཟེ་མྱེ། ।  
 ཡང་དག་སྟོན་པ་ལྷན་ན་དག་སྟོང་ཉིད། ।  
 རང་ཉིད་ཀྱི་ས་ནས་ལས་རབ་སྤང་བ། ।  
 དེས་ན་རབ་དུ་བྱུང་བ་ཞེས་བྱར་བཟློད། ।

जिसने पाप को ( धोकर ) बहा दिया, वह ब्राह्मण है; जो समता का आवरण करता है, वह श्रमण है, ( चूँकि ) उसने अपने ( चित्त ) मलों को हटा दिया, इसलिए वह प्रब्रजित कहा जाता है ।

Because he has discarded evil he is called a Brahman. Because his conduct is pure he is called a Samana because he has renounced his impurities he is called a renunciate.

न ब्राह्मणस्स पहरेय्य, नास्स मुञ्चेथ ब्राह्मणो ।  
धी ब्राह्मणस्स हन्तारं, ततो धी यस्स मुञ्चति ॥७॥

जेतवन

सारिपुत्त ( थेर )

न ब्राह्मणं प्रहरेत् नाऽस्मै मुञ्चेद् ब्राह्मणः ।  
धिग् ब्राह्मणस्य हन्तारं ततो धिग् यस्मै मुञ्चति ॥

पूरेरे सुवा गसुत्तवा

सुसुवे वा के वदेवा सी सु । ।

दे वा सुसुवे सुवे सी सु । ।

ग्रे स सुसुवे वदेवा व द्वा । ।

दे वा स दे वा सुवे व द्वा । ।

ब्राह्मण (= निष्पाप ) पर प्रहार नहीं करना चाहिए, और ब्राह्मण को भी उस ( प्रहारदाता ) पर ( कोप ) नहीं करना चाहिए; ब्राह्मण को जो मारता है, उसे धिक्कार है, और धिक्कार उसको भी है, जो ( उसके लिए ) क्रोध करता है ।

One should not strike a Brahman. Nor should a Brahman be angry with this attacker. Alas for evil one who strikes a Brahman, Yet even worse than he, is the Brahman who shows his anger.

P 153 ( XXXII, 74 )

P 203 V 389

वा द वेवा सुसुवे वदेवा व द्वा । ।

सुवे व द्वा सुवे व दे द्वा व द्वा । ।

सुसुवे सुसुवे वा वदेवा सी सु । ।

सुवे सुवे व द्वा सी सुवे । ।



यस्य कायेन वाचाय, मनसा नत्थि दुक्कटं ।  
संवृतं तीहि ठानेहि, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥६॥

जेतवन

महाप्रजापती गौतमी

यस्य कायेन वाचा मनसा नास्ति दुष्कृतम् ।  
संवृतं त्रिभिः स्थानैः तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

गो० ५० ५० ५० ५० ५०

गद० गी० सु० द० द० द० ५० ५० ५० ।  
५० ५० ५० ५० ५० ५० ५० ५० ५० ।  
गद० गी० सु० द० द० द० ५० ५० ५० ५० ५० ।  
५० ५० ५० ५० ५० ५० ५० ५० ५० ।

जिसके मन वचन काय से दुष्कृत (= पाप) नहीं होते, (जो इन) तीनों ही स्थानों से संवर (= संयम ) -युक्त है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who does no evil through body, speech or mind, who is restrained in these three respects, I call that man a Brahman.

P 155 ( XXXII, 19 )

P 204 V 391

गद० गी० सु० द० द० द० ५० ५० ५० ।  
५० ५० ५० ५० ५० ५० ५० ५० ५० ।  
गद० गी० सु० द० द० द० ५० ५० ५० ५० ५० ।  
५० ५० ५० ५० ५० ५० ५० ५० ५० ।

यम्हा धम्मं विजानेय्य, सम्मासम्बुद्धदेसितं ।  
सक्कच्चं तं नमस्सेय्य, अग्निहुत्तं व ब्राह्मणो ॥१०॥

जेतवन

सारिपुत्त ( थेर )

यस्माद् धर्मं विजानीयात् सम्यक्-संबुद्ध देशितम् ।  
सत्कृत्य तं नमस्येद् अग्निहोत्रमिव ब्राह्मणः ॥

मू. रेरे. सु. य. ग. सु. द. स. य।

ई. ग. स. य. रे. स. द. स. कृ. स. य. सु. द. य. यी॥

ऊ. स. रे. सु. य. स. ये. स. सु. द. य। ।

य. ग. द. य. सु. य. सु. द. य. सु. य। ।

सु. य. सु. य. ये. य. सु. य. ये. स. य. वे. य। ।

जिस ( उपदेशक ) से सम्यक्संबुद्ध (= बुद्ध ) द्वारा उपदिष्ट धर्म को जाने,  
उसे ( वैसे ही ) सत्कारपूर्वक नमस्कार करें, जैसे अग्निहोत्र को ब्राह्मण ।

If from some person one should understand the Doctrine preached by the Fully Enlightened One, then one should reverence him devoutly as a Brahman reveres the sacrificial fire.

P 153 ( XXXII, 77 )

P 204 V 392

य. द. वे. य. ई. ग. स. य. रे. स. द. स. कृ. स. य. सु. द. य। ।

य. सु. द. य. रे. ऊ. स. रे. सु. य. स. ये. स. सु. द. य। ।

रे. य. य. ग. द. य. सु. य. सु. द. य. सु. य। ।

सु. य. सु. य. ये. य. सु. य. ये. स. य. वे. य। ।



न जटाहि न गोत्तेन, न जच्चा होति ब्राह्मणो ।  
यम्हि सच्चं च धम्मो च, सो सुची सो च ब्राह्मणो ॥११॥

जैतवन

जटिल ब्राह्मण

न जटाभिर्न गोत्रैर्न जात्या भवति ब्राह्मणः ।  
यस्मिन् सत्यं च धर्मश्च स शुचिः स च ब्राह्मणः ॥

कुपुं सुदेकं सुदे । ।

सुदेकं सुदेकं सुदेकं सुदेकं सुदेकं । ।

सुदेकं सुदेकं सुदेकं सुदेकं सुदेकं । ।

सुदेकं सुदेकं सुदेकं सुदेकं सुदेकं । ।

सुदेकं सुदेकं सुदेकं सुदेकं सुदेकं । ।

न जटा से, न गोत्र से; न जन्म से ब्राह्मण होता है, जिसमें सत्य और धर्म हैं, वही शुचि (=पवित्र) है, और वही ब्राह्मण है ।

Not by matted hair, nor by family, nor by birth does one become a Brahman. It is that pure one who has both Truth and Dharma he is the Brahman.

किं ते जटाहि दुम्मेध, किं ते अजिनसाटिया ।  
अब्भन्तरं ते गहनं, बाहिरं परिमज्जसि ॥१२॥

वैशाली ( कूटागारशाला )

( पाखंडी ब्राह्मण )

किं ते जटाभिः दुर्मेध ! किं ते ऽजिनशाट्या ।  
आभ्यन्तरं ते गहनं बाहिः परिमार्जयसि ? ॥

ཡངས་བ་ཅན་དུའོ།།

སྒྲི་རྩ་རྩ་བ་སྒྲི་ལ་ཅི། ।

བགས་བའི་གཡང་གཞིས་ཁྱོད་ལ་ཅི། ।

ཁྱོད་ཀྱི་ནང་ནི་གཙོག་བས་གང་། ।

ཕྱི་རོལ་ཡོངས་སུ་བཀྲ་བར་བྱེད། ।

हे दुर्बुद्धि ! जटाओं से तेरा क्या ( बनेगा ), ( और ) मृगचर्म के पहिने से तेरा क्या ? भीतर ( दिल ) तो तेरा ( राग आदि मलों से ) परिपूर्ण है, बाहर क्या धोता है ?

What is the use of your matted hair, O witless man ! What is the use of your antelope garment ? You beautify the outside, while within you are full of filth.

P 140 ( XXXII, 8 )

P 205 V 394

སྒྲི་རྩ་ཁྱོད་ཀྱི་རྩ་བ་སྒྲི། ।

ཁྱོད་ཀྱི་གཡང་གཞི་ཁྱོད་ལ་ཅི། ।

ཁྱོད་ནང་གི་བས་པོར་འདུག་བཞིན་དུ། ।

ཕྱི་རོལ་ཡོངས་བར་བྱི་དོར་བྱེད། ।

पंसुकूलधरं जन्तुं, किसं धमनिसन्थतं ।  
एकं वनस्मिं ज्ञायन्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥१३॥

राजगृह ( गृध्रकूट )

किसा गोतमी

पांसुकूलधरं जन्तुं कृशं धमनिसन्ततम् ।  
एकं वने ध्यायन्तं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

‘सुक्लं सुदं धरे रे वरे ।

दुष्प्राणं वृक्षं वृक्षं वरे वरे वरे वरे ।

सुखं वै रे रे रे सुखं वरे वरे वरे वरे ।

वृक्षं वरे वरे वरे वरे वरे वरे वरे ।

रे वरे वरे वरे वरे वरे वरे वरे ।

जो प्राणी फटे चीथड़ों को धारण करता है, जो दुबला पतला और नसों से मढ़े शरीरवाला है, जो अकेला वन में ध्यानरत रहता है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

The person who wears dust-stained rags, who is emaciated, who is over-spread with veins, who meditates alone in the forest, I call that man a Brahman.

1 सुक्लं सुदं ( सुक्लं सुदं धरे रे ) वै सुक्लं वरे वरे वरे वरे वरे वरे वरे  
रे वरे वरे वरे वरे वरे वरे वरे वरे वरे वरे ।



सर्वसंयोजनं छेत्वा, यो वै न परितस्सति ।  
सङ्गातिगं विसंयुक्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥१५॥

राजगृह ( वेणुवन )

उग्नसेन ( श्रेष्ठीपुत्र )

सर्वसंयोजनं छित्त्वा यो वै न परितस्सति ।  
संगातिगं विसंयुक्तं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

गुणं दुःश्रुतं च गुणं च तदंशम् ।  
मादं त्रैलोक्यं सन्निभं त्रैलोक्यं च ।  
<sup>1</sup> त्रैलोक्यं च तदंशं त्रैलोक्यं च तदंशम् ।  
देव्यं च तदंशं त्रैलोक्यं च तदंशम् ।

जो सारे संयोजनों ( = बन्धनों ) को काटता है, जो कि भय नहीं खाता,  
जो संग और आसक्ति से विरत है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

Having cut off all fetters he is completely without fear, the  
one who has finished with sin and who is unfettered, I call that  
man a Brahman.

1 त्रैलोक्यं त्रैलोक्यं तदंशं त्रैलोक्यं च तदंशम् ।

छेत्वा नद्धिं वरत्तं च, सन्दानं सहनुक्कमं ।  
उत्तिखत्तपलिघं बुद्धं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥१६॥

जेतवन

दो ब्राह्मण

छित्त्वा नद्धिं वरत्तां च सन्दानं सहनुक्कमम् ।  
उत्तिखत्तपरिघं बुद्धं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

सिं'वदि'दु'व'स्ये'वदि'म'वेव । ।  
से'ळ'स'सु'म'के'द'सि'व'उ'स'व'उ'द । ।  
सु'व'वदि'म'म'स'व'स'स'स'स'स'स' । ।  
दे'स'व'द'म'के'स'स'स'स'स' । ।

नन्दी (=क्रोध), वरत्ता (=तृष्णा रूपी रस्सी), सन्दान (=६२ प्रकार के भतवाद रूपी पगहे), और हनुक्कम (=मुँह पर बाँधने के जाबे) को काट एवं परिध (=जूए) को फेंक जो बुद्ध (=ज्ञानी) हुआ, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who has cut the strap of hatred, the thong of craving and the manacles and chain of doubt, who has cleared away the hindrances of the obscurations ( of the emotions of wrong understanding ), and who is Enlightened ( Buddha ), I call that man a Brahman.

अक्रोशं बध्वन्धं च, अदुष्टो यो तितिक्षति ।  
खन्तीबलं बलानीकं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥१७॥

राजगृह ( वेणुवन )

( अक्रोश ) भारद्वाज

अक्रोशन् बध्व-बंधं च अदुष्टो यस्तितिक्षति ।  
क्षान्तिबलं बलानीकं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

<sup>1</sup> दग्धादग्धादेव लब्धं तद्विदुः । ।

<sup>2</sup> दग्धादेव तद्विदुः तद्विदुः । ।

तद्विदुः तद्विदुः तद्विदुः तद्विदुः । ।

तद्विदुः तद्विदुः तद्विदुः तद्विदुः । ।

जो बिना दूषित ( चित्त ) किए गाली, बध और बन्धन को सहन करता है, क्षमा बल ही जिसके बल (=सेना) का सेनापति है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

Abaondoning evil dispositions and being patient towards abuse, tying and binding, the one who has the strength of the army of patience, I call that man a Brahman.

P 146 ( XXXII, 21 )

P 208 V 399

दग्धादेव तद्विदुः तद्विदुः । ।

तद्विदुः तद्विदुः तद्विदुः । ।

तद्विदुः तद्विदुः तद्विदुः तद्विदुः । ।

तद्विदुः तद्विदुः तद्विदुः तद्विदुः । ।

1 दग्धादेव तद्विदुः तद्विदुः । ।

2 तद्विदुः तद्विदुः तद्विदुः तद्विदुः । ।

अक्रोधनं व्रतवन्तं, शीलवन्तं अनुस्सदं ।  
दन्तं अन्तिमसारीरं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥१८॥

राजगृह ( वेणुवन )

सारिपुत्त ( थेर )

अक्रोधनं व्रतवन्तं शीलवन्तं अनुश्रुतम् ।  
दान्तं अन्तिमशरीरं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

सैःस्रोःपः५८ः५५५ः७५५ः७५५ ।  
७५५ः७५५ः७५५ः७५५ः७५५ ।  
१५५ः७५५ः७५५ः७५५ः७५५ ।  
७५५ः७५५ः७५५ः७५५ः७५५ ।

जो अक्रोध, व्रती, शीलवान, बहुश्रुत, संयमी (=दान्त) और अन्तिम शरीर वाला है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who is not hateful, but is disciplined, moral, learned, gentle, and bearing his final body ( before Nirvana ), I call that man a Brahman.

P 146 ( XXXII, 23 )

P 208 V 400

७५५ः७५५ः७५५ः७५५ः७५५ ।  
७५५ः७५५ः७५५ः७५५ः७५५ ।  
७५५ः७५५ः७५५ः७५५ः७५५ ।  
७५५ः७५५ः७५५ः७५५ः७५५ ।

1 ७५५ः७५५ः७५५ः७५५ः७५५ ।



वारि पोक्खरपत्ते व, आरग्गेरिव सासपो ।  
यो न लिम्पति कामेसु, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥१६॥

राजगृह ( वेणुवन )

उप्पलवण्णा ( थेरी )

वारि पुक्करपत्र इव, आराग्र इव सर्षपः ।  
यो न लिप्यते कामेषु तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

अ० ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ।  
॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ।  
॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ।  
॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ।

कमल के पत्ते पर जल, और आरे के नोक पर सरसों, की भाँति जो  
भोगों में लिप्त नहीं होता, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

As with water on a lotus leaf, as with a mustard seed on  
the point of the needle, one whom desires cannot affect, I call  
that man a Brahman.

P 147 ( XXXII, 35 )

P 209 V 401

॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ।  
॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ।  
॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ।  
॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ५०० ॥ ।

यो दुःखस्स पजानाति, इधेव खयमत्तनो ।

पन्नभारं विसंयुत्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥२०॥

जेतवन

( कोई ब्राह्मणी )

यो दुःखस्य प्रजानाती हैव क्षयमात्मनः ।

पन्नभारं विसंयुक्तं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

सुखेण रणे कं वदन्ति नृणां ।

सुखं वदन्ति नृणां वदन्ति नृणां ।

सुखं वदन्ति नृणां वदन्ति नृणां ।

सुखं वदन्ति नृणां वदन्ति नृणां ।

जो यहीं (= इसी जन्म में ) अपने दुःखों के विनाश को जान लेता है, जिसने अपने बोझ को उतार फेंका, और जो आसक्तिरहित है उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who realises here in this world the destruction of sorrow, who has laid the burden aside and is fully emancipated, I call that man a Brahman.

गम्भीरपञ्चं मेधावि, मग्गामग्गस्स कोविदं ।  
उत्तमत्थमनुपत्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥२१॥

राजगृह ( गृध्रकूट )

खेमा ( भिक्षुणी )

गम्भीरप्रज्ञं मेधाविनं मार्गमार्गस्य कोविदम् ।  
उत्तमार्थमनुप्राप्तं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

समसं वच्चं वेदं वेदं वेदं ।  
असं ददं असं सन्निवत्तं वेदं ।  
असं वेदं वेदं वेदं वेदं वेदं ।  
वेदं वेदं वेदं वेदं वेदं वेदं ।

जो गम्भीर प्रज्ञावाला, मेधावी, मार्ग अमार्ग का ज्ञाता, उत्तम पदार्थ  
( = सत्य ) को पाये है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

The learned one of profound wisdom who knows the  
right and the wrong way, who has reached the highest goal, I  
call that man a Brahman.

P 149 ( XXXII, 44 )

P 210 V 403

वेदं वेदं वेदं वेदं वेदं वेदं ।  
असं ददं असं सन्निवत्तं वेदं ।  
असं वेदं वेदं वेदं वेदं वेदं वेदं ।  
वेदं वेदं वेदं वेदं वेदं वेदं ।

असंसद्वं गहद्वेहि, अनागारेहि चूमयं ।  
अनोकसारिमपिच्छं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥२२॥

## जेतवन

( पञ्चमारवासी ) तिस्स ( थेर )

असंसृष्टं गृहस्थैः अनागारैश्चोभाभ्याम् ।  
अनोकःसारिणं अल्पेच्छं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

ཁྱིམ་པ་དང་ནི་རབ་བྱུང་ལྟེ།  
 གཉིས་ཀ་ལ་ཡང་འདྲིས་མི་བྱེད།  
 རེས་མེད་རྒྱ་ཞིང་འདོད་པ་ཆུང་།  
 དེ་ལ་བདག་ནི་བྲམ་ཟེར་བརྟོད།

घर वाले (= गृहस्थ) और बेघरवाले दोनों ही में जो लिप्त नहीं होता, जो बिना ठिकाने के घूमता तथा बेचाह है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

He who is intimate with neither householders nor homeless ones, who wanders without a fixed abode, and who has few desires, I call that man a Brahman.

P 146 ( XXXII, 23 )

P 210 V 404

གང་ཞིག་རབ་ཏུ་བྱེད་པ་དང་།  
 དེ་ལྟར་གཏིགས་མི་འདྲེས་ཞིང་།  
 འདོད་ཆུང་བྱིས་ནས་མ་ཐུང་དེ།  
 རྒྱལ་ཐེ་ཡིན་པར་ངས་གསུངས་སོ།

निधाय दण्डं भूतेषु, तसेषु थावरेषु च ।

यो न हन्ति न घातेति, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥२३॥

जैतवन

( कोई मिश्र )

निधाय दण्डं भूतेषु तसेषु स्थावरेषु च ।

यो न हन्ति न घातयति तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

मरुमौषःसु नरैः सुपरी ।

मृगैः पक्षिण्यैः कृण्वन्त्येव ।

मर्त्यैः पशुभिः पुनः पश्यन्त्येव ।

देवैः पश्यन्त्येव ।

चर-अचर ( सभी ) प्राणियों में प्रहारविरत हो, जो न मारता है, न मारने की प्रेरणा करता है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who has laid aside the cudgel towards beings, whether moving or stationary, who neither kills nor beats others, I call that man a Brahman.

अविरुद्धं विरुद्धेषु, अत्तदण्डेषु निवृत्तं ।  
सादानेषु अनादानं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥२४॥

जेतवन

चार श्रामणेर

अविरुद्धं विरुद्धेषु, आत्तदण्डेषु निवृत्तम् ।  
सादानैष्वनादानं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

मामेवमिदं कसिं मामेवमिदं ।  
दुग्धमस्यमस्य कसिं वमिदं ।  
मिदं वमिदं कसिं मिदं वमिदं ।  
मिदं वमिदं कसिं वमिदं वमिदं ।

जो विरोधियों के बीच विरोध रहित रहता है; जो दण्डधारियों के बीच  
( दण्ड ) रहित है, संग्राहियों में जो संग्रहरहित है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who is friendly amongst the hostile, who is peaceful amongst those with upraised clubs, and who is unattached amongst the attached, I call that man a Brahman.

यस्स रागो च दोसो च, मानो मक्खो च पातितो ।  
सासपोरिव आरग्गा, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥२५॥

राजगृह ( वेणुवन )

महापण्थक ( धेर )

यस्य रागश्च द्वेषश्च मानो अक्षश्च पातितः ।  
सर्षपं दृष्ट्वाऽऽराग्रात् तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

ममं गुं छे वसं सुदसं गमं वल्लेका ।  
ममं गोदं दं कवसं वे सुदं दं ।  
दं कुमं सुमं दं सुदं सुदं व ।  
दे वं वदमं वे सुमं वेदं वदं ।

आरे के ऊपर सरसों की भाँति; जिसके ( चित्त से ) राग, द्वेष, मान, डाह  
फेंक दिये गये हैं, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

From whom desire, hatred, pride, jealousy are fallen off,  
like a mustard seed from the point of a needle, I call that man  
a Brahman.

P 149 ( XXXII, 49 )

P 212 V 407

सुदं गुदं छे वं सुदसं गमं वल्लेका ।  
ममं वेदं दं कवसं वे सुदं दं ।  
दं कुमं दं वदं वं वदं वदं वं ।  
सुमं वेदं वं वदं वदं वं वदं वं ।

अकक्कसं विज्जापनिं, गिरं सच्चमुदीरये ।  
याय नाभिसजे कच्चि, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥२६॥

राजगृह ( वेणुवन )

पिलिन्द वच्छ ( थेर )

अकर्कशां विज्ञापनीं गिरं सत्त्यां उदीरयेत् ।  
यथा नाऽभिषजेत् किञ्चित् तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

हुं व रेण सुयं वैरं अस्सं गणसं गी ।  
वदेत्तं वदिं गणसं वै गणं सुसं वस ।  
सुं अं अस्सं वै सिं गणं वदिं व ।  
दे अं वदिं वै सुसं वेरं वदिं ।

( जो इस प्रकार की ) अकर्कश, आदरयुक्त ( तथा ) सच्ची वाणी को  
बोले कि, जिससे कुछ भी पीड़ा न होवे, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

Whoever utters gentle, clearly spoken, true words and by  
this gives offence to none, I call that man a Brahman.



योध दीर्घं व रस्सं वा, अणु थूलं सुभासुभं ।  
लोकेऽदिन्नं नादियति, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥२७॥

जितवन

कोई स्थविर

य इह दीर्घं वा ह्रस्वं वाऽणुं स्थूलं शुभाऽशुभम् ।  
लोकेऽदत्तं नादत्ते तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

मदं मीसं रीदं पौष्टुदं हुं रसा । ।  
सुं श्लोमं मेमसं तेसं मदं पदं हुं । ।  
रुद्विमां रुद्विमां रुद्विमां रुद्विमां । ।  
देवं वदमां रुद्विमां रुद्विमां । ।

( चीज ) चाहे दीर्घ हो या लघु, छोटी हो या मोटी, शुभ हो या अशुभ,  
जो संसार में (किसी भी) बिना दी चीज को नहीं लेता, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who in this world takes nothing that is not given to  
him, be it long or short, small or great, good or bad, I call that  
man a Brahman.

P 147 ( XXXII, 29 )

P 213 V 409

मदं मीसं रीदं पौष्टुदं हुं रसा । ।  
सुं श्लोमं मेमसं तेसं मदं पदं हुं । ।  
रुद्विमां रुद्विमां रुद्विमां रुद्विमां । ।  
देवं वदमां रुद्विमां रुद्विमां । ।

आशा यस्स न विज्जन्ति, अस्मिं लोके परमिह च ।  
निरासासं विसंयुतं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥२८॥

जैतवन

सारिपुत्त ( थेर )

आशा यस्व न विद्यन्तेऽस्मिन् लोके परस्मिन् च ।  
निराशयं विसंयुक्तं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

२३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ।  
३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ।  
३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ।  
३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ।

इस लोक और परलोक के विषय में जिसकी आशायें (=चाह) नहीं रह गई हैं, जो आशारहित और आसक्तिरहित है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

He who has no basis for desires, whether in this world or in the next, who has no basis for desires and is free from all fetters, I call that man a Brahman.

P 150 ( XXXII )

P 213 V 410

३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ।  
३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ।  
३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ।  
३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ३१॥ ।



योध पुञ्जं च पापं च, उभो सङ्गमुपच्यगा ।

अशोकं विरजं शुद्धं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥३०॥

श्रावस्ती ( पूर्वाराम )

रेवत ( थेर )

य इह पुण्यं च पापं चोभयोः संगं उपात्यगात् ।

अशोकं विरजं शुद्धं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

ॲद्वै॰क॰वर्त्त॰क॰म॰स्त्री॰व॰प॰ ॥ १ ॥

प्र॰म॰व॰म॰स्त्री॰व॰म॰स्त्री॰व॰म॰स्त्री॰ ॥ १ ॥

सु॰द॰क॰मे॰र॰द्वै॰क॰मे॰र॰द्वै॰ ॥ १ ॥

दे॰व॰व॰म॰स्त्री॰व॰म॰स्त्री॰व॰म॰स्त्री॰ ॥ १ ॥

जिसने यहाँ पुण्य और पाप दोनों की आसक्ति को छोड़ दिया, जो शोकरहित, निर्मल ( और ) शुद्ध है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who here in this world has transcended attachment to both good and evil, who is sorrowless, stainless, and pure, I call that man a Brahman.

चन्दं व विमलं शुद्धं, विष्पसन्नमनाविलं ।

नन्दीभवपरिक्खीणं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥३१॥

जेतवन

चन्दाभ ( थेर )

चन्द्रमिव विमलं शुद्धं विप्रसन्नमताविलम ।

नन्दीभवपरिक्खीणं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

ह्रींमंमेदंयंक्लंयंमवैरं ।

दयंतेदंयुदसंयंरंरंमेदं ।

दयंरंयंरंश्रीदंयंयंरंयंश्रीदं ।

रंयंयंयंरंरंयंयंयंयंयं ।

जो चन्द्रमा की भाँति विमल, शुद्ध, स्वच्छ = अनाविल है, (तथा जिसकी) सभी जन्मों की तृष्णा नष्ट हो गई है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who is spotless as the moon, who is pure, clear and without fault, and who has destroyed desire for worldly joy, I call that man a Brahman.

P 148 ( XXXII, 39 )

P 215 V 413

क्लंयंयंरंरंरंरंरंरंरंरंरं ।

श्रीदंयंयंयंयंयंयंयंयंयं ।

श्रीदंयंयंयंयंयंयंयंयंयं ।

यंयंयंयंयंयंयंयंयंयं ।





योध तण्हं पहन्त्वान, अनागारो परिब्रजे ।  
तण्हाभवपरिक्खीणं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥३४॥

राजगृह ( वेणुवन )

जेटिल ( थेर )

य इह तृष्णां प्रहायाऽनागारः परिव्रजेत् ।  
तृष्णाभवपरिक्षीणं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

अद्वैतं गच्छन् विनाशं च कुरुष्व ।  
अद्वैतं कुरुष्व विनाशं च कुरुष्व ।  
अद्वैतं च विनाशं च कुरुष्व ।  
अद्वैतं च विनाशं च कुरुष्व ।

जो यहाँ तृष्णा को छोड़, बेघर बन प्रव्रजित है, जिसकी तृष्णा और  
( पुनर्जन्म ) नष्ट हो गये, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who in this world, giving up craving, renounces and becomes a homeless one and who has finished his tendency towards craving, I call that man a Brahman.



हित्वा मानुसकं योगं, दिव्यं योगं उपचचगा ।

सर्वयोगविसंयुक्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणम् ॥३५॥

राजगृह ( वेणुवन )

( मृतपूर्व नट भिक्षु )

हित्वा मानुषकं योगं दिव्यं योगं उपात्यगत् ।

सर्वयोगविसंयुक्तं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

सि० श्री० श्रु० व० श्रु० स० पु० श्री० । ।

श्रु० श्री० श्रु० व० स० व० स० श्रु० । ।

श्रु० व० गुरु० द० श्री० श्रु० व० । ।

सि० व० व० व० श्री० श्रु० व० श्रु० । ।

मनुष्य (= भोगों के ) लाभों को छोड़, दिव्य ( भोगों के ) लाभ को भी ( जिसने ) त्याग दिया, सारे ही लाभों में जो आसक्त नहीं है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who, discarding human bonds and throwing off attachment for existence as a God, completely free of all bonds, I call that man a Brahman.

P 150 ( XXXII, 54 )

P 217 V 417

सि० श्री० श्रु० व० श्रु० स० पु० श्री० । ।

श्रु० श्री० श्रु० व० स० व० स० श्रु० । ।

श्रु० व० गुरु० द० श्री० श्रु० व० । ।

सि० व० व० व० श्री० श्रु० व० श्रु० । ।

हित्वा रतिं च अरतिं च, सीतिभूतं निरुपधिं ।

सर्वलोकाभिभुं वीरं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥३६॥

हित्वा रतिं चाऽरतिं च शीतीभूतं निरुपधिम् ।

सर्वलोकाऽभिभुवं वीरं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

दण्ड-द-सै-दण्ड-वै-सु-दे । ।

वसै-व-स-सु-दे-दण्ड-व-सु-दे । ।

दण्ड-वै-दण्ड-दे-दण्ड-व-सु-दे । ।

दे-व-व-स-वै-सु-दे-व-सु-दे । ।

रति और अरति (=वृणा) को छोड़, जो शीतल-स्वभाव ( तथा )  
क्लेशरहित है, ( जो ऐसा ) सर्वलोकविजयी, वीर है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who has given up likes and dislikes, who is cooled and without attachment, the hero who has conquered the world, I call that man a Brahman.

च्युतिं यो वेदि सत्तानं, उपपत्तिं च सब्बसो ।  
असत्तं सुगतं बुद्धं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मण ॥३७॥

राजगृह ( वेणुवन )

बङ्गीस ( थेर )

च्युतिं यो वेद सत्त्वानां, उपपत्तिं च सर्वशः ।  
असक्तं सुगतं बुद्धं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

सुखसं उदग्गुक्कं सुखसं उदग्गुक्कं ।  
अकिं अस्सो वदन् सुखं वदन् ।  
उत्तमसं खेदं वदन् उत्तमसं खेदं वदन् ।  
देवसं वदन् देवसं वदन् वदन् ।

जो प्राणियों की च्युति (=मृत्यु) और उत्पत्ति को भली प्रकार जानता है, ( जो ) आशक्तिरहित सुगत (=सुन्दर) गति को प्राप्त और बुद्धि (=ज्ञानी) है उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who in every way knows the death and rebirth of beings, ( understands impermanence ), he who is detached, has gone to happiness and has wisdom, I call that man a Brahman.

P 151 ( XXXII, 59 )

P 218 V 419

अद्वैतसं उदग्गुक्कं अद्वैतसं उदग्गुक्कं ।  
सुखं वदन् सुखं वदन् सुखं वदन् ।  
उत्तमसं खेदं वदन् उत्तमसं खेदं वदन् ।  
देवसं वदन् देवसं वदन् वदन् ।

यस्स गतिं न जानन्ति, देवा गन्धर्वमानुसा ।

स्त्रीणास्रवं अरहन्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥३८॥

यस्य गतिं न जानन्ति देव-गन्धर्व मानुषाः ।

स्त्रीणास्रवं अरहन्तं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

གང་གི་འགྲོ་བ་སྤྲོ་མས་དང་། །

དྲི་ཟ་མི་ཡིས་མི་ཤེས་པར། །

ཟག་པ་ཟད་ཅིང་དགྲ་བཅོས་པ། །

དེ་ལ་བདག་ནི་བྲམ་ཟེང་བཟོད། །

जिसकी गति (=पहुँच) को देवता, गन्धर्व और मनुष्य नहीं जानते, जो स्त्रीणास्रव (=रागादिरहित) और अहंत्व है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He whose path neither the gods, nor spirits, nor men know, who has destroyed all taints and is an Arahāt, I call that man a Brahman.

P 150 (XXXII, 55)

P 218 V 420

གང་ཞིག་སྤྲོ་དང་དྲི་ཟ་དང་། །

མི་ཡི་འགྲོ་བ་མི་ཤེས་ཤིང་། །

ཞི་བའི་འགྲོ་བ་མི་ཤེས་དེ། །

བྲམ་ཟེ་ཡིན་པར་ངས་གསུངས་སོ། །

यस्स पुरे च पच्छा च, मज्जे च तत्थि किञ्चन ।  
अकिञ्चनं अनादानं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥३६॥

राजगृह ( वेणुवन )

धम्मदिग्ग ( थेरि )

यस्य पुरश्च पश्चाच्च मध्ये च नास्ति किञ्चन ।  
अकिञ्चनं अनादानं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

एतन्नास्ति भवो भूतं भविष्यं ।

एतन्नास्ति भवो भूतं भविष्यं ।

एतन्नास्ति भवो भूतं भविष्यं ।

एतन्नास्ति भवो भूतं भविष्यं ।

जिसके पूर्व, पश्चात् और मध्य में कुछ नहीं है, जो परिग्रहरहित =  
अदानरहित है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who holds on to nothing whether past, future, or  
present, who has nothing and is free of grasping, I call that man  
a Brahman.

उसभं पवरं वीरं, महेसिं विजिताविनं ।  
अनेजं न्हातकं बद्धं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥४०॥

क्षेत्रवत्

अङ्गलिमाल ( थेर )

ऋषभं प्रवरं वीरं महर्षि विजितवन्ततम् ।  
अनेजं स्नातकं बुद्धं तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

སྟོན་ཐྱིང་ཅན་ལ་གསུངས་པ།

ཁྱེ་མཆོག་གཙོ་བོ་དཔའ་བོ་ཏེ།

ཀློག་པའི་ཆེན་པོ་རྣམས་པར་བྱེད།

<sup>1</sup>གཡོ་མེད་ཐུས་མཆོད་སངས་ལུས་པ། །

རེ་ལ་བརྟག་ཏེ་ཡུལ་མེས་པུ་རྒྱ།

( जो ) कृष्ण ( = श्रेष्ठ ), प्रवर, वीर, महर्षि, विजेता, अकम्प्य, स्नातक और बृद्ध है उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

The supreme one, the leader, the hero, the great sage, the conqueror, the unwavering, purified one possessed of wisdom, I call that man a Brahman.

P 151 ( XXXII, 61 )

P 219 V 422

१७०२५३४५६७८९

ཁྲ་མཆོག་དབ་མཆོག་ལྟར་ཆེན་མཆོག་།

བཀྲར་མེད་བྱས་བྱས་སངས་བྱས་དེ། ༥

ཐུག་ཟེ་ཡིན་པར་ངས་གསུངས་པོ།

1 གཡོ་མེད་དག་པ་གྲུས་རབ་ཅན།

पुब्बेनिवासं यो वेदि, सग्गापायं च पस्सति,  
अथो जातिक्खयं पत्तो, अभिञ्जावोसितो मुनि ।

सब्बवोसितवोसानं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥४१॥

जेतवन

देवहित ( ब्राह्मण )

पूर्वनिवासं यो वेद स्वर्गापायं च पश्यति ।

अथ जातिक्षणयं प्राप्तोऽभिज्ञा व्यवसितो मुनिः ।

सर्वव्यवसितव्यवसान तमहं ब्रवीमि ब्राह्मणम् ॥

एदं एवमेव सुखं सुखं एवमेव सुखं सुखं ।

अथो एवमेव सुखं सुखं एवमेव सुखं सुखं ।

सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं ।

अथो एवमेव सुखं सुखं एवमेव सुखं सुखं ।

अथो एवमेव सुखं सुखं एवमेव सुखं सुखं ।

अथो एवमेव सुखं सुखं एवमेव सुखं सुखं ।

अथो एवमेव सुखं सुखं

अथो एवमेव सुखं सुखं ।

जो पूर्व जन्म को जानता है, स्वर्ग और अगति को जो देखता है; और जिसका ( पुनः ) जन्म क्षीण हो गया ( जो ) अभिज्ञा (= दिव्य ज्ञान ) परायण है उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ ।

He who knows his former abodes ( previous lives ) who sees heaven and hell, who has reached the end of births, who is the sage with perfected superior knowledge, and who has done all that had to be done, I call that man a Brahman.

P 150 ( XXXII, 57 )

P 220 V 423

एदं एवमेव सुखं सुखं एवमेव सुखं सुखं ।

अथो एवमेव सुखं सुखं एवमेव सुखं सुखं ।

सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं सुखं ।

अथो एवमेव सुखं सुखं एवमेव सुखं सुखं ।

अथो एवमेव सुखं सुखं एवमेव सुखं सुखं ।

अथो एवमेव सुखं सुखं एवमेव सुखं सुखं ।

# शुद्धि-पत्र

| पृ० सं० | भाषा | अशुद्ध              | शुद्ध                          |
|---------|------|---------------------|--------------------------------|
| 7       | अ०   | P 10                | P 106                          |
| "       | "    |                     | V 7                            |
| 8       | पा०  | असुभानुपस्सि        | असुभानुपस्सि                   |
| 14      | "    | ( XXXI )            | ( XXXI, 13 )                   |
| 18      |      |                     | श्रावस्ती ( जेतवन ) सुमना देवी |
| 24      | पा०  | सतीमती              | सतीमतो                         |
| 26      |      |                     | जेतवन                          |
| 29      |      |                     | जेतवन                          |
| 31      | "    | उह                  | डहं                            |
| "       | सं०  | भिक्षः              | भिक्षुः                        |
| 32      | सं०  | तिल्स               | तिस्स                          |
| 36      | "    | सुदुर्शंशं          | सुदुर्दंशं                     |
| 37      | "    | दूरगमं              | दूरगमं                         |
| 42      | "    | द्विषं              | द्विषंयत्                      |
| 46      | अ०   | 1                   | 17                             |
| 57      | सं०  | विदन्ति             | विन्दन्ति                      |
| 58      | "    | उज्जिते             | उज्जिते                        |
| 59      | सं०  | सम्यक्              | सम्यक्                         |
| 63      | अ०   | ( XXX 22 )          | ( XXV, 22 )                    |
| 64      | "    | ( XXX, 13 )         | ( XXV, 13 )                    |
| 68      | हि०  | अनुपात              | अनुताप                         |
| 73      | सं०  | आवासेसु             | आवासेषु                        |
| 76      | सं०  | प्रवत्तारं          | प्रवत्तारं                     |
| 83      | "    | नोच्चावयं           | नोच्चावचं                      |
| 84      | पा०  | न सीलवा             | स सीलवा                        |
| 86      | अ०   | ( XYIX 38 )         | ( XXIX 38 )                    |
| 92      | सं०  | शकुन्तानं           | शकुन्तानां                     |
| 95      | "    | इन्द्रकीलोपमस्ताहक् | इन्द्रकीलोपमस्ताह्क्           |
| "       | "    | हद                  | हृद                            |
| 98      | "    | यत्थारहन्तो         | यत्थारहन्तो                    |
| 109     | पा०  | अभिवादनसीलिस्स      | अभिवादनसीलिस्स                 |
| 113     | सं०  | जीवे अपस्सं         | जीवेद् अपश्यन्                 |
| "       | "    | सेय्यो पस्सतो       | श्रेयः पश्यत्                  |
| 130     | "    | सर्वं               | सर्वं                          |
| 132     | अ०   | ow                  | on                             |



| पृ० सं० | भाषा | अशुद्ध                        | शुद्ध                 |
|---------|------|-------------------------------|-----------------------|
| 133     | सं०  | स्पृथेयुस्त्वाम्              | स्पृथेयुस्त्वाम्      |
| 139     | सं०  | परिज्ञयं                      | परिक्षयं              |
| 143     | पा०  | लोकेस्मि                      | लोकस्मि               |
| 148     | सं०  | रोगनीपभङ्गुरम्                | रोगनीडप्रभङ्गुरम्     |
| 149     | ,,   | कपोतकान्यस्थीति               | कपोतकान्यस्थीनि       |
| 169     | ,,   | परम                           | वरत्र                 |
| 170     | ,,   | ,,                            | ,,                    |
| 176     | हि०  | ले जाते हैं                   | ले जाये जाते हैं ।    |
| 188     | ,,   | सम्मासम्बुद्धसावको            | सम्यक्सम्बुद्धश्रावकः |
| 200     | पा०  | मनुस्सेसु                     | मनुस्सेसु             |
| 209     | ,,   | चान्दिमा                      | चन्दिमा               |
| 228     | ,,   | तूष्णीमासीत्                  | तूष्णीमासीत्          |
| ,,      | ,,   | बहुभाणिनाम्                   | बहुभाणिनाम्           |
| 229     | ,,   | व चैतहि                       | न चैतहि               |
| 243     | ,,   | परम                           | परत्र                 |
| 244     | पा०  | मिक्खवा                       | भिक्खवा               |
| 247     | हि०  | पाँच उपासक                    | पाँच सौ उपासक         |
| 250     | सं०  | रत्ति                         | रात्रौ                |
| 263     | ,,   | भ को                          | भवति ईर्षुको          |
| 275     | ,,   | दर्शनस्थ                      | दर्शनस्य              |
| 277     | ,,   | युष्माभिः                     | युष्माभिः             |
| 279     | अं०  | P 9                           | P 6                   |
| 295     | ,,   | P 152 (XXXII, 72) P 155 V 294 |                       |
| 307     | हि०  | सुन्दरी                       | सुन्दरी               |
| 321     | पा०  | नागवर्ग                       | नागवग्गो              |
| 328     | हि०  | मनही                          | मन की                 |
| ,,      | सं०  | मातंगोऽरण्य                   | मातंगोऽरण्य           |
| 335     | ,,   | मनुजस्स                       | मनुजस्य               |
| ,,      | ,,   | वद्धते                        | वर्द्धते              |
| 354     | ,,   | साय                           | स्वयम्                |
| 368     | पा०  | से वे                         | स वे                  |
| 370     | अं०  | P 97                          | P 87                  |
| 374     | सं०  | विश्यतः                       | विपश्यतः              |
| 387     | पा०  | विराजमासीत्                   | विरजमासीत्            |

## गाथा-सूची

|                     |           |                     |          |
|---------------------|-----------|---------------------|----------|
| अकककसं              | २६।२६     | अपुञ्जलाभो च        | २२।४     |
| अकतं दुककतं         | २२।६      | अपका ते             | ६।१०     |
| अककोच्छि मं         | १।४,३     | अपमत्तो अयं         | ४।१३     |
| अककोधतं वतवन्तं     | २६।१८     | अपमत्तो पमत्तेषु    | २।६      |
| अककोधेन जिने        | १७।३      | अपमादरता होथ        | २३।८     |
| अचरित्वा ब्रह्म-    | ११।१०, ११ | अपमादरतो भिक्खु     | २।११, १२ |
| अककोसं बध्वन्धं     | २६।१७     | अपमादेन मघवा        | २।१०     |
| अचिरं वत'श्चं       | ३।६       | अपमादो मतं          | २।१      |
| अञ्जा हि लाभु       | ५।१६      | अपमपि चै सहितं      | १।२०     |
| अट्ठीनं नगरं        | ११।५      | अपलाभोपि चे         | २५।७     |
| अत्तदत्थं           | १२।१०     | अपमसुता             | ११।७     |
| अत्तना चोद          | २५।२०     | अभये च भय-          | २२।१२    |
| अत्तना' व कतं       | १२।५      | अभित्यरेथ           | ६।१      |
| अत्तना' व कतं पापं  | १२।६      | अभिवादनमीलस्स       | ८।१०     |
| अत्तानञ्चे तथा      | १२।३      | अभूतवादी निरयं      | २२।१     |
| अत्तानञ्चे पिथ      | १२।१      | अयसा' व मलं         | १८।६     |
| अत्तानमेव पठमं      | १२।२      | अयोगे युञ्ज         | १६।१     |
| अत्ता ह वे जितं     | ८।५       | अलङ्कृतो चेपि       | १०।१४    |
| अत्ता हि अत्तनो     | २५।२१     | अलज्जिता ये         | २२।११    |
| अत्ता हि अत्तनो     | १२।४      | अवज्जे वज्ज-        | २२।१३    |
| अत्थमिह जातमिह      | २३।१२     | अविरुद्ध विरुद्धेसु | २६।२४    |
| अथ पापानि           | १०।८      | असज्जायमला          | १२।७     |
| अथवस्स अगारानि      | १०।१२     | असत् भावन-          | ५।१४     |
| अनवट्ठितचित्तस्स    | ३।६       | असंसट्ठं            | २६।२२    |
| अनवस्सुन वित्तस्स   | ३।७       | असारे सारमतिनो      | १।११     |
| अतिक्कसावो कासाव    | १।६       | असाहसेन धम्मेन      | १६।२     |
| अनुपुञ्जेन मेघावी   | १८।५      | अमुभानुपस्सिं       | १।८      |
| अनुपञ्चादो अनुपघातो | १४।७      | अस्सद्धो अकतञ्जू    | ७।८      |
| अनेकजातिसंसा        | ११।८      | अस्सो यथा भद्रो     | १०।१६    |
| अन्धभूतो अयं        | १३।८      | अहं नागो' व         | २३।१     |
| अपि दिब्बे          | १४।६      | अहिस्सका ये         | १७।५     |

|                  |         |                |       |
|------------------|---------|----------------|-------|
| आकासे च पदं      | १८।२०२१ | कायेन संवरो    | २५।२  |
| आरोग्यपरमा       | १५।८    | कायेन सवुता    | १७।१४ |
| एवं संकारभूते-   | ४।१६    | कासावकण्ठा     | २२।२  |
| आसा यस्स         | २६।२८   | किच्छो मनुस्स- | १४।४  |
| इदं पुरे         | २३।७    | कि ते जटाहि    | २६।१२ |
| इध तप्पति        | १।१७    | कुम्भूपमं      | ३।८   |
| इध नन्दति        | १।१८    | कुसो यथा       | २२।६  |
| इध मोदति         | १।१६    | को इमं पठविं   | ४।१   |
| इध वस्सं         | २०।१४   | कोधं जहे       | १७।१  |
| इध सोचति         | १।१५    | खन्ती परमं तपो | १४।६  |
| उच्छिन्द सिनेह   | २०।१३   | गतद्धिनो       | ७।१   |
| उट्ठकालम्हि      | २०।८    | गम्भमेके       | ६।११  |
| उट्ठानवतो सतिमतो | २।४     | गम्भीरपञ्च-    | २६।२१ |
| उट्ठानेन         | २।५     | गहकारक         | ११।६  |
| उतिट्ठे          | १३।२    | गामे वा यदि    | ७।६   |
| उदकं हि          | ६।५, १० | चक्खुना        | २५।१  |
| उपनोतवयो         | १८।३    | चत्तारि ठानानि | २२।४  |
| उय्युञ्जन्ति     | ७।२     | चन्दनं तगरं    | ४।१२  |
| उसभं पवरं        | २६।४०   | चन्दं' व विमल- | २६।३१ |
| एकं अम्मं        | १३।१०   | ते तादिसे      | १४।१८ |
| एकस्स चरितं      | २३।११   | ते सत्पन्न-    | ४।१४  |
| एकासनं एकसेय्यं  | २१।१६   | चरन्ति बाला    | ५।७   |
| एतं खो सरणं      | १४।१४   | विरप्पवासिं    | १६।११ |
| एतं दब्धं        | २४।१३   | चुतिं यो वेदि  | २६।३७ |
| एतमत्यवसं        | २०।१७   | छन्दजातो       | १६।१० |
| एतं विसेसतो      | २।२     | छिन्द सोतं     | २६।१  |
| एतं हि तुम्हे    | २०।३    | छेत्वा नन्दिं  | २६।१६ |
| एथ पस्सथिमं      | १३।५    | जयं वेरं पसवति | १५।५  |
| एवम्भो पुरिम     | १८।१४   | जिघच्छापारमा   | १५।७  |
| चरञ्चेनाधि       | ५।२     | जीरन्ति वे राज | ११।६  |
| एसो' व मग्गो     | २०।२    | झाय भिक्खू     | २५।१२ |
| ओवदेय            | ६।२     | झायिं विरज     | २६।४  |
| कण्हं धम्मं      | ६।१२    | तञ्च कम्मं     | ५।६   |
| कयिरञ्चे         | २२।८    | तण्हाय जायते   | १६।८  |
| कामतो जायते      | १६।७    | ततो मला        | १८।६  |
| कायप्पकोपं       | १७।११   | तत्राभिरति     | ६।१३  |

|                 |                   |                  |       |
|-----------------|-------------------|------------------|-------|
| तत्रायमादि      | २५।१६             | निधाय दण्डं      | २६।२३ |
| तथैव कत-        | १६।१२             | निधीनं' व        | ६।१   |
| तंपुत्त-पसु     | २०।१५             | नेक्खं           | १७।१० |
| तं वो वदामि     | २४।४              | न तेन अरियो      | १६।१५ |
| तसिनाय पुरक्खता | २४।१०, ६          | न तेन थेरो       | १६।५  |
| तस्मा पिणं      | १६।३              | न तेन पण्डितो    | १६।३  |
| तस्मा हि धीरं   | १५।१२             | न तेन भिक्खू     | १६।११ |
| तिणदोसानि       | २४।२३, २४, २५, २६ | न तेन होति       | १६।१  |
| तुम्हेहि किच्चं | २०।४              | नत्थि ज्ञानं     | २५।१३ |
| ते ज्ञायितो     | २।३               | नत्थि राग        | १५।६  |
| न तं माता       | ३।११              | नत्थि राग        | १८।१७ |
| न तावता धम्म    | १६।४              | न नग्ग           | १०।१३ |
| ददन्ति वे       | १८।१५             | न परेसं          | ४।७   |
| तन्तं नयन्ति    | २३।२              | न पुण्णगन्धो     | ४।११  |
| दिवा तपति       | २६।५              | न ब्राह्मणस्स    | २६।७  |
| दिसो दिसं       | ३।१०              | न ब्राह्मणस्से   | २६।८  |
| दीघा जागरतो     | ५।१               | न भजे            | ६।३   |
| दुक्खं          | १४।१३             | न मुण्डकेन       | १६।६  |
| दुन्निग्गहस्स   | ३।३               | न मोनेन          | १६।१३ |
| दुप्पब्बज्जं    | २१।१३             | न वाक्करण        | १६।७  |
| दुल्लभो         | १४।१५             | न वे कदरिया      | १३।११ |
| दूरंगमं         | ३।५               | न सन्ति पुत्ता   | २०।१६ |
| दूरे सन्तो      | २१।१५             | न सीलब्बत        | १६।१६ |
| धनपालको         | २३।५              | न हि एतेहि       | २३।४  |
| धम्मं चरे       | १३।३              | न हि पापं        | ५।१२  |
| धम्मपीतो        | ६।४               | न हि वेरेन       | १।५   |
| धम्मारामो       | २५।५              | निट्ठ गतो        | २४।१८ |
| न अत्तहेतू      | ६।६               | पयतो जायते       | १६।४  |
| न अन्तलिक्खे    | ६।१२, १३          | पुञ्जञ्चे पुरिसो | १।३   |
| न कहाण          | १४।८              | पुत्तामं' त्थि   | ५।३   |
| नगरं यथा        | २२।१०             | नेतं खो सरणं     | १४।११ |
| न चाहं          | २६।१४             | नेव देवो         | ८।६   |
| न चाहू          | १७।८              | नो च लभेथ        | २३।१० |
| न जटाहि         | २६।११             | पञ्च छिन्दे      | २३।११ |
| न तं कम्मं      | ५।८               | पटिसन्थार        | २५।१७ |
| न तं दळ्हं      | २४।१२             | पठवीसमो          | ७।६   |

|                   |       |                   |        |
|-------------------|-------|-------------------|--------|
| पण्डुपलामो        | १८।१  | मातरं पितरं       | २१।५,६ |
| पथव्या एकरज्जेन   | १३।१२ | मा पमाद-          | २।७    |
| पमादमनु           | २।६   | मा पियेहि         | १६।२   |
| पमादपण्णमादेन     | २।८   | मा' वमञ्जेय पाप-  | ६।६    |
| परदुक्खुपदानेन    | २१।२  | मा' वमञ्जेथ       | ६।७    |
| परवज्जानुपस्सि    | १८।१६ | मा बोच फरुसं      | १०।५   |
| परिजिण्णमिदं      | ११।३  | यस्स कायेन        | २६।६   |
| परे च न           | १।६   | यस्स गति          | २६।३८  |
| पविवेकरसं         | १५।६  | यस्स चेतं समु-    | १८।६   |
| पंसुकूलधरं        | २६।१० | यस्स चेतं समु-    | १८।१६  |
| पस्स चित्तकृतं    | ११।२  | मुहुत्तमपि        | ५।६    |
| पाणिमिह चे        | ६।६   | मेत्ताविहारी      | २५।६   |
| पापञ्चे पूरिमो    | ६।२   | य अच्चन्त         | १२।६   |
| पावानि परि-       | १६।१४ | यं एसा सहति       | २४।२   |
| पापो' पि पस्सति   | ६।४   | यं किञ्चि यिट्ठं  | ८।६    |
| पामोज्ज वद        | २५।२२ | यं किञ्चि सि      | २२।७   |
| मासे-मासे कुप     | ५।११  | यञ्चे विञ्जू      | १७।६   |
| मासे मासे सहस्सेन | ८।७   | यतो यतो सम्म      | २५।१५  |
| मिद्धो यदा        | २३।६  | यथागारं दुच्छन्नं | १।१३   |
| मुञ्च पूरे        | २४।१५ | यथागारं सुच्छन्नं | १।१४   |
| पुब्बेनिवासं      | २६।४१ | यथा दण्डेन        | १०।७   |
| पूजारहे           | १४।१७ | यथापि पुण्फ       | ८।१०   |
| पेमतो जायते       | १६।५  | यथापि भमरो        | ४।६    |
| पोराणमेतं         | १७।६  | यथापि मूले        | २४।५   |
| फन्दनं चण्णलं     | ३।१   | यथापि रहदो        | ६।७    |
| फुसामि नेक्खम्म   | १६।१७ | यथापि रुचिरं      | ४।८,६  |
| फेनुपमं           | ४।३   | यथा बुब्बूलकं     | १३।४   |
| भद्रो 'पि         | ६।५   | यथा सङ्कार        | ४।१५   |
| मग्गानट्ठंगिको    | २०।१  | यदा द्वयेषु       | २६।२   |
| मत्तामुखपरिच्चागा | २१।१  | यम्हा धम्मं       | २६।१०  |
| मधू' व मञ्जती     | ५।१०  | यं हि किच्चं      | २१।३   |
| मनुजस्स पमत्त     | २४।१  | यमिह सच्चं च      | १६।६   |
| मनोपपकोपं         | १७।१३ | योगा वे जायती     | २०।१०  |
| मनो पुब्बंगमा     | १।१,२ | यो च गाथा         | ८।३    |
| समेव कत           | ५।१५  | यो च पुब्बे       | १३।६   |
| मलित्थिया         | १८।८  | यो च बुद्धञ्च     | १४।१२  |

|                 |       |                   |        |
|-----------------|-------|-------------------|--------|
| यो च वन्तकसाव   | १११०  | यो' ध पुञ्ज       | २६१३०  |
| यस्स छित्तिसती  | २४१६  | यो' ध पुञ्ज       | १६११२  |
| यस्स जालिनी     | १४१२  | यो तिब्बानथो      | २४१११  |
| यस्स जितं       | १४११  | यो पाणमत्तिपातेति | १८११२  |
| यस्स पापं       | १३१७  | यो बालो           | ५१६    |
| यस्स पारं अपारं | २६१३  | यो मुख            | २५१४   |
| यस्स पुरे च     | २६१३६ | यो वे उप्पत्ति    | १७१२   |
| यस्स रागो च     | २६१२५ | यो सहस्स          | ८१४    |
| यस्सालया न      | २६१२६ | यो सासनं          | १२१८   |
| यस्सासवा        | ७१४   | यो ह वे दहरो      | २५१२३  |
| यस्सिन्द्रियाणि | ७१५   | रतिया जायते       | १६१६   |
| यानि' मानि      | १११४  | रमणीयानि अरञ्जानि | ७११०   |
| याव जीवम्पि     | ५१५   | राजतो वा          | १०१११  |
| यावदेव अन्तथाय  | ५११३  | सब्बसंयोजन        | २६११५  |
| यावं हि वनथो    | २०११२ | सब्बसो नाम-       | २५१८   |
| ये च रवो        | ६१११  | सब्बाभिभू         | २४१२०  |
| ये ज्ञानपसुता   | १४१३  | सब्बे तसन्ति      | १०११,२ |
| ये रागरत्ता     | २४११४ | सब्बे धम्मा       | २०१७   |
| येसं च सुसमा-   | २११४  | सब्बे सङ्खारा अ-  | २०१५   |
| येसं सन्निचयो   | ७१३   | बहुम्पि चे        | १११६   |
| येसं सम्बोधि    | ६११४  | बहु वे सरणं       | १४११०  |
| यो अप्पदुट्ठस्स | ६११०  | वावा नुरक्खी      | २०१६   |
| यो इमं पलियथं   | १६१३२ | वाणिजो' व         | ६१८    |
| वची पकोपं       | १७११२ | वारिजो' व         | ३१२    |
| वज्जञ्च वज्जतो  | २२११४ | वालसंगतचारी       | १५१११  |
| वन छिन्दथ       | २०१२१ | वाहितपापो         | २६१६   |
| वरं अस्सतरा     | २३१३  | वितक्कपमथितस्स    | २४११६  |
| वस्सिका विव     | २५११८ | वितक्कूपसमे च     | २४११७  |
| यो च वस्ससतं    | ८१८   | विततण्हो अनादानो  | २४११६  |
| यो च समेति      | १६११० | वेदनं फलसं        | १०११०  |
| यो चेत्तं सहनी  | २४१३  | स चे नेरेसि       | १०१६   |
| यो दण्डेन       | १०१६  | स के लभेथ         | २६१६   |
| यो दुक्खस्स     | २६१२० | सच्चं भणे         | १७१४   |
| यो' ध कामे      | २६१३३ | सदा जागरमानानं    | १७१६   |
| यो' ध तण्हं     | २६१३४ | सद्धो सीलेन       | २१११४  |
| यो' ध दीघं      | २६१२७ | सन्तकायो          | २५११६  |

|                   |         |                 |        |
|-------------------|---------|-----------------|--------|
| सन्तं तस्स        | ७।७     | सुकरानि         | १२।७   |
| सब्बत्थ वे        | ६।८     | सुखकामानि       | १०।३,४ |
| सब्बदानं          | २४।२१   | सुखं याव        | २३।१४  |
| सब्बपापस्स        | १४।५    | सुखा मत्तेय्यता | २३।१३  |
| सुखो बुद्धानं     | १४।१६   | सुभानु पस्सि    | १।७    |
| सुजीवं            | १८।१०   | सुरामेरयपानं    | १८।१३  |
| सुञ्जागारं        | २५।१४   | सुसुखं वत       | १५।१-४ |
| सुदस्सं वज्ज      | १८।१८   | सेखो पठविं      | ४।२    |
| सुदुद्दसं         | ३।४     | सेय्यो अयो-     | २२।३   |
| सुप्पबुद्धं       | २१।७-१२ | सेलो यथा        | ६।६    |
| सब्बे सुङ्खारा दु | २०।६    | सौ करोहि        | १८।२,४ |
| सरितानि           | २४।८    | हत्थसञ्जतो      | २५।३   |
| लाभं              | २५।६    | हनन्ति भोगा     | २४।२२  |
| मवन्ति सब्ब       | २४।७    | हंसा' दिच्च-    | १३।६   |
| सहस्सम्पि चे गाथा | ८।२     | हित्वा मानुसकं  | २६।३५  |
| सहस्सम्पि चे वाचा | ८।१     | हित्वा रतिं     | २६।३६  |
| साधु दस्सन-       | १५।१०   | हिरीनिसेधो      | १०।१५  |
| सारञ्च            | १।१२    | हिरीमता च       | १८।११  |
| सिञ्च भिक्खू      | २५।१०   | हीनं धम्मं      | १३।१   |
| सीलदस्सन-         | १६।६    |                 |        |





